मा-अभिनय





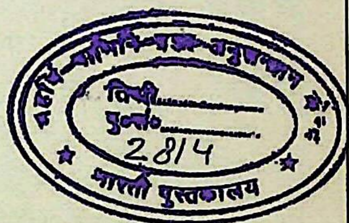
महामहोपाध्याय पण्डितराज डा० श्री गोपाल शास्त्री 'दर्शनकेशरी'



स्वबोध आश्रम
आनन्दपुरी (नन्दगंज)
गाधिपुरी (गाजीपुर)
उ० प्र०

गोमहिमा-अभिनय





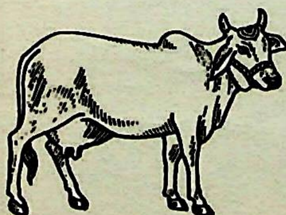
लेखक

महामहोपाध्याय पण्डित राज डा० श्री गोपाल शास्त्री 'दर्शन केशरी'

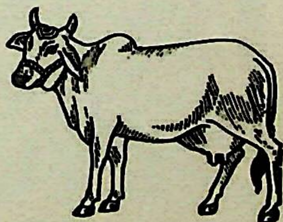


संपादन

पण्डित श्री बन्दी कृष्ण त्रिपाठी
(अधिवक्ता)
बी० कॉम०, एम० ए०, एल० एल० बी०, साहित्य शास्त्री







प्रकाशक

स्वबोध आश्रम

आनन्दपुरी (नन्दगंज), गाधिपुरी, गाजीपुर (उ० प्र०)

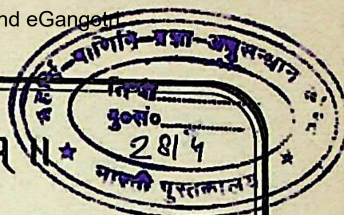
प्रकाशक
स्वबोध आश्रम
आनन्दपुरी (नन्दगंज), गाधिपुरी, गाजीपुर (उ० प्र०)

प्रथम संस्करण
युगाब्द ५०९४ (वि० सँ० २०४९)

मूल्य
गोसेवार्थ पच्चीस रुपये मात्र।

अक्षर संयोजन
जौहरी प्रॉसेस
जंगमबाड़ी, वाराणसी।

मुद्रण
जौहरी प्रिन्टर्स
४१, शिवाजी नगर, महमूरगंज, वाराणसी।

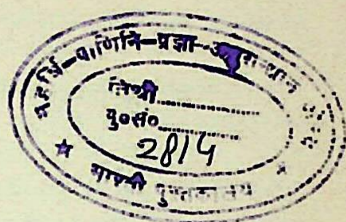


॥ श्री कृष्णः शरणम् मम ॥

महामहोपाध्याय पण्डितराज

डा० श्री गोपाल शास्त्री 'दर्शन केशरी'

अविर्भाव	निर्वाण
वि० सं० १९४९ (ई० १८९२)	वि० सं० २०४० (ई० १९८३)



श्रद्धाञ्जलि

"त्वदीयं वस्तु गोपाल तुभ्यमेव समर्पये"

"पूज्य शास्त्री जी भारतीय परम्पराके एक आदर्श शिक्षक 'गुरु' के मूर्त्तिमन्त स्वरूप थे। उन्होंने हमें केवल संस्कृत शिक्षाका ही आधार नहीं दिया बल्कि उनकी दृष्टि जीवनके सर्वांग जागरण की थी। उन्होंनें धार्मिक मत-मतान्तरोंके सद्भावके लिये समस्त दर्शनोंके समन्वयका महान प्रयास किया। मातृशक्तिके यर्थाचित जागरणसे परिवार जीवनको अज्ञानकी कारासे मुक्ति दिलानेके लिये 'नारी जागरण' का महामन्त्र दिया। समाज जीवनकी आध्यात्मिक और आर्थिक व्यवस्थाके आधार स्वरूप 'गो-सेवा' की महौषधि प्रदानकी और वे स्वयं भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलनके सक्रिय सेनानी रहे हैं। अतः भारतीय राजनीतिमें भी 'राम राज्य' के आदर्शकी प्रतिष्ठाके लिये वे एक 'समग्र आन्दोलन' के पक्षधर एवं विचारक रहे हैं।

आज हम उनके जन्म शती समारोह पर अपने समस्त 'स्वबोध कुल' की ओरसे जिनके श्रीचरणोंमें अनगिन शिष्योंकी श्रृंखलामें मुझे भी शिक्षा ग्रहण करनेका जो अल्प कालका ही सौभाग्य लाभ हुआ उसे भी मैं श्री गुरुदेवकी अपार कृपा मान सनातन संस्कृतिके ऐसे महान प्रेरणा स्रोतके प्रति नतशिर हो अपनी कृतज्ञता समर्पित करता हूँ और उनके द्वारा निर्देशित जीवन मूल्योंको जन व्यापी बनानें में स्वबोध आश्रम पूर्ण सक्षम हो-इसी आशीषकी पुनः पुनः कामना करता हूँ।

-ॐ विश्वात्मने नमः

ॐ आनन्द

वि.सं. २०४९. भाद्रपद श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
२१ अगस्त १९९२ ई. युगाब्द ५०९४

"समर्पण"

महांमहोपाध्याय पण्डित राज डा० श्री गोपाल शास्त्री 'दर्शन केशरी'

जन्म शताब्दी समारोह

(वि० सं० २०४८ आश्विन कृष्ण नवमी २ अक्टूबर ९१ से
वि० सं० २०४९ आश्विन कृष्ण नवमी २१ सितम्बर ९२ ई०)

के उपलक्ष्यमें स्वबोध आश्रम द्वारा

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी २१ अगस्तसे
आश्विन कृष्ण नवमी २१ सितम्बर तक आयोजित

"गोरक्षा संकल्प पर्व"

के पुनीत अवसर पर
विश्व जीवन के लिये
सादर समर्पित

"गोमहिमा अभिनय"



स्वबोध आश्रम
आनन्दपुरी (नन्दगंज) गाधिपुरी (गाजीपुर)
उत्तर-प्रदेश

प्रकाशकीय

पूजनीय शास्त्रीजीका व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभासे सम्पन्न था। जहाँ वे एक कुशल स्वतन्त्रता सेनानी रहे हैं, वहीं वे एक सजग सम्पादक भी रहे। जहाँ वे एक विद्वान अध्यापकके रूपमें दीखते हैं-वहीं वे पारदर्शी लेखक भी हैं। वे एक परम्परावादी आदर्श गृहस्थ ही नहीं अपितु एक गतिशील संत भी हैं। तेजस्वी वक्ता और कवि होने के साथ ही साथ सत्यके निर्भीक पक्षधर भी हैं। वे केवल राजनीतिक समस्याओंके विचारक ही नहीं बल्कि समस्त दार्शनिक निकायोंमें समन्वय ढूढ़ने वाले दार्शनिक भी हैं।

इस प्रकार उनके व्यक्तित्वकी तेजस्विताकी भाँति ही उनकी चिन्तन परिधिभी अत्यन्त विस्तृत है। फिर भी सुविधाके लिये प्रभु श्री ने उनकी समस्त प्रवृत्तियोंको प्रमुख रूपसे पाँच पक्षोंमें हमारे सामने रखा हैं । उनकी चिन्तनाका प्राथमिक पक्षतो वह है जिसेक अनुसार वे प्राचीन पाणिनीय व्याकरण पद्धतिसे संस्कृतकी शिक्षा चाहते थे, जिसके लिये उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ही समर्पित कर दिया था।

द्वितीयत: वे सब प्रकारसे मातृशक्तिके जागरणके पक्ष में थे। इसलिये ही उन्होनें अपने निवास गृहमें है कन्या संस्कृत शिक्षा मन्दिरम्की स्थापना भी की थी। और उनकी चिन्तनाका तीसरा पक्ष है-गोरक्षाका, जिसके लिये उन्होंने सक्रिय रूपसे आन्दोलनात्मक प्रयास एवं शोधपूर्ण रचनात्मक विचार दिये हैं।

इसके साथ ही इन सबसे इतर और उनके पूरे व्यक्तित्वका आधार स्वरूप एक विशेष और परमस्पृहणीय पक्ष है-उनका 'अध्यात्म भाव'। यह चतुर्थ पक्ष है-जो उनकी व्यक्तिगत अनुभूति और साधनाका गुह्य पक्ष है। जिसकी झलक उनकी निकट आत्मीयतामें आने पर ही किसीके लिये सुलभ थी। वे शिवयोगी थे और व्यक्तिके 'शिव भाव' की जागृतिको ही व्यक्ति और समाज जागरणका प्रमुख सूत्र मानते थे।

और इसी आध्यात्मिक दृष्टिके द्वारा ही वे द्वैत-अद्वैत सम्बन्धी समस्त दार्शनिक मतवादोंका समन्वय कर सनातन वर्णाश्रम धर्मको उसमें रूढ़ बन आयी सारी कुरीतियोंसे मुक्त कर उसके सच्चे स्वरूपको पुन: प्रतिष्ठापित करना चाहते थे। इसप्रकार वस्तुत: वे संस्कृत शिक्षणके माध्यमसे मूलत: भारतीय संस्कृतिके पवित्र मूल्योंका ही संरक्षण चाहते थे-यह मूल आकांक्षा ही उनकी चिन्तनाका पंचम पक्ष है जिसमें उनके व्यक्तित्व के समस्त भाव समाहित हो जाते हैं ।

ठीकसे देखा जाय तो प्रभुश्रीने आज 'स्वबोध संदेश प्रवर्तन' का जो विश्वव्यापी अभियान हमारे सामने रखा है-उसकी पृष्ठ भूमिमें श्री दर्शन केशरीजीकी अन्तस् प्रेरणा ही शब्दायित हो रही है। प्रभु श्री जिस छटपटाहटको लेकर देशके कोने-कोनेमें सन्तों, विद्वानों और राजनीतिक नेताओंके बीच भ्रमण कर रहे थे-शास्त्रीजी उस प्यासको सच्ची प्रेरणा देने वाले ऐसे सौम्य तपस्वी थे जिनके विषयमें प्रभु श्री यह कहते हुए विभोर हो जाते दीखे हैं कि-"आज इस भौतिक युगमें भी जब ब्राह्मण पतित हो रहा है-यदि किसी सच्चे प्रामाणिक आदर्श ब्राह्मणको जो ब्रह्म तेजसे मण्डित शिक्षकका पद निर्वाह कर रहा हो-देखने की इच्छा हो तो 'गुरुजी' का दर्शन करिये।

प्रभु श्रीने अपनी समस्त संभावनाओंको ऋषि कल्प शास्त्रीजी के प्रीतिमय चिन्तन-मननके बीच भली-भाँति परखा और अपनी सोच-समझकी प्रामाणिक पुष्टि पाकर ही निर्द्वन्द्व भावसे सन् १९८० में धरती पर 'विश्व धर्म' के उदय के लिये स्वबोध आश्रमकी स्थापना की।

तब से प्रभुश्रीने प्रात: स्मरणीय शास्त्रीजीके प्रति अपनी जीवन्त श्रद्धा पुष्पाञ्जलि स्वरूप उनकी प्रेरणाके अनुरूप ही 'स्वबोध गुरुकुल परिषद के द्वारा स्वबोध गुरुकुलोंकी श्रृंखला प्रारंभ करके-संस्कृत और संस्कृति शिक्षणकी, मांसाहार मुक्ति का आन्दोलन प्रारम्भ करके

'गोरक्षा' की, मातृशक्ति उद्‌बोधन मंच के द्वारा 'नारी जागरण' की और व्यक्ति और समाजके सर्वांग जागरणके लिये 'स्वबोध' की आध्यात्मिक साधनाके प्रसाद द्वारा धर्मके सनातन स्वरूपके प्रकाशमें 'विश्व धर्म' की संस्थापनाका महान लक्ष्य हमें प्रदान किया है।

आज इस लक्ष्य सिद्धिमें आश्रमके बारह वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। सौभाग्यसे इस वर्ष जहाँ हम श्रीकृष्ण जन्माष्टमीसे आश्रमका द्वादश वार्षिकोत्सव एवं भाद्रशुक्ल प्रतिपदाको प्रभु श्री गुरुदेव का बयालीसवाँ अवतरण पर्व मना रहे हैं वही आश्रमने पूजनीय शास्त्रीजी के स्मरणमें उनके शताब्दी वर्षके अंतिम महीनेको (श्रीकृष्ण जन्माष्टमीसे आश्विन कृष्ण नवमी तक) ''गोरक्षा संकल्प पर्व' के रूपमें मनाने का निश्चय भी किया है।

इस पर्व का मूल उद्देश्य है जन-जनमें गोरक्षाके प्रति भावना जागृत करना। अन्तमें समारोह की पूर्णता के रूपमें २१ सितम्बर ९२ को आश्रमके सभी 'स्वबोध जागरण दीप और समस्त 'स्वबोध साधना केन्द्र पू० श्री दर्शन केशरीजीकी स्मृतिके साथ उनके द्वारा निर्देशित जीवन मूल्योंको जन-जनकी सम्पत्ति बनाने के लिये आश्रम अभियानको निरन्तर सक्रिय बनाये रखने का संकल्प करते हुए श्रद्धा-पुष्प समर्पित करेंगे।

प्रसन्नताका विषय है कि शताब्दी समारोह के उपलक्ष्यमें वर्ष भर 'संस्कृत शिक्षण शिविर' 'नारी जागरण सम्मेलन' स्वबोध साधना समष्टि की आयोजनाके साथ ही साथ 'गोरक्षा संकल्प पर्व' के अवसर पर पू० शास्त्रीजी द्वारा रचित 'गो महिमा अभिनय' पुस्तकका प्रकाशन भी आश्रमकी ओर से किया जा रहा है। जिसके माध्यमसे हम पू०शास्त्रीजी के विचारोंको जन-जन तक पहुँचानेमें सक्षम हो सकेंगे।

पुस्तककी मूल पाण्डुलिपि आदरणीय शास्त्रीजीके सुपुत्र श्री बन्दीकृष्ण त्रिपाठी एडवोकेट की सौजन्यता से प्राप्त हुई है। उन्होनें उसे प्रकाशित करनेके लिये अपनी अनुमति ही नहीं अपितु उसके संपादनका गुरुतर भार भी स्वयं ही वहन किया है। उनकी प्रेरणा और सहज सद्‌भावके लिये हम उनके सदैव आभारी रहेंगे ।

महान पुरुषोंको स्मरण दिलाने वाले ऐसे सभी सुयोग तो एक बहाना मात्र हैं। सार्थकता तो इसीमें है कि उनके माध्यमसे हम अपना स्मरण करें। अपना पुनर्निरीक्षण करें और उनके प्रकाशमें अपने जीवनका स्वाध्याय करें।

आज भारतीय संस्कृतिके उदात्त जीवन मूल्योंकी कैसी दुर्दशा हो रही है-यह किसीसे छिपी नहीं है। सांप्रदायिकता निवारण के नाम पर धर्म निर्पेक्षताका आवरण ओढ़कर हम स्वयं ही ऋषियों द्वारा सेवित संस्कारोंकी पवित्रता और मर्यादाका गला घोंट रहे हैं।

खुले आम सरकारी लाइसेन्स से गोवंश की हत्या हो रही है। भ्रूण हत्या हो रही है। दूषित शिक्षा विधानसे चरित्र हत्या हो रही है। स्वार्थ और भौतिकताकी आँधीमें जहाँ एक तरफ 'धर्मान्तरण' का कुचक्र चल रहा है-वहाँ राजनीतिज्ञ जनताको सर्वधर्म समभावका पाठ पढ़ा रहे हैं। प्रज्ञा पुरुष ॐ श्री आनन्द प्रभुकी क्षत्रछाया में 'स्वबोध आश्रम' ने अपने 'समग्र जागरण अभियान' के द्वारा इस समस्त छलकी जड़ोंको ही उखाड़ फेंकनें का व्रत लिया है।

इस व्रतमें हम प्रत्येक जनको सम्मिलित करनेके इच्छुक हैं। अत: प्रभु श्री गुरुदेवसे यही प्रार्थनाहै कि हम सभी पू० शास्त्री जीके व्यक्तित्व एवं कृतित्वसे परिचित होकर अपने जीवनके लिय उज्ज्वल प्रेरणा प्राप्त कर सकें। प्रस्तुत प्रयास की यही सार्थकता होगी और पूजनीय दर्शन केशरीजी को सच्ची श्रद्धाकी अंजलि भी।

ॐ श्री गुरवे नम:

स्वामी उमाशंकर महाराज
वरिष्ठ संरक्षक-"स्वबोध आश्रम"
कुल सचिव-"स्वबोध गुरुकुल परिषद"

सम्पादकीयम्

प्रस्तुत पुस्तकके सम्पादनका दायित्व मुझपर ॐ श्री आनन्द प्रभुजी द्वारा स्वभावत: प्राप्त होगया। 'गो महिमा अभिनय' 'गोमहिमाभिनय नाटकम्' नामसे संस्कृत भाषामें पूज्य शास्त्रीजीके जीवन कालमें प्रकाशित हो चुकी है। जनताके मध्य इसके व्यापक प्रचार हेतु शास्त्रीजीने स्वयं इसकी रचना राष्ट्रभाषा हिन्दीमें की। संस्कृत भाषाकी उन्नति व उसके प्रचार प्रसार हेतु दत्त समर्पित जीवन होनेपर भी शास्त्रीजीने हिन्दीकी प्रारम्भिक अवस्थामें हिन्दी भाषाका शुद्ध ज्ञान प्रदान करने हेतु, १९७७ विक्रमीय, अर्थात् आज से ७२ वर्ष पूर्व 'राष्ट्रभाषा भूषण' नामक हिन्दी व्याकरणके लघुग्रन्थकी रचना की थी। उसकालमें सर्वत्र 'भाषा' को भाखा' कहा जाता था। इस पुस्तकका द्वितीय संस्करण सन् १९३९ में, सन् १९४० से संस्कृतकी प्रथमा परीक्षामें हिन्दी भाषाका ज्ञान करानेके लिए निर्धारित पाठ्यक्रमके अनुसार, 'हिन्दी दीपिका' नामसे प्रकाशित हुआ तत्पश्चात १९४७ से तो हिन्दीके कल्याणका कार्य हिन्दीके विद्वानों तथा शाशन द्वारा किया जाने लगा। और अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने हेतु इसकी संस्कृतसे दूरी बढ़ती गयी। आज जो स्थिति है उससे सभी परिचित हैं। अस्तु, प्रसङ्गत: इसका उल्लेख मैं मात्र इस उद्देश्यसे कर रहा हूँ कि संस्कृतके ज्ञानके विना हिन्दी भाषामें प्रचुरतासे उपलब्ध एवं प्रयुक्त शब्दोंकी प्रकृति, प्रत्यय व उच्चारण आदिका शुद्ध ज्ञान सम्भव नहीं है। और दूसरी बात यह कि पूज्य शास्त्रीजी की हिन्दी भाषामें भी पूर्णरुचि एवं गति थी। अपने द्वारा संस्कृतमें रचित 'नारी जागरणम्' नाटकका भी हिन्दी गद्य-पद्यात्मक नाटक उन्होंने स्वयं लिखा है जो प्रकाशित हो चुकी है।

मैने हिन्दी साहित्यका नियमित अध्ययन नहीं किया है, संस्कृतका कुछ ज्ञान अवश्य है, किन्तु कार्यक्षेत्र भिन्न होनेके कारण, मात्र मनन व चिन्तन तथा कुछ स्वाध्याय एवं संस्कार तथा पूज्य पिताजी- स्व० दर्शन केशरीजी- तथा अपने अग्रज पूज्य श्रीकेशरी कृष्ण त्रिपाठी शास्त्रीजीकी कृपासे सहजप्राप्त ज्ञानके आधार पर इसके प्रकाशन-निमित्त स्वाभाविक-सम्पादनका प्रयास किया है। त्रुटियाँ असम्भावित नहीं है अत: विद्वदजनों द्वारा क्षम्य होंगीं।

नाटककारने संस्कृत 'गोमहिमाभिनय नाटकम्' में जिन तत्वों, स्थितियों तथा व्यक्तित्वोंका स्मरण अपने 'इतिवृत्त' व कृतज्ञता प्रकाशमें किया है, उनमेंसे ग्रन्थ रचनासे मूलत: सम्बद्ध शक्तियोंका स्मरण करना इस प्रकाशनमें भी आवश्यक समझकर यहां उसका दिग्निर्देश कर रहा हूँ। अत: सर्वप्रथम ग्रन्थरचना निमित्त सर्वसाक्षिन्, विश्वात्मन्, भगवान् बदरी विशाल श्री बदरीनाथका स्मरण करता हूँ जिनके सान्निध्य व प्रेरणाका प्रतिफल यह कृति लोक कल्याणार्थ प्रस्तुत हो सकी है। तत्पश्चात् अपने अग्रज श्रीकेशरीकृष्ण त्रिपाठी शास्त्रीके गोण्डा जनपदमें निवासकालके गो सेवारत पारिवारिक स्थितिका स्मरण भी उतना ही आवश्यक है जहाँकि श्रीशास्त्रीजीने पाँच मास रहकर इस 'अभिनय' के अधिकांश भागकी रचनाकी। और काशीके पारिवारिक स्थिति तथा परिजन व स्वाङ्गकी स्थितिका स्मरणतो सहज व स्वाभाविकी ही है। यहाँ यह लिखना भी आवश्यक समझता हूँ, कि अध्ययन कालानन्तर श्रीशास्त्रीजीके स्वतन्त्र निवास व्यवस्थासे प्रारम्भ होकर मृत्यु पर्यन्त शास्त्रीजीने बराबर गोपालन किया है, और वे स्वयं सदैव गोसेवा किया करते थे। कमसे कम एक गाय या वछिया घरमें अवश्य रहती थी। वाल्यकालमें तो कृषक गृहस्थीके कारण गायें आदि घरमें रहतीं ही थीं। इस प्रकार इस रचनाकी पृष्ठभूमि वास्तविकी एवं स्वानुभूत है।

पुस्तकको रचना हेतु श्रीशास्त्रीजीनें स्व० श्री ब्रह्मदत्त-जिज्ञासु-स्मारक-पाणिनी कन्या विद्यालयकी कन्याओंकी धन्यताको स्मरण किया है जिन्होंने उन्हें वेदोंसे उद्धरण ढूंढ ढूंढ कर दिये थे, तथा निम्नलिखित पुस्तकोंके प्रकाशकों व लेखकोंको स्मरण किया है विषयोंके निर्धारण प्रक्रियामें :-

१- प्राचीन भारतमें गोमांस एक समीक्षा। गीता प्रेस, गोरखपुर।

२- वेदोंका यथार्थ स्वरूप। गुरुकुल काङ्गणी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।

३- महाभारत तात्पर्य निर्णय । मध्वाचार्य, कुम्भकोण संस्करण ।

४- गो ज्ञानकोश । दामोदर सातवलेकर, पारणी, गुजरात ।

५- सनातन धर्मालोक । दीनानाथ शास्त्री, दिल्ली ।

६- वैदिक सम्पत्ति । रघुनन्दन शर्मा ।

इन सभीके प्रति प्रस्तुत हिन्दी 'गोमहिमा अभिनय' के प्रकाशन कालमें भी मैं अपनी कृतज्ञता अर्पित करता हूँ ।

मैं स्वबोध आश्रमके संस्थापक व संचालक ॐ श्री आनन्द प्रभु जीको अपना साधुवाद देना चाहूँगा जिन्होनें इस कृतिको प्रकाशित करनेका व्ययसाध्य दायित्व सहर्ष ग्रहण किया । वस्तुतस्तु इस कृतिका प्रकाशन एकमात्र उनकी सदिच्छा व पूज्य शास्त्रीजीके प्रति श्रद्धासंकल्पका प्रतिफल है ।

जौहरी प्रिण्टर्स, जौहरी प्रॉसेस, तथा जौहरी ब्लाक मेकर्सके जनक श्रीनन्दलाल जौहरी, उनके सुयोग्य पुत्र द्वय, श्री जय मित्तल व श्री विजय मित्तल व अक्षर संयोजनके उनके घटक श्री निरंजन व श्री देवेश आदिका भी हार्दिक आभार है जिन्होंने, अक्षर संयोजन व मुद्रण करानेका गुरुतर कार्य बड़े मनोयोग से सम्पन्न किया । श्री नन्दलालजी ने ग्रन्थके कलेवरको प्रस्तुत रूपमें लाने हेतु जिस दृढ़ आत्मीयताका बोध कराया है वह स्तुत्य है । मात्र व्यावसायिकतासे ही व्यवहार नहीं होना चाहिए, उनका यह सिद्धान्त उनका सर्वथा व सर्वदा मङ्गल करे ।

पुस्तक सम्पादन कालमें पग पगपर जों ईश्वरीय व अहैतुकी सहायता अर्थबोधमें, अथवा अन्य व्यावहारिक अड़चनोंको हटानेमें हमें, प्राप्त होती रहीं वह मैं ऐसा विश्वास करता हूँ कि स्वान्तः सुखायके लिये की जानेवाली इस सम्पूर्ण क्रियाका सुफल तथा पूर्वजों, अग्रजोंकी कृपा व अनुकम्पाके कारण ही मिल सकी है । समर्घ कागजके सम्पूर्ण मूल्यका जो अनुदान श्री सीताराम ट्रष्टके श्री राधेश्याम खेमकाजीने जिस सहजता, सरलता व स्वान्तः सुखाय किया यह सब गौमहिमाका प्रकाशमान रूप है । 'परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ' का यह सुखकर स्वरुप हमारे देशमें, विश्वमें शीघ्रातिशीघ्र पूर्णतः प्रतिष्ठित होजाय यही आज हम सभीका काम्य प्रथमतः होना चाहिए ।

पूज्य श्री शास्त्रीजीने सम्पूर्ण कृतित्व श्री बदरीविशाल भगवानका मानकर स्वयंको निमित्त मात्र माना है । तथा स्वरुप चिन्तनमें निम्नलिखित पद्योंकी संरचना दी है । विद्वद्जनोंके मनोविनोद हेतु उन्हें मैं यहाँ उद्धृत कर दे रहा हूँ । इसकी दार्शनिक भित्ति स्वप्रकाश है ।

'शिवोऽहमानन्दघनो महेशः स्वयं प्रकाशश्च परप्रकाशः ।
परं न मत्तोऽस्ति च किञ्चिदन्यात् स्वयं परं सर्वमिदं यतोऽहम् ॥१॥
विश्व सम्राडहं सार्द्धहस्त त्रये,
देह आस्थः स्वलीलां विचित्रां दधे ।
सागरोर्मी प्रशान्ति-स्थितिमें स्थितिः,
सच्चिदानन्द रूपैव सा राजते ॥२॥
न चैकाकी देवोऽनुभवति निजानन्दममलम्,
ततः शून्याद्यध्वाश्रित मित शरीरोपकरणः ।
तटस्थो विश्वात्माऽनुभवति जगद्भेद उषितः,
सदा स्वात्मानं तं निरुपम चिदानन्दममितम् ॥३॥

'साढ़े तीन हाँथ' के अपने निजत्वमें हम सब अपनेको बाँधकर कितना संकुचित व संकीर्ण बन गये हैं, अन्यथा यह अखिल विश्व सम्पूर्ण सृष्टि हमारी ही तो क्रीड़ास्थली है, हमीं तो इसमें भासित हो रहे है, ऐसे शिवत्वके प्रतिपादक व बोधात्मक अभिव्यक्ति प्रदान करनेवालेको इस अवसर पर सर्वाङ्ग सहित शत शत नमन् । इति शिवम् ॥

अखिलकृष्णः

आश्विन कृष्ण ४/२०४६

हा! गोविलाप!

(भुजङ्गप्रयात छन्दमें)

बनेगी धरा मूर्दघाटी सभी भी
यथा नाश होता हमारा अभी भी।
लिये दाँतमें घास मैं बोलती हूँ
सुनो न सुनो, ठीकही बोलती हूँ॥१॥

मुझे वेद अघ्या सभी हैं बताते
मनू तो हमें तोर माता जताते।
हमी तो तुझे दूध, घी खीर देती
सभी के यहाँसे भुसा घास लेती॥२॥

न आती तुझे लाज मेरे किये की
कसाई घरे दो मुझे मारने की।
कहूं क्या भला हाय होते जहांमें
तुझसे कृतघ्नी कहीं क्या धरामें॥३॥

अये दीन दुःखी तुझे सेवती हूं
कहो बैलसे खेत भी जोतती हूं।
सदा बैल मेरा वहे यान तेरा
सभी तौरसे तो बना तोर चेरा॥४॥

खिलाके पिलाके सदा काम लेते
हमें अन्तमें व्याधके गेह देते।
चरूँ घास आ शामको दूध देती
सदा बैल मेरा करे तोर खेती॥५॥

सभी अन्न सच्चे सदा तू निवारो
हमें क्या मिले घास भुस्सा विचारो।
सुबस्ती तथा जीविका एकमें है
हमारी तुम्हारी सभी देश में हैं॥६॥

हमें पालता तूं, तुझे पोसती हूं
सभी रोग तेरे हमी नाशती हूं।
कभी दुःख ना मैं तुझे हूं बताती
सदा द्वारकी तोर शोभा बढाती॥७॥

निभाती हमी आपना पक्ष सच्चा
जहां होत तेरा सदा पक्ष- कच्चा।
न लेता अभी मार्ग सच्चा यदी तूं
सदाके लिये नाशको पायगा तूं॥८॥

न आता जिसे वेद उच्चारना भी
मुझे हा! कहे वेदमें मारना भी।
कथं अर्थ वे भारती मानते हैं
कथं 'पश्चिमीको गुरू जानते हैं॥ ९॥

कहां सूर्य है वेद जो दिव्य वानी
कहां म्लेच्छ भाषी बने घूक मानी।
न जानें कभी वेद वे म्लेच्छभाषी
भले भारती होगये म्लेच्छभाषी॥१०॥

कहूं क्या नहीं नाश है दूर तेरा
यथा नाश होता रहा हाय! मेरा।
प्रति ग्राम गोभूमि छूटी जहां हो
वहीं आज दो आङ्गुली ना धरा हो॥११॥

नहीं कोइ लेता यहां पक्ष मेरा
इसीसे यहां दुःख-दारिद्रय-डेरा।
यहां दुःख दारिद्रय वे भोगते हैं
बने निर्दयी बैल जो जोतते हैं॥१२॥

देखो विलाप सुरभी करती यहां है
जो मुख्य-पृष्ठपर हा! यहजो दिया है।
हो आर्य भूमि यह भारतवर्ष दैवी
गो-जाति भी बस रहे' प्रभु-देन दैवी॥१३॥

इतिगोविलापः।

भारतवासियोंके प्रति गोमाताका विलाप

(पद्यका भावार्थ)

सारी भारतीय भूमि मूर्दघाटी (श्मशान हो जायगी) यदि मेरा बध आज स्वतन्त्र भारतमें भी होता रहेगा। मैं दाँतमें तृण (तिनका) घास दबाकर बोलती हूं। सुनना न सुनना तुम्हारा काम है। ॥१॥

मुझे चारों वेद अघ्न्य एवं अघ्न्या बताते हैं। भारतके आदि वैज्ञानिक मनु महाराजने हमें तुम्हारी माता कह कर पुकारा है। मैं तो तुमसे केवल सूखा भूसा और घास लेती हूं। पर तुझे घी दही माल पूआ और खीर अमृत तथा घीमें छानी पूड़ी भी देती हूं। ॥२॥

हमारे कर्तव्यको देखकर भी तुझे लज्जा नहीं आती कि हमें मारने वास्ते कसाईके हाथ बेच देते हो। हाय! हाय! मैं क्या कहूं? संसारमें तुम्हारे ऐसे कृतघ्न (नाशुक्रा) तो खोजने पर भी नहीं मिलेगा। ॥३॥

अरे मानव! मैं गरीब दुःखिनी होकर भी तुम्हारी सेवा करती हूं। मेरा बैल भी तुम्हारा खेत जोतता है। सभी तरहसे तो वह तुम्हारा ही चेरा (सेवक) बना रहता है। जो भी काम चाहते हो उससे कराते ही तो हो। ॥४॥

तुम खिला-पिलाके हमारे बच्चोंसे सदा काम लेते हो। अन्तमें हमें या हमारे बच्चेको कसाईके घरमें बेच देते हो। तो भी मैं दिन भर घास चरकर शामको तुम्हारे दरवाजे पर आकर दूध देती हूं। मेरा बैल सदा ही तुम्हारी खेती किया करता है। ॥५॥

सभी सच्चा अन्न, जो बढ़िया माल होता है, वह तो तुम्हीं ले लेते हो। हमें क्या मिलता है? उस अन्नके छिलके उपरके भाग घास भूसाही तो मिलता है। जरा विचारो तो। ॥६॥

हमें तुम पालते हो तो मैं भी तुम्हें दूधसे, अपने बच्चों से, तुम्हारी सेवा कराकर तुझे मैं भी पोसती हूं। और तुम्हारी सभी बाधाओं का नाश करती हूं। हमारा तुम्हारा रहना तथा भोजन (खानापीना) सब एक ही साथ होता है। कभी मैं अपना दुःख तुमको नहीं सुनाती। सदाही तुम्हारे द्वारकी शोभा बढ़ाती हूं। ॥७॥

मैं अपने पक्षके सभी कामोंको सच्चा उतार देती हूं। जहां तुम्हारे सभी काम कच्चे ही होते हैं। अभी भी यदि तुम सच्चा (पक्का) मार्ग रास्ता नहीं पकड़ते तो तुम सदाके लिये नष्ट भ्रष्ट हो जाओगे। तुम्हारी निशानी भी नहीं रहेगी। ॥८॥

जो फिरङ्गी वेदका उच्चारण भी ठीक नहीं कर सकते। वेद शब्दको (बेड) कहते हैं। वे ही लोग (बेड से) वेदसे हमारा मारना सिद्ध करते हैं। वे कहते हैं कि बेडमें लिखा है कि, पहले ऋषिलोग गाय बैल मारकर खाते थे। उसीको यहांके अज्ञानी भारतीय ठीक अर्थ मानकर उन फिरङ्गी अंग्रेजोंको अपना गुरु मानते हैं। इस अज्ञानको क्या कहा जाय?। ॥९॥

कहां वेदतो ईश्वरकी (दिव्य) वाणी है। कहां बेड (वेदको) कहने वाले घूक (उल्लू पक्षी) अंग्रेज म्लेच्छ (अव्यक्त) गिट पिट शब्द बोलने वाले, वेद क्या जानें? भारतीय भले ही उनकी म्लेच्छ भाषा पढ़ जाँय पर वे तो संस्कृत भी ठीक नहीं जान सकते। वेद तो बहुत दूर है। ॥१०॥

मैं अधिक क्या कहूं, ऐ भारतीयों! तुम्हारा नाश अब दूर नहीं है। यदि मेरा नाश यहां ऐसाही होता रहा। जहां प्रत्येक ग्रामों में गोचर भूमि छूटी रहती थी। आज वहां दो आङ्गूल भी गोचर भूमि देखने को नहीं मिलती। ॥११॥

हमारा पक्ष लेकर कोई भी सरकार द्वारा गावोंमें गोचर भूमि नहीं छोड़वाता। मैं तो मूक (गूङ्गी) पशु हूं। इसी कारण भारतमें दुःख दारिद्रयका डेरा लगा है। अन्य देश तो यद्यपि मांसाहारी है तो क्या? वहां पशु जातिका पालन होता है। यहां भारतमें तो पशुओं पर निर्दया क्रूरता कसाईसा व्यवहार होता है। देखकर जी कांप जाता है। रोङ्गटे खड़े हो जाते हैं। ॥१२॥

यह सुरभिका विलाप सर्व प्रथम इसी कारण दिया गया है कि इस पर सभी का ध्यान जाय। जैसी दैवी देन गोजातिको ईश्वरने बना रखा है। वैसी ही वह दिव्य देन बनी रहे। उसका भारतमें पूर्ववत् सम्मान आदर बढ़े। इति शिवम्।

सर्वा द्रोणदुधा गावो रामे राज्यं प्रशासति।
स्वतन्त्रे भारते कस्मादद्य द्रोणदुधा न ताः॥



॥ श्रीकृष्णः शरणं मम ॥

गोमहिमा अभिनय प्रस्तावना

संक्षेपतोहिविमृशन्तु पुरः प्रवेशे
दृश्याभिनेयमखिलं महिमानमादौ।
दिव्यं गवां प्रचुर भावमुदीरयन् यो
विद्वज्जनान् विदधदाशु विनोदमग्नान्॥

एक यहां वेदमन्त्र है जिसका अर्थ है– "स्वतन्त्रताके मार्ग वेदी, राष्ट्रका भद्र-कल्याण चाहने वाले ऋषियोंने जो तपस्याओं और दीक्षासे वेदविद्या प्राप्त की, जिससे राष्ट्रमें बल बुद्धि तेज प्रभृति की समृद्धि हुई। वे सारी बातें इस राष्ट्र को सदा प्राप्त होती रहे। (अथर्व० १९/४१/१)

इस गो महिमा अभिनयके दो ही सूत्र लक्ष्य हैं–

१- अहिंसा-सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहायमाः।

२- शौच सन्तोष तपः स्वाध्यायेश्वर-प्रणिधानानि नियमाः। (योग सूत्र २)

वेदने भी कहा है– 'मा हिंस्यात् सर्वाभूतानि। अघ्न्या गावः। इति।'

पशु जाति तो जीवन भर मनुष्योंका उपकार करती ही है। मरने पर भी चर्म, सिंग, खुर और हड्डियोंसे उनकी सेवा करती है। इसीसे मनुने अहिंसाको प्रधानता देते हुए लिखा है– 'अहिंसा' किसी भी प्राणीकी हिंसा न करना, 'सत्य' मन कर्म वचन तीनोंमें ही सच्चा बर्ताव रखना, 'अस्तैय' चोरी न करना, 'ब्रह्मचर्य' व्रत रखना, 'अपरिग्रह' कहींभी आसक्ति नहीं रखनी। ये बातें उन्होंने एक पक्षमें कही है। पर 'ब्रह्मचर्य' और 'अपरिग्रह'के स्थान पर 'शौच' और 'इन्द्रिय निग्रह' ये दो शब्द लिखे हैं जिनमें ब्रह्मचर्यके लिये इन्द्रिय निग्रह शौचके लिये अपरिग्रह शब्द है।

इन सब बातोंसे यह सिद्ध होता है कि अहिंसा– किसी पशुकी भी हत्या नहीं करना, यह सभी शास्त्रकारों को अभीष्ट है। और सभीने अहिंसा ही अपने शास्त्रमें लिखी है। ऐसी स्थितिमें जहां कहीं भी हिंसा सूचक वाक्य मिलता है और उसका कोई लक्षणार्थ नहीं है तो उसे प्रक्षिप्त माना जाय। किसी धूर्तने मिला रखा है यही सत्य है।

सन् १९७९ के ५ मार्च के सोमवारवाले आज पत्रमें दो वैज्ञानिकों ने बताया है– गाय परिवारका ही आवश्यक अङ्ग है।

अधिक नहीं तो एक गाय तो हर परिवारके साथ रहना ही चाहिये। परिवारमें शाक सब्जीके छिलके अन्नके बाहरी भाग जूठन माँड चावल आदिके धोवन फलके छिलके जो भी मनुष्यके कामके नहीं होते वे सभी गायके भाग हैं।

ईश्वरने मनुष्यके भोज्यके साथ गायका खाद्य अधिक मात्रामें रखा है। गेहूं मक्का मसूर उरद कन्द सभीमें तो मनुष्यसे दुगुना चौगुना भाग गायका रहता है।

अत: यह सिद्ध है. कि प्रत्येक घरमें मनुष्यके अनुपातसे गायका अनुपात रखना ही होगा। घरके सभी खाद्य भोज्यमें ईश्वरने जब गायका भाग रखा है। तो क्या मनुष्य उसे उससे वञ्चित कर सकता है ?

हमलोग समझते हैं कि ईश्वरने जब मानव सृष्टि की तो उसके साथ गो जातिकी इसीलिये सृष्टि की कि उसे वह अपने साथ रखेगा। उसके बछड़े उसकी खेती करेगें। उनके गोबरमूत्र खादका काम देगें। गौ उनके परिवारको अमृत भी देगी। द्वार की शोभा बढ़ावेगी। अधिक क्या कहना है। वह मनुष्य के घरमें लक्ष्मी बनकर नैठेगी। मनुष्य यदि समुचित सेवा गायकी करेगा तो वह उसके लिये कामधेनु हो जायेगी।

जिस घरमें गौ बांधी जाती है वहांसे मक्षिका (मख्वी), भूत-प्रेत, पिशाच भाग जाते हैं। शासनका काम है कि वह खरी, भूसा आदिका प्रबन्ध रखे। प्रत्येक घरमें गाय रखने की सुविधा दे। गायके लिए अनुदान दे। अधिकारी गावोंमें शहरोंमें घूम घूम कर गोपालनके तरीके बतावें।

देहातोंमें चरागाह गोचर भूमि परती जमीन रखानी चाहिए। शहरोंमें पटरियोंके आस पास घास उगानेका क्रम हो। बीच बीचमें बाग रखना चाहिए। जहां जानवर चर सकें।

कृषिसे मनुष्यका सम्बन्ध अनिवार्य है। वह कृषि गोजातिके आधीन रहनी चाहिए। उनकी वृद्धि, पुष्टि, नस्ल वृद्धिके लिए विज्ञानका प्रयोग होना चाहिए। रामराज्यमें द्रोण-दुघा गायें थीं।

गोजातिके उच्छेद करने वाले कोई ट्रैक्टर आदि राक्षसी यन्त्र भारतमें नहीं चलना चाहिए। न वैज्ञानिक खाद चलना चाहिए। इनसे अन्नका स्वाद नष्ट होता है। पृथ्वीका विष शिव-वाहन बैलोंके खुरसे ही मरता है। वह ट्रैक्टरसे नहीं मरेगा। गोबर गोमूत्रसे ही अन्नमें स्वाद आता है। वैज्ञानिक खाद अन्नका स्वाद खा जाता है। भूसा बैलोंकी दवरीसे तैयार होना चाहिए। उसीसे भूसा गाय बैलके खाने योग्य होता है। मशीनका भूसा जानवर नहीं खाते। वह उतना मुलायम नहीं होता। सभी कृषि यंत्र बन्द करना होगा।

सरकार गोरक्षणी सर्वत्र रखे। वृद्ध, अपङ्ग जानवरोंकी रक्षाका प्रबन्ध हो। और मृत जानवरोंके खाल, हड्डी, शृङ्गादिके सञ्चयके लिए भी शिल्पशाला हो। मृत जानवर चर्मकारोंके घर या उसी शिल्प शालामें पहुंचाये जांय। धर्मातिरेक और अन्धश्रद्धाके कारण पशुओंका जल प्रवाह या अवट खनन की प्रथापर दण्डकी विभीषिका होनी चाहिए। पशुका परमोपकार कृत्यको नासमझ हिन्दू रोकने न पावें।

विदेशी शासकोंकी नकलची सरकार जो ट्रैक्टर आदि यन्त्रोंको बढ़ावा देती जा रही है। जिससे भारतराष्ट्रसे गोजातिका उच्छेद हो रहा है। यह देशके विनाशका चिह्न है। भारतीय राष्ट्रके प्रवर्तक मनुने अपध्वंसाध्यायमें लिखा है कि 'महायन्त्र प्रवर्तनम् राष्ट्रनाशस्य कारणम्' यन्त्रों की वृद्धिसे राष्ट्रका नाश है। सो प्रत्यक्ष दिख रहा है। कलकत्ते, कानपुर प्रभृति बड़े शहरोंमें कपड़ेके मिल्स, तेलके मिल्स खोलकर सरकारने भारतराष्ट्रके ग्रामीण मजदूरोंको मिलमें खींच लिया है। जिससे एक तरफ देहातमें मजदूरोंके अभावमें खेती चौपट हो गयी है। दूसरी तरफ मजदूरोंका स्वास्थ्य चौपट हो रहा है। तीसरी बीमारी गङ्गा प्रभृति नदियोंका जल विदूषित हो गया है। यह महायन्त्रकी प्रवृत्ति राष्ट्रका नाश कर रही है। इसकी ओर भारत राष्ट्रके नेताओंको कौन सुझावे?

घरकी स्त्रियोंका स्वास्थ्य तो उनके चरखे, चक्की, ओखल-मूसल, जांता-चक्की, शिल-लोढे इत्यादि घरेलू उद्योगोंको विदेशी यन्त्रोंद्वारा छीन लेनेसे चौपट हो ही गया है। अब यह राक्षसी मशीनरी-सभ्यता जानवरों तथा पुरुष वर्ग पर टूट पड़ी है। उनका नाश करके ही छोड़ेगी। इसी कारण भारत राष्ट्रके आदि राजा मनुने महायन्त्रोंका चलाना निषेध किया है। तथा ब्राह्मण ग्रन्थ शतपथ आदिने मनुकी प्रशंसाकी है कि 'यन्मनुरवदत् तद्भेषजम्' 'मनोर्हिवाक्यं वेद:' अर्थात् जो मनु महाराजने कहा है। वह देश राष्ट्रके लिए भेषज है। मनुराजाका वाक्य ही वेद है। इत्यादि। भारतराष्ट्र नेताओंको इसपर गम्भीरतासे विचार करना है।

धर्मसार

रमत नहिं अकेले ब्रह्म होता अनेक, श्रुति उपनिषदों का है यही एक टेक,
जग जड़ अरु चैतन्यादिधारी सभीलो, वसत सतत सारे हैं निरेखो हमीलो।
सन्तोंका परवाह नहीं जो स्वयं पुजारी सन्तोंका,
खल जन मानेंगे भला क्यों, जो हैं अग्र असन्तोका।
कुमार्ग जाना लखि आर्य वर्ग के
बने हुए शिष्य गुरुण्ड वर्ग के
मुझे स्मृति होत जगद्गुरुत्व की
कही जिसे है मनुने महत्व की।
जो आर्य की लिख रखी मनु ने बड़ाई
क्या देश है कछु कहीं वह कीर्ति पाई
मैं जो यहां कहत आर्य सुभाव कर्मा
देखो सुनो सब बनो तुम आर्य-धर्मा।

अभिनयदृश्य-संख्य विमर्श

१- प्रथम दृश्यमें नन्दीपाठके बाद सूत्रकारको फटकारकर दिल्लीमें गोवधनिषेधके आन्दोलनमें निकले जुलूसके दो महात्माओंने आपसमें परस्पर विवादके रूपमें केन्द्रीय सरकारके दोष गुणोंका वर्णन किया है।

२- द्वितीय दृश्यमें भारतीय संविधानका स्वरूप बताकर भारतके प्रान्तीय शासकोंका भी कृष्णपक्ष-शुल्कपक्षके नामसे दोष गुण बताया गया है।

३- तीसरे दृश्यमें जन्मान्तरमें उत्पन्न हुए भारत सम्राट दिलीप और उनकी धर्मपत्नी सुदक्षिणा रानी द्वारा अपनी पूर्व जन्ममें कीगयी गोभक्तिके वर्णनका ही विस्तार है।

४- चौथे दृश्यमें नन्दिनीकी सेवामें निरत दिलीप सम्राटका गायके बचावमें अपने शरीरको दे डालना, यह अद्भुत चमत्कार बताया गया है। वहां ही ब्रह्मचारीका सदुपदेश चार चांद लगा देता है।

५- पंचम दृश्यमें राजा प्रियव्रत और देवर्षि नारदके संवाद द्वारा प्राचीन भारतकी गौसमृद्धिकी सूचना तथा गौमेध अश्वमेध माने गोजाति पशुजातिकी वृद्धि है, न कि उनको मारना। इसी प्रसंगमें भारतके गोवंशकी दुर्दशा देखकर मूर्च्छित प्रियव्रत राजाको होशमें लाकर राजाकर्णकी कथा द्वारा उन्हें तसल्ली देना और ईश्वरेच्छा ही जगच्चक्र पालिका है इसे सिद्ध करते हुए भारतमें ही आर्य सृष्टि हुई है। आर्य बाहरसे आये यह तो अंग्रेजी चक्रचाक है। इसे शीघ्र रोकना चाहिए यह स्पष्ट दिखाया है।

६- छठे दृश्यमें भव और भवानी द्वारा भारतमें आर्य भूमिका सीमा निर्देश सप्रमाण किया गया है।

७- सप्तम दृश्यमें आर्यनिवास बताकर गोधनके लिये यहां राजाओंमें परस्पर युद्ध छिड़ जाते थे। यह भास कविके पञ्चरात्र नाटकके दृश्यसे दिखाकर पुनः भव-भवानी संवादसे ही दृश्य समाप्ति है।

८- अष्टम दृश्यमें वेद और लौकिक भाषाओंमें गोशब्दके भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। अल्पज्ञ तो वेदार्थ कर ही नहीं सकते। अमर सिंहने गो जातिके सम्बन्धमें विविधनामोंका उल्लेख किया है। यह उनके और उनके शिष्योंके संवाद द्वारा दिखाया गया है।

९- नवम दृश्यमें गौ का आर्थिक महत्व बतानेके लिए नैनीताल जिलेके काशीपुर निवासी श्री वालीराम नामक विशिष्ट सज्जनके मुखसे ट्रैक्टर बन्द कराकर गोवंशका ही प्रचार भारत सरकारको कराना चाहिए। इसका सयुक्ति सप्रमाण विस्तृत वर्णन है।

१०- दशम दृश्यमें गोमेध इत्यादि शब्दोंका वैदिक अर्थ बताया गया है। गोव्रज गान्धार इत्यादि शब्द भी पशु समृद्धिका ही सूचक है। आसुर प्रकृतिके लोगोंने शास्त्रोंकी अन्यथा व्याख्या करके तथा उसमें पशु हिंसा सार्थक वाक्योंको मिला दिया है। उसी में राजा रन्तिदेवको हिंसक सिद्ध करना भवभूति कविका बौद्धत्व प्रदर्शन दृश्यभी शामिल है।

११- एकादश दृश्यमें द्वितीय वैदिक ब्राह्मण द्वारा प्रथमके प्रश्नके उत्तर रूपमें शास्त्रोंमें पशु हिंसाका बिल्कुल निषेध बताना। राजा वसुकी बदमाशीसे ही अध्वर (अहिंसक) यज्ञ यागोंमें भी हिंसाकी प्रवृत्ति दिखायी है।

१२- द्वादश दृश्यमें गोरक्षा वर्णन प्रसंगसे महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा ट्रैक्टरका विरोध और गोवंश विच्छेदक सभी आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कारका भारतमें प्रतिषेध बताना है।

१३- त्रयोदश दृश्यमें देवर्षि नारदद्वारा सुरभिका भगवान श्री विष्णुदेवके पास अपना सन्देश भेजना और उनका उत्तर विस्तृत रूपमें वर्णित है।

१४- चतुर्दश दृश्यमें गोदान पद्धतिमें निर्दिष्ट तथा सभी शास्त्रोंमें वर्णित गोदानके महात्म्य बताना है। आर्य जातिमें तो जन्मके बाद मरणोपरान्त भी वृषोत्सर्गादि कृत्योंसे गोवंशका सम्बन्ध अनिवार्य सिद्ध बताया है।

१५- पंचश दृश्यमें वृद्धतम दो विद्वानोंद्वारा गोमूत्र तथा गोदुग्धके अद्भुत विचित्र अनूभूत प्रयोग बताया गया है।

यों १५ दृश्यों और ५ अंकों द्वारा गोमहिमाभिनय नाटकमें गो जातिका विशेष वर्णन कर भारतको सभी देशोंसे बड़ा जगद्गुरुका पद दिया गया है।

आज स्वतन्त्र भारत के २५ पचीसवें वर्षमें इस गोमहिमामिनय ग्रन्थरत्नका अभिर्भाव भी ईश्वर प्रेरित ही है। अतः पुनः भारतमें गोधनका पूर्ववत् समादर होना चाहिये और अद्भुत सरल मसृण मंजुल संस्कृत तथा हिन्दी भाषामें लिखे पृथक-पृथक इस ग्रन्थका प्रत्येक प्रान्तकी परीक्षाओंमें पाठ्य रूपसे प्रचार होना चाहिए। ॥इति शिवम्॥

श्री गोपालः

श्रीगोपाल शास्त्री (दर्शन केशरी)
डी ५९/३१, सिगरा, वाराणसी।

मिति :– सौर १ / ४ / विक्रम २०३१

श्रीकृष्णः शरणं मम॥

गौमहिमा अभिनय

मन्त्र दृष्टा मनीषी ऋषियों और देवताओंने बड़ी तपस्या तथा परिश्रम उठानेके बाद जिस वेदवाणीको प्राप्त किया था, उसी दैवी वेदवाणीको हम लोग हविष्यान्न भोजन करके प्राप्त करें। हमें अपने तपस्या परिश्रमका फल वह प्रदान करें।

(तैत्ररीय ब्राह्मण २/८/८/५)

अथ प्रथमांक १

गोवध विरोधी शोभा यात्रा दृश्य : १ प्रथम

(स्थान : दिल्लीकी रंग शाला)

नान्दीपाठ (मंगलाचरणम्)

(बालक और बालिकाएं मारिषके साथ गाते हैं, परदेके भीतरमें)
(स्त्रग्विणी छन्दसे)

ईश इच्छा बिना ही रचे विश्वको।
शक्ति होती सरखी सर्वदा आपको॥
आपकी सत्कृपासे त्रिलोकी चले।
गोमहत्वाभिनीती समृद्धि फले॥

गोद्विजों भूलि ये आपकी जन्मते।
लोककी भक्ति गोजातिमें मानते॥
देह दी भूप दीलीपने जानते।
गो लिये कर्णको विप्र भी शापते॥

गोधनोंके लिये पार्थ दुर्योधना।
हैं लड़े छोड़ सामान्य-सद्भावना॥
हैं बसे आप हृद्देशमें लोकके।
हा बचावें महा नाश गोवंशके॥

(नान्दीपाठ समाप्तिके बाद सूत्रधार (मारिष)का प्रवेश।)

सूत्रधार– (खड़े-खड़े) बस, बस, स्वतन्त्र भारतके संविधानकी भावनाके विपरीत इस बेतुके व्यर्थ गानसे क्या मतलब? क्या अब भी तुम लोग भारतकी स्वतन्त्रताके २५ पचीसवें वर्षमें भी जब स्वतन्त्रता दिवसका रजत जयन्ती महोत्सव मनाया जा रहा है, गोवंशकी उन्नतिके सूर्योदयमें भी दिवान्ध ऊल्लूके समान सब अन्धे बने

हो, जिससे कांग्रेसके नेता दादा भाई पारसी, नौरोजी, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, महामना मदनमोहन मालवीय जी, महात्मा गान्धी, सुभाष चन्द्र बोस, जवाहर लाल नेहरू आदिके प्रतिज्ञात गोवंश रक्षा विधानको भूलकर महेश्वर परमपिता परमेश्वरसे गो जातिकी रक्षाकी मांग कर रहे हो?

क्या तुम लोग नहीं जानते हो कि भारत जब स्वतन्त्र हुआ (वै०सं० २००५ (१९४७ ईस्वी)में उसी समय उत्तर प्रदेशकी सरकारने गो संवर्द्धन समिति कायम कर दी थी, जिसके सदस्य इस नाटकके तथा नारी जागरण आदि नाटक एवं अनेक ग्रन्थोंके निर्माता व्याख्यान वाग्मी म० म० पण्डितराज डा० श्री गोपाल शास्त्री (दर्शन केशरी) जी भी थे। उन्होंने अन्यान्य समिति सदस्योंके साथ सारे उत्तर प्रदेशमें भ्रमण करके गो जातिकी रक्षा एवं समृद्धिके लिये पृथक् विधान बनवा दिया है।

आज तो सभी प्रान्तोंमें तथा केन्द्रमें भी गोवंशकी रक्षा एवं समृद्धिके लिये विधान बन गयें हैं। गोवध निषेधका भी कानून है।

(नेपथ्यमें बड़ा हल्ला गुल्ला सुनाई पड़ता है)

सूत्रधार– यह क्या बात है? मैं इधर नाटक का विज्ञापन कर रहा हूँ। तब तक ही यह शोरगुल क्या होने लगा! (कान देकर उछल पड़ता है और कहता है) अहा! जान गया, जान गया। गोवधके विरोधमें देश भरके साधु महात्माओंकी जो दिल्लीमें शोभा यात्रा (जुलूस) निकला है, उसीका यह बड़ा भारी शोरगुल हल्ला-गुल्ला है। (उसी समय दो साधु रंगमंचपर आते हैं।) उनमें एक सूत्रधारको डांटते हुए बोलते हैं।

प्रथम साधु– अरे! वाचाल सूत्रधार! तुम क्या यहां झूठमूठ बड़-बड़ा रहा है? देखता नहीं है, गोवधके विरोधमें जो देशमें आन्दोलन चल रहा है, उसकी शोभायात्रा-जुलूस जो इस नगरमें निकाला गया है, जिसमें भारत राष्ट्रके कोने-कोनेसे सभी सम्प्रदायके साधु-महात्मा, महन्थ-नागे, गिरि-पुरी, उदासी-वैरागी लाखों बड़े-बड़े महात्मा शामिल हैं। उनपर गोली बरस रही है। तुम यहां रंग मंचपर कोनेमें बैठे-बैठे उनकी झूठी प्रशंसा गा रहा है।

जैसे वे राजनीतिज्ञ नेता मनस्यन्यद् वचस्यन्यद् 'मुखमें राम बगल-में छूरी'के समान सभाओंमें डींग मारते हैं, वैसा ही तुम भी झूठी शेखी बघार रहा है। (तब तक दूसरा उसका साथी साधु उसीको डांटता हुआ ऊँचे स्वरमें बोलता है)

द्वितीय साधु– अये साधो इधर सुनो।

(दोहा में)– *खल दूसरके दोष को भले राइ सम होय।*
वरनत उसे पहाड़-सा ना कछुं झीझक होय॥

आपन वेल समान भी दोष न देखत कोय।
जगका यही स्वभाव है ना देखत नर कोय॥

सुनिये (बीचमें सूत्रधारकी ओर मुख करके) यदि तुम्हारा काम हो गया हो तो तुम जा सकते हो। (सूत्रधार प्रणाम कर चला जाता है)

द्वितीय साधु– अब मैंने निर्मक्षिक कर दिया है। अपना दोष कहनेमें अब कोई ग्लानि नहीं है। अत: आप सावधान हो जायें।

प्रथम साधु– हां हां, मैं सदा सावधान रहता हूं। आप जो कहेंगे वह भी मैं जानता हूं। बेलगाम बकिये जो मनमें आये।

दूसरा साधु– देखिये, जरा गौरसे सुनिये, यह सूत्रधार तो स्वतन्त्रता जब मिली थी उस समयके शासकोंकी कार्यवाहीका ही तो वर्णन कर रहा था। तो आपने नाहक उस बेचारेको डांटा। वह क्या बेजा कर रहा था? अब आप अपनी बात सुनिये! इस जुलूसमें जो गोल फैली है, इसपर गम्भीरतासे विचार कीजिये, किसका दोष है? शान्ति बनाये रखना यही तो पुलिसका प्रधान काम है (डयूटी है)। वही तो उन्होंने किया है। देखिये, हमलोगोंके जुलूसमें तो तुलसीदासजीके रामायणमें शिवजीकी जैसी बरात थी 'जस दुल्लह तस बनी बराता' वैसे ही तो यहां आदमी भरे हैं। भिन्न-भिन्न दिमागके महा उजड्ड उच्छृंखल नागे वैरागी भी है, गृहस्थ भी, चोर लुटेरे बदमाश भी हैं, रईस सेठ भी है, महन्थ, शिक्षित-अशिक्षित, साधु-गृहस्थ सभी प्रकारके लोग हैं। पूरी शिवजीकी बारात है।

उन्होंने दोनों किनारोंपर लगी दुकानोंकी चीजोंको बरबाद कर दी। दुकानें लूटने लगे। सरकारी वस्तुओंको बरबाद करने लगे। जब यह उनकी कार्यवाही– हरक्कत नियन्त्रणसे बाहर हो गयी तो वे लोग विवश होकर अपने उच्चाधिकारियोंकी हुकुमसे आकाशमें फायर करने लगे। वे इस प्रकार अराजक उपद्रवको कैसे सहन करें?

पहला साधु– वाह वाह! आप तो बिना फीस लिये ही सरकारी वकील बने हैं। तो आगे चलिये।

दूसरा साधु– हां, और सुनिये, आपके जुलूसमें आनेवाले कितने महन्त या गृहस्थ हैं जो अपने घरपर गायकी सेवा करते हैं। आप भी तो जानते हैं जैसी यहां गायकी सेवा होती है।

पहला साधु– नहीं मैं नहीं जानता। संक्षेपमें उसे बताइये।

दूसरा साधु– अच्छा तो सुनिये, जब गृहस्थकी गायें या बैल बूढ़े हो जाते हैं तो वह उन्हें कसाईके हाथ बेच देता है। गाय या बैलको वह किसी पेड़में बाँध देता है। कसाई उस जानवरका दाम उसके मित्रके हाथ दे देता है या जमीनपर रख देता

है। किसान उस रुपयेको लेकर गिन लेता है और अपने धर्मात्मापनमें कुछ भी कमी न समझता हुआ घर चला जाता है। कसाई गाय बैल ले जाकर काटता है। यह क्रिया इसलिये की जाती है कि बेचनेवालेने तो कसाईके हाथमें पगहा नहीं दिया, अतः वह उस विक्रय क्रियाका दोषी नहीं, वह निर्दोष है कि नहीं ?

कहिये, ऐसे आदमी आपके इस जुलूसमें शामिल हैं। तो इस आन्दोलन की सफलता तो ईश्वरके ही हाथमें है। ऐसा मैं मानता हूं।

पहला साधु– यहां तो मेरा सिर नीचे गड़ जाता है। मैं कुछ कह नहीं सकता। 'दरिद्रता पातक हाय भारी' यह दरिद्रता भारतको कहां ले जायगी कह नहीं सकता। इसमें बज्र मूर्खता, अन्ध रूढ़ि भी कारण हैं। चलिये, आगे कहिये।

दूसरा साधु– इसी नगरमें कितने द्विजाति गो सेवा करते हैं। आज नगरमें गो सेवा करनी लोहेके चने चबाना है। गौकी दृष्टिसे तथा गौ स्वामीकी दृष्टिसे दोनोंके लिये असम्भव है। न गोके स्वतन्त्र रूपसे घूमनेका स्थान है, न चरने वास्ते कहीं घास है, न खरी-भूसा मिलता है, न बांधने वास्ते कहूं खुली जगह है, न सरकारकी ही इधर दृष्टि है। सरकारकी ही उपेक्षासे ग्राममें सभी सुविधाओंके होते हुए भी गो पालन-पोषणकी शिक्षाका प्रबन्ध सरकारकी ओरसे न होनेके कारण गोसेवा ठीकसे नहीं होती। स्वतन्त्र भारतमें भी गो-संवर्द्धनकी जगह गो-ह्रास दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है; क्योंकि जनता साधारण गोसेवा विधि नहीं जानती। वैज्ञानिक विधिकी कथा तो दूरकी ही है। गौ द्रव्य अमूल्य द्रव्य है। उसकी बडी महिमा शास्त्रोंने गायी है। देखिये –

(इन्द्रवज्रा छन्दमें)– *गो-सेवासे भूपने पुत्र पाया, गो-सेवासे था बली नन्द जाया॥*
गो-सेवा ही गेहमें सौख्य देगा, गो नाही तो भूत ही वास लेगा॥

(वसन्ततिलका छन्दमें) –

गोमूत्र गोमय समान न खाद कोई
गोदुग्ध तुल्य नहि उत्तम भोज्य होई।
गो-आज्य आयु-बल-वृद्धि करे सदैव
गोद्रव्य उत्तम सभी धनमें तथैव॥

नीरोग बालक बने गऊ-मूत्रसे ज्यों
ज्योति बढ़े नयनमें गऊ-मूत्रसे त्यों।
गोमूत्रसे भवनकी गच शुद्धि जानों
गोमूत्र तुल्य नहिं औषध होत मानो॥

हो रोग जो मनुजके त्वक-हड्डियोंके
वे नष्ट हों जनम जन्म शताब्दियोंके।

है पंच गव्य करता तनुशुद्धि वैसे
होवे कुकाठ जलके सब खाक जैसे॥

(शार्दूलविक्रीडित छन्दमें) –

गौवें पुण्य-पवित्र अंग रजसे, गोरोचना आदिसे
हड्डी-चर्म खुरादि सींग सबसे, घीसे-दही-दूधसे।
यों हीं गोमय मूत्रसे सब घड़ी, गोलोमसे पुच्छसे
देखो हैं उपकार वे कर रही, मारो नहीं जानसे॥

हाय! सभी आर्य मर्यादाओंसे शून्य हुए इस स्वतन्त्र भारतमें आज गौका महत्व बताना अरण्य रोदन है, क्योंकि आज धनियोंके घरोंमें तरह-तरहके विलायती कुत्ते पाले-पोसे जाते हैं। यहां गौकी कथा कौन सुनता है?

'यद् यद् आचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः' श्रेष्ठ जन जो जो करते हैं, दूसरे भी वही करते हैं। इस नियमके आज धनयुगमें धनी ही श्रेष्ठ बने हुए हैं। उन्हींकी नकल हो रही है। धनी लक्ष्मीके वाहन उल्लू दिवान्ध प्रसिद्ध ही हैं। इस कारण स्वतन्त्र भारतमें गऊका नाम लेना भी पाप है। उसकी सेवा-शुश्रूषा तो दूरकी बात है।

पहला साधु– हम तो देखते हैं बड़े लोग भी अपने दोषोंको नहीं देखते। खल ही पर यह लांछन क्यों आप लगा रहे हैं? देखिये, दीपके तलेमें ही अन्धेरा रहता है। चन्दनमें सांप लटके रहते हैं, सांप जंगलमें होता है। अघटन घटना-पटीयसी। निर्वचनीय मायाके स्वामी भगवान श्रीकृष्ण क्या कहते हैं–

अपिचेत् सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग् व्यवसितो हि सः॥ (गीता ९/३०)
(भारी पापी भी मुझे सब तजि भजता जाय।
है अच्छा वह आज भी आगे अच्छे पाय॥)

वैसा ही मर्यादा पुरुषोत्तमावतार रामने भी किया है। इस बातको भाषाकवि गोस्वामी तुलसीदासजीने मानस रामायणमें कहा है–

जेहिं अघ वधेउ व्याध जिमि बाली
फिरि सुकण्ठ सोइ कीन्हि कुचाली।
सोइ करतूति विभीषन केरी
सपनेहुं सो न राम हियँ हेरी॥ (बाल का० २९)

वैसै ही आपभी अपने दूधके धोए पश्चिमाभिमुख (पच्छिमकी ओर मुख रखने वाले) शासकोंकी वकालत कर रहे हैं। जो आज भी कृषि प्रधान इस स्वतन्त्र भारतमें

ट्रैक्टर चलानेका स्वप्न देख रहे हैं। उसके प्रचारके लिये चकबन्दी आदि तरह-तरहकी तदवीर तैयार कर रहे हैं। गोवंशको ही इस देशसे उच्छिन्न कर डालना चाहते हैं जो इस देशके लिये असम्भव है। व्यक्ति प्रधान, विविध भाव वेश जाति धर्मवाले, सर्वतः स्वातन्त्र्य प्रेमी, गोभक्त, उष्ण प्रकृतिवाली धराके निवासियोंके लिये पृथ्वी विषघ्न गोखुरसे कृषि उपजेगी, न कि हिमवर्षिणी धराके साधन ट्रैक्टर यहां चलेगा।

देखिये यहांका ईश्वरने क्या कृषि साधन बनाया है—

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)—

की है सृष्टि विचित्र चित्र रचना विप्रादिकी ईशने
गो वंशादि दिये कृषी करनको तेरे लिये श्रीशने।
घी दुग्धादि दही दिये पशु दिये जो खाद देते सदा
दीपृथ्वीतुझकोलतादि तरुजो फूलें फलें सर्वदा॥
ये जो ईश्वर देन है अमृतसे जो लाभ तू लेत है
म्लेच्छोंके षडयन्त्रके वश पड़े हा! द्रव्य तू देत है।
पृथ्वीके विष बैल खूर हनता है जानता तू नहीं
ट्रैक्टर बर्फ-जमीन जोतत सही हा! उष्ण पृथ्वी नहीं॥

(छन्द)— *शासकों पे चढ़े म्लेच्छके भूत हैं लेत यूरोपके पाउडर दूध हैं*
गोविनाशें न देखें कहां जात हैं गो बिना देश पातालको जात है।

ईश्वरने सब प्रकारके पशु ही मनुष्योंके लिये सर्वथा सर्वोपयोगी साधन दिये हैं। विज्ञानके नामपर विरोचनकी देहात्मवादी सन्तानोंने जो आसुरी सम्पदाके पशु विनाशक ट्रैक्टर भूसा यन्त्रादि मशीने निकाली है, इससे भारतका नाश होगा, अभ्युदय नहीं। खासकर कृषि साधन तो इस देशके लिये गोजाति ही है, जिसके बछवे कृषि करते हैं, वछियाँ दूध देती हैं। इसके सात्विक खाद अमृत स्वादके अन्न देते हैं। इनके सम्पर्कसे भूशुद्धि, वायुशुद्धि, मूत्रसे विषैले कीटोंके नाश कितने गुण बतावें! यदि देशको समृद्ध करना है तो ट्रैक्टरादि मशीनोंको बन्द कर मुर्गीपालन, मत्स्यपालनसे बढ़कर गोपालन, आवीपालन, अश्वपालन शासकोंको करना पड़ेगा। पूर्व भारतकी समृद्धि गोवंश पर ही थी। देखिये बाबाजी!

शासकवर्ग निर्वाचनमें मतप्राप्तिके लिये हरिजन और विधर्मियोंपर जितना ध्यान देता है, उतना ध्यान क्या गोजाति और ब्राह्मण जाति पर है? पहलेके राजाओंकी प्रशस्ति ही गोद्विजपालन होती थी। ईश्वरका अवतार गोद्विजधरणीके उद्धारमें होता था। जरा उधर ध्यान दें। केवल झूठी शासकप्रशंसा न करें।

देखिये, कहां प्रत्येक ग्रामोंमें परती जमीन है? जहां गायें या कोई भी मवेशी छूट्टा चर सके? कहां सरकारी गोरक्षिणी है, जहां मवेशी पंगु अनुपयुक्त रखे जाते

हैं? कितने दोष बतायें? जहां दोषके ढेर लगे हैं वहां एक दो कहना व्यर्थ है। देखिये, लौकिक कहावत है–

है स्वभाव सबलोग का ना दीखत निज दोष।
औरोंके दीखत बड़े घुन जैसा भी दोष॥

यहां दो बड़े प्रसिद्ध महात्मा आ रहे हैं जो गोव्रजके रहस्यज्ञ हैं। अत: हमलोग रंगस्थलको छोड़ दें। (दोनों चले जाते हैं परदा गिर जाता है)– इति गोवध विरोधी शोभायात्रा (जुलूस)का प्रथम दृश्य समाप्त हुआ।

भारत राष्ट्रके कृष्ण पक्ष-शुक्ल पक्ष नामक दृश्य : २ द्वितीय

(दो महात्माओंका प्रवेश, स्थान नयी दिल्ली रंगशाला।)

पहला साधु– देखिये! भगवान् भी तो गोवंश, भूमि, धरम, द्विज, देव-रक्षाके निमित्त जगमें अवतार लेते हैं। आज, धर्म गउ विप्र कराहते हैं। क्यों विष्णुदेव वहिरे नहीं सुनते हैं?

गोवंश ही घटत जांत यहां सदा है, क्या हाय भारत-विनाश सही वदा है?
जो आसुरी बढ़ रही सब सम्पदायें ट्रैक्टर वनस्पति घृतादिक आपदायें,

देखिये। सभी शास्त्रोंमें यह बात लिखी है कि जब जब गो, विप्र, धर्म, पर संकट पड़ता है तब तब भगवान पृथ्वी पर अवतार लेकर इनकी रक्षा करते हैं। आज सभी उलटा हो रहा है। स्वतन्त्रता हो जाने पर भारतीय मर्यादा विहीन अपना संविधान बन जाने पर भी देश का अभ्युदय नहीं हो रहा है। रात दिन मार काट, लूट खसोट, दिन दहाड़े हत्याएं, डाकेजनी हो रही हैं। क्या बात है? क्या इसीको स्वतन्त्रता कहते हैं? क्या 'श्रुतौतस्करतास्थिता' इसीका नाम है?

दूसरा साधु– संविधानके स्वरुपको बिना जाने कैसे मैं कह दूं कि भारतीय मर्यादा विरुद्ध यह संविधान है?

पहला साधु– अहो अभी आपको मूल में ही सन्देह है? अच्छा तो सुनिये जिस संविधानका ड्राफ्ट अम्बेडकर (डा० बाबा भीमराव अम्बेडकर)ने तैयार किया और तत्कालीन सभी कांग्रेस सदस्योंने अपने हस्ताक्षरसे उसे प्रकाशित किया है।

"हम भारतके लोग, भारतको एक प्रभुत्वसम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनानेकें लिये, तथा उसके समस्त नागरिकोंको समाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासनाकी स्वतन्त्रता, प्रतिष्ठा और अवसरकी समता प्राप्त करानेके लिये, तथा उन सबमें व्यक्तिकी गरिमा और बन्धुता बढ़ानेके लिये दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभामें आज तारीख २६ नवम्बर १९४९

ई० (मिति मार्गशीर्ष, सप्तमी, संवत् दो हज़ार छ विक्रमी)को एतद्वारा इस संविधानको अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

दूसरा साधु– हां, हां, सचमुच यह तो भारत मर्यादाके विरुद्ध संविधान है। कहां वह प्राचीन संविधान वर्णाश्रम धर्म मर्यादा पर प्रतिष्ठित है। जैसा कि चाणक्यने अपने अर्थशास्त्रमें लिखा है–

व्यवस्थितार्यमर्याद: कृता वर्णाश्रम स्थिति:
त्रय्याहि रक्षितोदेश: प्रसीदति न सीदति॥
दोहा– *(आर्यसुसंस्कृति-भित्ति पर वर्णाश्रमहिदृढ़ाय*
श्रुतिसे शासित देश ही दिनों-दिन लहराय)

कहां यह पाश्चात्य देहात्मवादियोंकी आसुर नीति पर बना संविधान! ऐसी स्थितिमें ईश्वर ही भारतकी रक्षा करें। मैं तो कुछ नहीं कह सकता अस्तु आप अपना कार्य जारी रखें–.

प्रथम साधु– तो महाराज! आर्य संविधानके अनुसार मनुने जो डंकेकी आवाजमें घोषणा की है–

एतद्देश-प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन:
स्वं-स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व:मानवा: (२/२०)
दोहा– *(भारतमें जन्मे हुए, आर्य विप्र ढिग आय*
द्वीप द्वीपके नर सभी निज चरित्र सिख जांय।)

इस मनुक्तिके अनुसार सारे द्वीप द्वीपान्तरोंके जगद्गुरु भारतके २५ पचीस वर्षकी स्वतन्त्रतामें भी भारतीय जनता आज शासकोंकी निन्दा करती हुई चिल्ला रही है।

केवल राज्य कर्मचारी जो मेकालेके मानसपुत्र हैं, तथा कुछ पढ़े लिखे हरिजन और छोटी जातिके मनुष्यमें भी कुछ ही, खुशहाल दीखते हैं। अन्य लोग तो सभी तरह तरहके दु:खों से बेचैन हैं। सर्वत्र अशान्ति फैली है। क्या बात है? विधर्मी अंग्रेजी शासनमें भी ऐसी दुर्दशा नहीं थी।

सभी जगह स्वतन्त्रताके नाम पर उच्छृंखलता बढ़ रही है। छात्र गुरुशिष्य भाव भूलकर पठन पाठनसे विमुख हो तरह तरहके आन्दोलनमें फंसे हैं। अध्यापक अध्यापन में रूचि न लेकर अपने वेतन बढ़ानेके लिये सरकारको आकर्षित करनेका आन्दोलन कर रहे हैं। चोर डाकू लुटेरे दिन दहाड़े लोगोंको मारकर धन लूट रहे हैं। किसीको बाहर निकलने पर सही सलामत घर पर पहुंचनेका विश्वास ही नहीं है। डाकुओंके डरसे दिनमें द्रव्य लेकर चलना रात्रिमें चैनसे सोना यहां दुर्लभ हो रहा है। देशमें विनोद मनोरंजनके बहाने सिनेमाओंका जाल बिछा हुआ है। जिससे कथा पुराणादिके सात्विक मनोरंजनके साधन अब लुप्त होते जा रहे हैं। बाजारोंमें आसुरी देहात्मवादी

देशोंकी लुभावने भोग विलासकी वस्तुएं छा रही हैं। दिनोंदिन जनमानस विदूषित करने वाली वस्तुएं विदेशी विरोचनकी देहात्मवादी सन्तानें भेजती हैं। यहांके मेकालेके मानस पुत्र शासकं आयात कर रहे हैं। कुछ कहा नहीं जा सकता।

देशकी बचीखुची शिष्टाचार मर्य्रादा संस्कृति बहाई जा रही है। पश्चिमी आसुरी सभ्यताके दोषोंका इंजेक्शन सभी विभागोंमें दिया जा रहा है। गुणोंका नहीं। आम काटकर बबूरके बाग सर्वत्र लगाये जा रहे हैं। ईश ही बचावे भारतको मैं क्या कहूं?

एक तरफ राज-करके मारसे दूसरी ओर महंगीकी मारसे जनता कराह रही है। राज कर्मचारियों में घूसका बाजार इतना गर्म है कि शायद ही कोई सरकारी विभाग घूसके लेनदेनसे बचा है। यहां बिना घूस लिये कोई कर्मचारी, क्या छोटा क्या बड़ा, बात ही नहीं करता है। क्या कहें? यह घूसखोरी राक्षसी छूटकर स्वतन्त्र भारतमें नंगे नाच रही है। जिसे देखना हो घुसकर देख ले।

संविधान सभाके सदस्योंकी बात तो पूछिये नहीं। उनमें जो बड़े तपके के मालिक मन्त्रीगण हैं। उनको तो अपनी कुर्सी बचानेसे ही फुरसत नहीं रहती वह क्या राज्य शासन करेंगे? उनके यदि सचिवगण ठीक हैं तब तो कुछ चला करता है नहीं तो सारा कार्य ही कुर्सीकी छीना झपटीमें चौपट रहता है। अन्य लोग जो संविधान सभा आदि के सदस्य हैं वे भी तो उन्हींके पिछलग्गू हैं। कुर्सीकी छीना झपटीमें वे ही तो सहायक हैं। उनके बिना कैसे काम चलेगा। अत: वे सभी मन्त्री, सचिव, सदस्य कुर्सी की छीना झपटीमें बेचैन रहते हैं। नीचेकी कर्मचारीगण तमाशे देखा करते हैं राज्यका कार्य सदा चौपट रहता है।

कोई भी मंत्री या सदस्य अपने निर्वाचन क्षेत्रोंमें, निर्वाचन समयके अतिरिक्त, कहीं जाता नहीं। चाहे उनका निर्वाचन क्षेत्र रसतालको भले चले जाय। हां कहीं बाढ़ तूफान प्रलय हो जाय तो पत्रोंमें वक्तव्य निकालनेके लिये तो पहुंच ही जाते हैं।

निर्वाचनके समय भी यदि आप इनके क्षेत्रोंमें जायं तो आपको चण्डूखानेसे भी अधिक गन्दगी वहां दीख पड़ेगी। कोई सभ्य आदमी तो निर्वाचनमें खड़ा ही नहीं हो सकता। जनतामें यह आम प्रचार है कि जो सबसे भारी गुण्डा होता है वही जीतता है। निर्वाचन भी भारतीय मान मर्यादा शिष्टाचारके लिये बकासुर ही बनकर आया है। मैं अधिक कहना नहीं चाहता। निर्वाचन ने भारतको गर्तमें कर दिया है।

यह तो सब दोष चल ही रहे हैं। इसके ऊपर गाल पर फोड़ेके समान मदिरा राक्षसी इस देशमें घर करती जा रही है जो पुरुषोंसे लेकर स्त्रियों तक व्याप्त हो रही है। पहले मादक द्रव्योंका व्यसन पुरुषों तकही सीमित था। अब तो स्त्रियां

भी बीड़ी सिगरेट मदिरा तककी सेवन कर रहीं है। यही भारत तरक्की जो कर रहा है। आश्चर्य तो यह है कि अपने प्रान्तकी आय वृद्धिके लिये मंत्री भी शारीरिक व्यसनोंकी वृद्धि कारण बताता है। व्यसन वृद्धिका उपाय करता है।

एक मंत्रीकी सूचना निकली थी कि जब नशे पर प्रतिबन्ध लगाया जाता है तो वह घटनेके बदले और बढ़ने लगता है तो क्यों न राज्यकी ओर से इसका व्यापार किया जाय। ऐसी ही उल्टी बुद्धि आजके शासकों की है। आज प्रत्येक प्रान्तमें आय वृद्धिके लिये लाटरी नामका प्रत्यक्ष जुआ खेलाया जा रहा है। कोई भी विरोध करने वाला नहीं है। सर्वत्र अन्ध परम्परा चल रही है। कुछ पूछिये मत।

मैं तो ऐसे मन्त्रियोंसे यही कहा करूंगा कि यदि तुम्हारे में शासन करनेकी योग्यता नहीं है। तुम्हारी आज्ञा प्रजा नहीं मानती तुम्हारेमें आज्ञा पालन करवा लेनेकी शक्ति नहीं है तो कुर्सी छोड़ दें। उस पर बैठकर उसको कलंकित क्यों करतें हैं?

हाय! हाय! इस मदिराके दुकानोंको बन्द करानेके लिये कांग्रेसके नेताओंने आन्दोलन किया था। जहां युधिष्ठिरके जुएके नतीजा दिखाने वास्ते महाभारतसा विस्तृत ग्रन्थ लिखा गया है। आज उन्हींके देशमें सुरा (मदिरा) राक्षसी और द्यूत असुरको ऐसा बढ़ावा दिया जा रहा है। वे प्रत्येक प्रान्तीय राज्य में आज नग्न नृत्य कर रहे हैं।

एक नया रोग भी स्वतन्त्र भारतमें भ्रष्टाचार शब्दसे निकला है। कोई भी वस्तु शुद्ध नहीं मिल सकती। जहां भी जाइये वहां ही मिलावट ही मिलावट दीखता है। पहले दूधमें पानी मिलानेका एकमात्र रोग था। आज तो बाजारमें कोई चीज बिना मिलावटके मिलेगी ही नहीं। वनस्पति घी ने शुद्ध घी को खा ही डाला है। पाउडरके दूधने शुद्ध दूधको खा डाला है। अधिक क्या कहा जांय विषक्रीमी दूधको खा डाला है। अधिक क्या कहा जाय विषक्रीमी न्यायसे ही जीना आज मनुष्योंका जीना है।

दूसरा साधु– अये महाराज! विषक्रीमी न्याय क्या बला है? जरा इस पर भी तो प्रकाश डालें।

प्रथम साधु– इसपर क्या प्रकाश डालना है? विष तो दूसरेको मार डालता है पर जो कीड़ा विषमें ही जन्म लेगा, वह तो वही विष खाकर जीवेगा। वह उसीमें रहेगा। अपनी मौत से मरेगा। उसके लिये विष तो विषय विष नहीं है। देखिये एक भिक्षुकी कथा बड़ी रोचक है। मैं आपको सुनाता हूं। आप हूबहू यही कथा इस शासन में चढ़ा लें।

एक व्यक्ति एक भिक्षुकको मांस खाता देखकर आश्चर्यसे पूछता है–

हे भिक्षो! क्या आप मांस भी खाते हैं (भिक्षो! मांस-निषेवणं प्रकुरुषे?) वह उत्तर देता है। अरे भाई! सिर्फ मांस ही नहीं उसके साथ मदिरा भी रहती है। (किं तेन

मद्यं बिना) वह पूछता है क्या आपको मदिरा भी प्रिय है? (मद्यं चापि तव प्रियम्) वह उत्तर देता है– हाँ भाई! प्रिय है, वेश्याओं के साथ। (प्रियमहो! वारांगनाभिः सह) वह पुनः प्रश्न करता है– वेश्या के लिये तो धन चाहिये आपको धन कहां से आता है (वेश्या द्रव्यरुचिः कुतस्तव धनम्?) वह उत्तर देता है– जुआ खेलने से या चोरी करके लाता हूं। (द्यूतेन चौर्येण वा) वह कहता है अरे! जुआ खेलना और चोरी करना भी आपको प्रिय है (द्यूतं चौर्यमपिप्रियं तव) वह कहता है– अरे मित्र! भ्रष्ट आदमीके लिये और दूसरा क्या रास्ता है? (सखे! भ्रष्टस्य कान्यागतिः) (यह कहकर दोनों खूब हंसते हैं) पहला पुनः बोलता है–

पहला साधु– समझे आप यही कथा आजके शासकोंकी है। सारे कुकर्म करके ये लोग अपनी गद्दीको आबाद रखते हैं। चाहे भारत रसातलको चला जाय। भाई! एक चरण मुझे भी यह पाप लग ही जायगा इसलिए यहां ही समाप्त करता हूं। (कथापि खलुपापानामलमश्रेयसे यतः)

दूसरा साधु– वाह! वाह! विद्वन! आपने हमारे शासकोंका कृष्ण पक्ष तो खूब बखाना है। कुछ भी छोड़ा नहीं है। हां तो मैं भी कहता हूं कि यह उलटकर आप ही पर जाकर गिरता है। क्योंकि, यह प्रजातन्त्र राज्य है। जितने भी दोष आपने शासकोंके गिनाये हैं। वे सभी दोष प्रजाके हैं। प्रजातन्त्रमें प्रजा शासक कहाती है। यह सभी आपका शून्यमें प्रहार करना है। इत्यलम्।

और इनके शुक्लपक्ष भी तो हैं। आप यदि तटस्थ विद्वान् हैं तो इनके शुक्लपक्षको भी बताना ही चाहिये। देखिये– जगतमें शुक्ल और कृष्ण दोनों पक्ष होते ही हैं–

(वसन्ततिलका छन्द)–

की सृष्टि ईश वरने जड़ जंगमों की, जो सर्व दोष गुणयुक्त पदारथोंकी।
हैं साधु दुग्ध गुण हंस समान लेते, जो दोष नीर सम है वह छोड़ देते॥

इसलिये अच्छे लोग तो हंसके समान दोष गुणमें उभयविधि सारसे गुण ही लेते हैं। दोषकी उपेक्षा ही करते हैं। आप भी इनके गुणोंको देखिये दोषको तो छोड़िये। यदि ये दोषी होंगे तो अपने आप विलाय जायेंगे।

हिंस्रजीव निज पाप से आपहि आप विलाय।
साधू आपद नालहे होते ईश सहाय॥

यह प्रभुका अटल नियम है। सुनिये ईश्वरकी रचनामें–

सुधा जहाँ है विषभी रहे वहाँ, जहाँ रहे साधु असाधु भी वहाँ
जहाँ रहे दुःख वहाँ सुसौख्य भी, क्या वारके वाद न होत रात भी?।
व्याधी जहाँ वैद्य रहे वहीं सदा, जहाँ हिमानी गरमी वहीं सदा

शार्दूल होते वनमें शृगाल भी, समुद्र है तो, जगमें पनाल भी॥
हैं देवता दानव भी बसे जहाँ, मनुष्य तो राक्षस भी रहे वहाँ
संजीवनी है अपमृत्यु भी वहाँ, है साथ ही बन्धन मुक्ति भी वहाँ।
है नीच तो ऊँच वहीं रहे सदा, है विघ्न भी और उमंग भी वहाँ
शब्दार्थ है तो शिव शक्ति है जहाँ, है जल-स्थली और मरुस्थली वहाँ॥
आकाश पाताल विरुद्ध है जहाँ माया परब्रह्म विराजते वहाँ
है जीव भी ईश्वर भी विरुद्ध तो, ज्येष्ठा कनिष्ठा रहती विरुद्ध हो।
क्या रंक राजा न कहात हैं यहां, विद्या अविद्या रहती नहीं यहां?
काशी यहाँ मगहर भी यहाँ रहे, सदा यहाँ सज्जन दुष्ट भी रहे॥
रहें कसाई अरु विप्र भी रहें, मरु तथा मालव देश भी रहे
क्या पाप व पुण्य रहे नहीं यहाँ, चैतन्यके साथ जड़त्व है यहाँ।
प्रकाशकी है स्थिति अन्धकारकी, स्थिति यथा कोयल और काककी
मोटा तनू हस्ति पिपीलिका यहाँ, अहं तथा त्वं दुनु शब्द है यहां॥
आकर्ष है साथ विकर्ष भी यहां, गमागमौ भी रहते सदा यहाँ
जहां बसें क्रोध वहाँ बसै क्षमा, कुबेरदिग्दक्षिण पूर्वपच्छिमा।
दांया यहाँ वाम विभाग है यथा, निमेषउन्मेष विराजते तथा,
रवी शशी युग्म पदार्थ है सदा, है विश्वमें द्वन्द्व विराजता सदा,
स्त्रीपुंस दोनों उलटे बने सही मैं क्या कहूं ईश चमत्कृती यही॥

ऐसी स्थितिमें कृष्ण पक्ष जब आप गा गये तो शुक्ल पक्ष भी आप गायें। नहीं गाना है तो धैर्यके साथ मुझसे सुनिये।

यद्यपि ये लोग मैकालेके मानस पुत्र बने हैं। सभी भारतीय रत्नोंको ये पश्चिमके चश्मेसे ही देखते हैं। तो भी— भारतकी स्वतन्त्रता इन्हीं लोगोंने ली है। इनका हक है कि ये भारतके शासक बने रहे। ये जैसा चाहें वैसा करें आप इनकी समालोचना नहीं कर सकते। केवल तटस्थ होकर देखिये।

और भी विचार कर देखें बड़े तेजस्वी अग्निदेव भी पहले कडुवा धूंआँ देते हैं। तब लोग व्याघ्रसींध ऐसे खूंखार जन्तुओंसे भी नहीं डरते हैं, जब तक उनके सामने अग्निदेव जला करते हैं। प्रसिद्ध समुद्र मन्थनमें भी पहले विष ही निकला था। बादको अमृत निकला है। यही कथा प्रसिद्ध है।

गुलाम बने भारतमें जो एकाएक स्वतन्त्रता मिली तो सारे गुलामीके दोष उभर पड़े। उसीमें इन मेकालेके मानस पुत्रोंमें जो आसुरी प्रवृत्तिके थे उन्होंने तपे घीमें जल पातका काम किया, जिससे आग निकल रही है। सभी ऐसे नहीं हैं। प्रथम श्रेणीके सभी नेताओंने बहुत संभाला है। यहाँ जो जो दोष आपने गिनाये हैं। वे

सभी गुलाम पूजाके ही तो हैं। ये दोष तो स्वयं सदाचार के उदय होते ही जुगनूके समान विलीन हो जायेंगे। जब जनतामें परात्मा स्वात्माकी एकात्मताका भाव फैलेगा तब सारी चीजें शुद्ध ही मिलेंगी।

सभी लोग आपसमें भाई भाईका व्यवहार करेंगे। आपन विरानका भाव ही नहीं रहेगा। चोर डाकू लुटेरे प्रभृति सर्प बिलमें विलीन हो जायेंगे। 'श्रुतौ तस्करता स्थिता' के समान दोषोंकी कोरी कहानी रह जायगी। वस्तुके मिलावट करने वाले उल्लू पेड़ोंके खोखलेमें छिप जायेंगे।

फिर पहलेका गुरु शिष्य भाव छात्रोंमें जागेगा। भारत पुनः जगत्का गुरु बनेगा। जब भारतमें आर्य-शिक्षाकी आंधी चलेगी तो पश्चिमी प्रच्छन्नवित्ताहरण, स्त्री शूद्र कल्पनकी (स्त्रियों तथा गवारों को ठगना, इत्यादि) धूलियाँ उड़ जायगी। ब्राह्मणोंके सदुपदेश रूप वृष्टि से सारे, वैगुण्य जो आज दीख रहे हैं ये सभी कूड़े करकट बह जायेंगे। यह निश्चय जाने। इत्यलम्। सुनें। (वसन्ततिलका छन्दमें) –

श्रीईशने जब किया इस देशका है,
उद्धार आप बृटिशाधिप चंगुलों से।
जो होत रक्षक यहां द्विज गोधनोंके
वे ही बचाव करते सब आपदोंसे॥

हृदय पर हाथ रखकर आप ही बतावें कि भारतको स्वतन्त्रता देते समय शासक अंग्रेज धूर्तों ने जैसे बाहर पाकिस्तानकी और अन्दर तीखी तलवारमें दृढ़ राजवली राजे-रजवाड़े रूपी दीवाल खड़ी कर दी थी जिसे महानीतिज्ञ लौह पुरुष श्री बल्लभ भाई पटेलने जड़ से उखाड़ फेंका और भारी परस्पर गृह युद्ध रूप संकटसे भारतको मुक्त कर दिया। यह क्या आप इन महापुरुषोंकी कम बुद्धिमत्ता समझते हैं?

दूसरी ईश्वरेच्छाविरुद्ध भारत पाकिस्तान कल्पनारुप भारी आपदा तो

'हिंम्रःस्वपापेन विहिंसितः खलः, साधुः समत्वेन भयात् प्रमुच्यते'
(हिंम्रजीव निज पाप से आपहि आप विलाय, साधु आपद ना लहे होवे ईश सहाय)

इस नियमसे स्वयं अपने आप विलीन हो रहे हैं और हो जायेंगे। इन्होंने स्वराज्य प्राप्तिमें कुछ भी सहायता नहीं दी। प्रत्युत वाधक ही बने रहे हैं। आज भी पद पद पर अड़ंगा लगाते रहते हैं। यह तो आर्यों की उदारताका वेजा फायदा उठाते रहते हैं।

देखिये गौरांग प्रभुओं की यह बड़ी भारी अभिसन्धि (षडयन्त्र) थी कि, भारत बराबर हमारे अधीन रहेगा। इसी कारण उन्होंने पंगु प्राय स्वराज्य दिया था। तो भी राजनीति मर्मज्ञ तात्कालीन नेताओंने भारतीय बुद्धिबलसे उनके षडयन्त्रको व्यर्थ

कर दिया और आज २५ वर्ष तक भारतकी स्वतन्त्रताको बचा लिया। इसी बीच महाउपद्रवी मधु और कैटभ रूपी चीन और पाकिस्तानके आक्रमणोंको भी इन्होंने विफल ही नहीं किया बल्कि उन दोनोंकी ऐसी दम तोड़ी कि उठ नहीं सकते।

इतना ही आप बहुत समझें कि ऐसी विघ्न बाधाओंके रहते पच्चीस वर्ष तक भारतको बढ़ाया नहीं तो घटाया भी नहीं है।

और तीन-चार पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा इन लोगोंने मार्गप्रशस्ति, आवश्यक वस्तु निर्माण, नहर योजना, वृक्षारोपणादि समृद्धशाली कार्योंसे भारतको बहुत ही उन्नत किया है। आप इनके शुक्ल पक्षको भी देखिये। इसलिये ये प्रशंसाके पात्र भी हैं। केवल गर्हणीय (निन्दाके पात्र ही) नहीं है। अच्छे बुरे सभी जगह होते हैं। यह तो लम्बी पद्यावली में मैंने गिना ही दिया है। यों तो—

(उपजाति १२) *होती यहाँ प्रावृटकालमें महा वृष्टी अनावृष्टि कभी स्वभावसे*
चूहे कृमी या शलभें कृषि चरें तोते कभी खेत चुगें स्वभावसे।
राजें लड़े तो कृषि कर्म नाश हो रहे छवो ईति यहाँ स्वभावसे
विशाल है भारत देश ही जहाँ नेता करें क्या तब वे स्वभावसे॥

इस प्रकार भारतकी प्रसिद्ध छः इतियाँ इनके हाथमें तो नहीं है। वे बीचमें देशको तबाहकर डालती है। तो भी तो ये लोग प्रकृतिको भी स्वाधीन करनेका भरसक प्रयत्न करते ही हैं। यह बात दूसरी है कि इन बातोंमें ये यूरोपको गुरु बनाये हुए हैं। इन्हें भारतकी प्रकृतिके अनुरुप प्रयोगोंको काममें लाना चाहिए। खासकर कृषिमें तो शिव वाहनोंकी वृद्धि करनी चाहिए। ट्रैक्टरादि पशुघाती यन्त्रोंको भारतमें फटकने नहीं देना चाहिए। उनका प्रवेश निषिद्ध कर वैज्ञानिक दृष्टिसे गोवंशकी वृद्धि करनी चाहिए। वनस्पति घी पाउडर दूधोंका कत्तई आयात रोककर स्त्री जातिको पशुओंका सर्वथा संवर्द्धन करना चाहिए।

देखिये हमलोगोंने बहुत समय ले लिया है। अब राजा दिलीपके लिए सपत्नीक गोभक्तिकी पुण्य स्मृति करानेके दृश्यके लिये रंगमंच छोड़ देना चाहिये। (दोनों निकल जाते हैं। यवनिका पातसे दृश्य समाप्त है) द्वितीय दृश्य समाप्त।

दिलीप राजाकी गोभक्ति नामक दृश्य : ३ तृतीय

(स्थान :— वशिष्ठ मुनिका आश्रम। वहाँ दूसरे जन्ममें देहधारी राजा दिलीप और उनकी धर्मपत्नी सुदक्षिणा दोनों (दम्पति) राजा वेशमें महाराजा दिलीप हैं। महारानी वेशमें रानी सुदक्षिणा बात करती हैं। महारानी सुदक्षिणा बोलती हैं)

सुदक्षिणा— आर्यपुत्र! पूर्व जन्ममें हमलोग सन्तानके निमित्त जब गुरु वशिष्ठजीके आश्रम पर गये थे तो उन्होंने सन्तति निरोधके सम्बन्धमें क्या बातें कहीं थी? यदि

आपको स्मरण हो तो मुझे सुनाइये चित्त सुननेको उत्कण्ठित है। मुझे स्मृति नहीं है। शायद आपके साथ बातचीतमें स्मृति जग भी जाय।

राजा दिलीप– अयि सौभाग्यवति! गुरुदेव ने सब स्पष्ट बताया था। वे सब मुझे वैसे ही याद हैं।

सुदक्षिणा– तो किस दिनके लिये छिपाये बैठे हैं? सुनाइये सब!

राजा– तो आप सावधान हो जायं। उनकी कही बातोंको ही मैं इस जन्ममें कालिदासके रघुवंशकाव्यमें पढ़ चुका हूँ। गुरु कृपासे याद भी है। वे ही सब अनुवाद रूपमें सुनाता चलूंगा। मुझको गो महिमा वर्णनसे पुण्य भी प्राप्त होगा। सुनिये– गुरुदेव तो मेरी प्रार्थना सुनकर क्षण भर सोई मछली वाले तालाबके समान मौन रहकर बोले– देखो राजन्

अमरावत पुरसे जभी लौटे थे तू गेह
बीच मार्ग सुरभी रही तरुतल निःसन्देह।
ऋतुस्नानभय तू चले जाते गृहिणी पास
दहिने गो को ना किये जाकर उसके पास॥

सुदक्षिणा– ऐसी बात है? अच्छा तो आगे–

राजा– इसके बाद गुरुदेवने सुरभीकी पुकार और उसके न सुननेसे जो उसने शाप दिया उन दोनोंके न सुननेके कारणको जो सब कहा था। वह मैं कालिदासके पद्यानुवादसे कहता हूँ। सुनिये ये सावधानी से–

कर मेरा अपमान तू जो घर जावो तात!
मेरी सन्तति विनु कृपा तुझे न बच्चा प्राप्त।
बन-हाथी चिंघाड़ व झरनेके झंकार
वहां सुनाई ना पड़ा गउकी तुझे पुकार॥

सुदक्षिणा– हाय! बहुत कठोर शाप है। न सुननेका कारण भी वैसा ही कठोर है। अच्छा तो आगे गुरुदेवने क्या कहा?

राजा– गुरुजीने कहा कि सुरभी तो इस समय बिल्कुल अलभ्य है। हां उसकी सन्तति नन्दिनीकी सेवा कर आप अपना अभीष्ट सिद्ध कर सकते हैं।

सुदक्षिणा– वाह! गुरुदेवका कितना प्रेम हमलोगों पर है। अच्छा तो आगेकी उनकी आज्ञा आप बतावें।

राजा– सुनिये महारानी! ये बातें गुरुजी धीरे-धीरे कर ही रहे थे कि, वहीं नन्दिनी वनसे घास चरकर घरको लौटनेके निमित्त आश्रम पर आ गयी। गुरुजी प्रसन्न मुद्रामें बोले– (वशिष्ठ जी अपटीक्षेपसे उपस्थित होकर)

वशिष्ठ जी– (सामने गाय दिखाकर) (गाय एक सामने खड़ी रहे)

सिद्ध मनोरथ हो गया राजन् जानें आप
आश्रम आकर नन्दिनी आप हि आप लखाय।
आप सपत्निक सेइये इसके शुद्ध सुझाव
हुई प्रसन्न दिया नहीं बच्चा शुद्ध सुभाव॥

सुदक्षिणा– आर्य पुत्र! इसकी सेवा किस प्रकार करनेको गुरुजीने कहा था यह भी तो बतावें।

राजा– अयि सुभगे! वही तो क्रमशः कह रहा हूं। अधीर क्यों हो रही हो। सुनो गुरुदेव ने कहा–

वशिष्ठजी– *दोनों मुनि की वृत्ति लें राजा रानी आप*
विद्या सेवे छात्र जिमी गो सेवेगें आप।
चलने पर चलते रहे बैठी तो (तब) बैठान
खाने पर भोजन करें पीने पर जलपान॥

सुदक्षिणा– मेरे लिये भी कुछ विशेष सेवा है?

राजा– आप उत्सुकताके कारण क्रम भी तोड़े देती हैं। मैं तो क्रमसे कहता ही जा रहा हूं। (यहां भी वशिष्ठजी पूर्ववत् खड़े होकर)

वशिष्ठजी– *प्रातः सायं भक्तिसे गोपूजनके साथ*
रानीजी भी आप ही आप बढ़ावें हाथ।
बन जाते आते सदा कछू दूर वह जायँ
आने में पीछा करें आते घर ले जायँ॥
रात राख छीटी धरा तले सुलावें गाय
गला पीठ सुहलायके बाद आप सो जायं॥

(वशिष्ठजीके चले जाने पर राजाजी पुनः सुदक्षिणासे बोलते हैं)

राजा– कहिये गोभक्ति शालिनी! अब आपको सन्तोष हुआ। गुरुदेवने ऐसा ही हम दोनोंको गो सेवाका उपदेश किया था। बादमें हम दोनोंने राजधानीमें आकर, मन्त्रियोंपर राज्य भार छोड़कर, पुनः गुरुके आश्रम पर जाकर गो सेवा द्वारा अपना मनोरथ सिद्ध किया है। यही तो उस जन्मकी स्मृति मुझे पूरी याद है।

सुदक्षिणा– आर्य पुत्र! आपकी स्मृतिने आज अकथनीय आनन्द मुझे प्रदान किया है। एतदर्थ आपको भूरिशः धन्यवाद । चलिये अब विश्राम किजीए। (दोनों चले जाते हैं। यवनिका पतनसे दृश्य समाप्ति) तृतीय दृश्य समाप्त।

नृप दिलीप-देहाहुतिका दृश्य : ४ चतुर्थ

(पूर्व कल्पमें वशिष्ठमुनिके आश्रम पर नन्दिनी गायकी सेवा करनेसे सन्तान सुखको प्राप्त करने वाले दम्पति सुदक्षिणा और राजा दिलीप दूसरे कल्पमें उसका नाटक कर रहे हैं। उनमें राज महिषी सुदक्षिणाको पूर्व जन्मकी बातें याद आ गयी हैं। अतः इस जन्ममें उसका अनुमनन करनेकी इच्छासे नृप दिलीपसे पहले प्रस्ताव करती है)

सुदक्षिणा– आर्य पुत्र ! हमलोग दूसरे जन्ममें आकर महाकवि कालिदासके महाकाव्य रघुवंश पढ़कर यद्यपि सभी बातें जानते हैं। पर लोगोंमें गो भक्तिके प्रचारकी दृष्टिसे उसके दूसरे सर्गके दृश्यका अभिनय करना मैं अभी चाहती हूँ।

राजा दिलीप– साधु प्रिये! साधु! आपने अच्छा सोचा है। आज श्रद्धा भक्ति शून्य, गोवंशकी उपेक्षा करने वाले, अच्छे कार्योंसे ही मुख मोड़ने वाले, लोगों में कुछ भी तो गऊके **प्रति** आदर भाव अंकुरित होता है।

सुदक्षिणा– तो आप मेरा भाव स्पष्ट सुन लें। इस अभिनयमें भूमिका-रूपसे आपको और मुझे जो पक्ष (पार्ट) अदा करना है। सिंहकी उक्तियोंको मैं कहूंगी। आप अपनी उक्तियोंको कहेंगे। अनुवादमें स्वोक्तिको कवियोंने स्थान दिया ही है। सुनिये–

इन्द्रवज्रा–
सिंहोक्तिको मैं कहती चलूंगी
हाँ आपकी उक्ति भली सुनूंगी
होता नहीं दोष अनूक्तिमें जो
ऐसा बड़ोंने सबने कहा जो।

राजा– हां हां आपने ठीक कहा। मैं अपनी उक्ति कहूंगा। आप सिंहकी उक्ति कहा करेंगी। इसलिये २१ इक्कीस दिन तक जब मैं नंदिनी गायकी सेवा कर चुका तब २२ बाइसवें दिन यह सोचकर कि यह तो ऋषिकी सुरभी गाय है। इस पर हिंसक जानवर सिंह व्याघ्र क्या आक्रमण कर सकते हैं, पर्वतकी शोभा छटा देखने लगा। तब तक एकाएक गऊका पुकार सुना।

सुदक्षिणा– हाय! हाय! बड़ा आश्चर्य, बड़ा आश्चर्य, तब क्या हुआ, तब क्या हुआ ?

राजा– तभी मैं दौड़कर गायको देखता हूँ तो उसके पीठ पर सिंहको सवार देखा। देखते ही मैंने झट तरकससे खींचकर बाण छोड़ना चाहा त्योंही,

सुदक्षिणा– बस बस मुझे याद आगया। त्योंही तूणीर में फंसी अंगुली वाले आपसे

डांटकर सिंहने मनुष्य वाणीमें कहा –

सर्गोपजाति १२ – *अलं महीपाल! वृथा करो नहीं प्रयत्न तेरा चलता यहां नहीं।*
जो पेड-उत्खात करें प्रभंजना क्या पर्वतोंका करता प्रभंजना?॥

इसलिये – *लज्जा छोड़ भगें वशिष्ठ गुरुके, ही पास जावें अभी*
ना होगा कछु दोष आप नृप को, ना दोष होता कभी।
ना हो शक्ति बचावमें निज लिये सत्कार्यके भी जभी
क्या आये कह दें भला कुछ बचा मेरे कहे में अभी॥

राजा – अहा! प्रिया मुखसे निकला यह सिंहका वचन मुझे तो अमृतसा लग रहा है। सुनिये उस उत्तरको जो मैंने उस समय कहा था।

वसन्ततिलका १४ –

मेरा प्रभाव नहि है चलता अभी जो, तेरा प्रभाव प्रभुता बढ़ता सभी जो।
प्रार्थी कहें हम सुनें, जब आप भी तो, हैं भृत्य देव शिवके जब आपभी तो॥
इसलिये – *गो हेतु देखो यह देह मेरी खावो कहूँ मैं यह भीख तेरी।*
वत्सोत्सुका गाय बचे ऋषीका है भी भलाई इसमें सभीका॥

सुदक्षिणा – तब आपको प्रलोभन देता हुआ सिंह कहता है – अये राजन्! देखो विचार करो –

हो एक छत्र नृप! राज्यधरा बड़ी है, है देह भी नव वया खुबसूरती है।
तू नाश हेतु इसके अब जो खड़ा है मेरा विवेक कहता तुम ना बड़ा है॥
जो तू हजार गउ दे सकते ऋषीको ऐसा सुपास मिलता कहवाँ किसीको,
रक्षा करो निज शरीर यही कहूंगा तेरा विनाश नहि मैं कबहूँ करुँगा।
है श्रेष्ठ इन्द्र पदसे यह राज्य तेरा तू जानता यह नहीं भल तर्क मेरा॥

सिंहके ऐसा कहने पर बड़े जोशमें आकर जो आपने कहा था सो अब कहिये।

राजा – एहो! वन-राज शार्दूल! यह आप क्या कह रहे हैं? सुनिये –

जो तो बचाता जग नाशसे है क्षत्री कहाता जग जानता है
हो सामने नाश भला उसीके देखा सुना क्या यह है किसी के

इसलिये –

खावो मुझे गाय बचे ऋषीकी ना मैं सुनूं बात यहाँ किसीकी
कीर्ति बड़ी मैं कहता तुझीसे मैं दे रहा देह यहाँ खुशीसे।
जल्दी कृपा अब करो करनी तुझे है तेरी कृपा भल अभीष्ट यहाँ मुझे है
भारी विचार तुझको करना यहाँ है, भक्षक भोज्य सम्बन्ध हम तूममे है।

ऐसा कहकर राजा अपनी देहको मांस पिण्डसा बनाकर बैठ जाता है। सिंहकी उलांचकी प्रतीक्षा करता ही है कि सिंह गाय छोड़कर भाग जाता है। गाय राजाको जीभसे चाटने लगती है। सुदक्षिणा वगैरह फूलकी वृष्टि करते हैं।

राजा– (ऊठकर उपजाति छन्दमें बोलता है कि) प्रिये! मैं तो बिल्कुल ही भूल गया कि यह अभिनय है– क्या आपभी भूल गयीं थीं ?

अहो यहां मैं कतई भुला गया गोभक्ति के बीच पड़े बहा गया
रही नहीं नाटककी मुझे स्मृति प्रिये रही क्यों नहीं तुझे स्मृति॥

सुदक्षिणा– *मैं भी भूल गयी रही न मुझको है नाटकी सत्कथा*
सच्ची मान गये यहाँ हम सभी गोभक्तिकी सत्कथा।
जो हो सिद्ध हुए मनोरथ सभी गोभक्तिके आपकी
जो गोभक्ति सदा यहां चल रही प्राची महाराष्ट्रकी॥

जो हो, गोरक्षाके निमित्त आपने विश्व व्याप्त अपने साम्राज्यको जो इन्द्रपदसे भी बड़ा है छोड़कर अपनी देहकी आहुति दे डाली थी जिसके लिये चकित होकर सिंह गाय छोड़कर भाग गया। देवताओंने फूलकी वृष्टि की अब पुनः अपनी पट्टरानीकी पुष्पवृष्टि लें। (यह कहकर महारानी पुष्प वृष्टि करती हैं। कुछ लोग गौको फूल माला पहना रहे हैं। बाहर लोग राजा दिलीपकी जय घोषणा उँचे स्वरमें कर रहे हैं। इसी बीच अपटीक्षेप द्वारा ब्रह्मचारी मंच पर आकर बोलते हैं)

ब्रह्मचारी– (सभाभिमुख होकर) हे सभासदों सोचनेकी बात है कि जहां एक गायके लिये भारतके चक्रवर्ती सम्राट महाराजा दिलीप अपनी देहकी आहुति कर रहे हों। जहाँ पर ईश्वरकी वन्दनामें 'गो ब्राह्मणकी रक्षा करने वाले आप हैं'। ऐसी स्तुति की जाती है।

देखिये– (अतिवसन्ततिलका का छन्द)

जो विप्र वंश गउवंश बचावके लिये
लेते यहाँ जनम भक्त बचावके लिये।
वे कृष्णदेव सबको शुभ बुद्धि दें सदा
हो मुक्त बन्धन गऊ चरते रहें सदा॥

और इसी गोजाति और ब्राह्मण जातिके आधारसे भारत राष्ट्रका अभ्युत्थान आज तक होता आ रहा है। हा! हा! आज स्वतन्त्र भारतमें भी अगणित हो रही हैं गोहत्याएं और शासक कान में तेल डालकर सो रहे हैं। गोवध रोकनेके आन्दोलनकी उपेक्षा करते हैं। यों ही ब्राह्मण जातिका निरादर करते हैं।

हां, मैं निराश होकर, जैसे गजेन्द्र ने सबतरहसे निराश होकर, निर्विशेष भगवानको पुकारा था, कौरव सभामें सर्वथा निराश द्रौपदीने गोविन्द द्वारिकावासीको पुकारा था, वैसा ही मैं आज गो ब्राह्मण जातिकी रक्षाके लिये गोद्विज रक्षा व्रती दीनानाथ जनरक्षक अशरण शरण भगवानको पुकारता हूं। वही अपनी असहाय गो व द्विज जातिकी रक्षा आज मेकालेके मानस पुत्रों की चंगुलसे करें–

हरे! विष्णो! क्यों हा! बहिर बनके बैठ रहते
सुनें ना गौओंकी द्विजवर जनोंको विलपते।
चरें गौएँ छूटी चरन थल हो ग्राम सब में
करें श्रद्धा भक्ती सबजन गऊ विप्रगण में।
गऊकी ही रक्षा सब कहत हैं राष्ट्ररखना
गऊकी संवृद्धि सब कहत हैं राष्ट्रफलना॥
न भोज्योंकी चिन्ता रहत घर जो गाय अपना
तथा कोई भी तो नहि दिखत है रोग सपना॥

ऐसी ही गोकी महिमा है। जहां गायें रहती हैं। वहां कभी भोज्यकी चिन्ता नहीं होती तथा रोगका कोई भय नहीं होता है। (यों ही ब्रह्मचारी सब लोगोंको उपदेश देकर चला जाता है व परदा गिराकर दृश्य समाप्ति होती है) इति नृप दिलीप देहाहुति चतुर्थ दृश्य समाप्त। प्रथमांक समाप्त।

अथ द्वितीय अंक २

गो महिमा प्रकाश दृश्य : ५ पंचम

(हिमालयकी घाटी स्थान है। वहां राजर्षि वेशमें राजर्षि प्रियव्रत और देवर्षि वेशमें देवर्षि नारदजी प्रवेश कर भारत राष्ट्रके रंगमंच पर टहलते हुए परस्पर बातें कर रहे हैं।) पहले राजर्षि प्रियव्रत बोलते हैं–

प्रियव्रतः– देवर्षि:! यह पृथ्वीका कौनसा भाग है? जहाँ हमलोग विमानसे उतरे हैं? मैंने पहले पृथ्वीके सात हिस्से करके १-जम्बू, २-प्लक्ष, ३-शाल्मलि, ४-कुश, ५-क्रोंच, ६-शाक, ७-पुष्कर नामके सातों द्वीपोंके क्रमशः अपने १-आग्नीध्र, २-इध्मजिह्व, ३-यज्ञवाहु, ४-हिरण्यरेता, ५-धृतपृष्ठ, ६-मेधातिथि, ७-वीतिहोत्र नामके सातों पुत्रोंको अधिपति बनाया था। उन्होंने अपने अपने द्वीपोंकी रक्षा बड़ी तत्परतासे की थी। उन्हींमें पीछे आग्नीध्रनामके मेरे पुत्र ने जो जम्बू द्वीपके अधिपति थे। अप्सरा रुपसे अवतीर्ण हुई पूर्वचित्ति नामकी अपनी धर्मपत्नीमें नव सन्तान (पुत्र) उत्पन्न किये। जिनके क्रमशः नाभि, किम्पुरुष, हरिवर्ष, इलावृत्त, हिरण्मय्, रम्यक, कुरु, भद्राश्व, केलुमाल ये नव भिन्न-भिन्न नाम थे। वे नवो माता अप्सराके प्रभावसे बड़े बली दृढ़-गात्री सुन्दर थे।

उन नवो ने अपने अपने नामके अनुरुप नव वर्ष बनाकर पिताके द्वारा दिये गये नवो बर्षोंमें अपने अपने नामके वर्षका शासन किया। उनमें यह कौन वर्ष है? मुझे पता नहीं चल रहा है?

नारदः– प्रजापति मनु ही भरण पोषण करनेके कारण भरत कहे जाते हैं। अज ब्रह्माके नाभिसे उत्पन्न होनेके कारण उन्हें अजनाभ भी कहते हैं। अतः पहले इसका नाम अजनाभ भारत था। यह नाम तुम्हारे पौत्र नाभि तक चला व उनके बाद तक भी चलता था। उनके पौत्र भरतके बाद इसका केवल भारत नाम रह गया है। वही भारत वर्ष है। जहां हम आप हिमालयकी घाटीमें विमानसे उतरें हैं।

प्रियव्रतः– अहो! यह भारत-वर्ष नामका वर्ष है? अहो यहतो ज्ञात ही नहीं होता है कि किसी क्षत्रिय राजर्षिसे शासित यह देश है? गुप्तचरके कथनानुसार ज्ञात हुआ है कि यहां गो जातिकी बड़ी दुर्दशा है। यहां तक कि गोहत्या तक यहां होती है। हा! हा! कहाँ हम आ गये? भारतमें माताका वध? यह क्या मैंने सुन लिया?

हमने तो प्रजाओंके जीवनके साधनोंके विभागोंमें कृषि-गो-रक्ष्य विभाग, वाणिज्य विभाग, कोशपरिपालनम्, गोब्राह्मण परित्राणम् इनके अतिरिक्त गोधन विभाग भी, एक पृथक् पशु जातिके नाम पर विभाग ही, खोल रखा था।

जिस विभाग द्वारा प्रति राज्य-प्रान्तमें प्रतिनगर-पुर में, व ग्राममें गोशालाएं रहती थी। गोचर भूमि छूटी रहती थी। गोचर्मशालाएं, कृषि साधनशालाएं, गोसंवर्द्धन शालाएं, गोरक्षिणी शालाएं, राज्यकी ओरसे स्थापित थी। ये सारे विभाग प्रधान मन्त्रीके अन्दर सञ्चालित होते थे। किसानोंको अनुदान देनेकी व्यवस्था थी। प्रत्येक वर्षमें प्रति पांच गावोंके पीछे गो प्रदर्शनी लगती थी। अच्छे गोवृषभों, गायोंके लिये पुरस्कारका प्रबन्ध था। अपंग पंगु, रुग्ण, वृद्ध, पशुओंके रक्षणार्थ गोरक्षिणियां सरकार चलाती थी। खाद-संग्रह शालाएं थी। चर्माम्बर शालाएं आदि सरकारी कर्मचारी चलाते थे। पशु-संवर्द्धन विभागोंके ही गोमेध, अश्वमेध, आवीमेध इत्यादि वैदिक नाम रखे गये थे।

हाय! हाय! आज तो यहां ये सब कुछ भी नहीं दीख रहे हैं। क्या यह भारत वर्ष है? या कोई क्रव्यार्ष है। हम लोग भूल कर उतर गये हैं। मैं स्तब्ध हूं। मेरा माथा घूम रहा है। वाणी नहीं निकलती, (पकड़िये पकड़िये कहते कहते मूर्च्छित हो जाते हैं।) नारदजी पंखा करने लगते हैं। होश होने पर जलसे मुख धोनेको कहते हैं। शान्त होने पर नारद जी धैर्य दिलाते हैं।

नारद – राजर्षि प्रवर धैर्य धरें। धैर्य धरें। ये सब विधिके विधान हैं। अपनेको अधीर न करें। विधिकी नियतिको कौन अन्यथा कर सकता है? मैं गो सम्बन्धी एक कथा आपको सुनाता हूं, उससे आपको कुछ शान्ति तो मिले ही। सावधान हो जाइये।

राधेय कर्ण परशुधर रामके यहां,
शास्त्रास्त्र वेद पढ़ने छिपके गये जहां,
अभ्यासके समय चूक गये सुयोगमें
झूठा प्रहार कर गाय बधी अबोधमें।

वह गाय किसी तपोनिष्ठ ब्राह्मण देवकी थी। वे विप्रदेव, ज्योंही गायका वध कर्ण राजाने अज्ञानेमें ही भूलकर कर डाला है, और वहां गायके पास बैठे रो रहे हैं, कलप रहे हैं, आपका दर्शन चाहते हैं, ऐसा सुना कि आग बबूला होकर वहां आ गये। उनके वहां आने पर जो घटना हुई, सो उन दोनोंके शब्दोंमें ही आप सुनें। अतः हम दोनों दर्शक बन जायें (यह कहकर वे लौट कर दर्शकोंमें आ जाते हैं। कर्ण रंगस्थल पर मरी गायके पास बैठकर पुकार पुकारके रो रहे हैं वहां विप्रदेव खड़े होकर डांट रहे हैं। दोनोंमें यों बातें होती हैं)

विप्रदेव – (कर्णको मरी गाय दिखाकर) रे रे महापापिन्! तूने यह क्या कर डाला? मेरी गाय मार डाली – अरे! पापिन्! दुष्ट नादान!

अरे दुष्ट! तूने किया पाप भारी। बूढ़ी गाय मेरी अरे! मार डाली।
यही दण्ड तेरा तुझे मार डालूं। नहीं, क्यों मैं पापमें हाथ डालूं।

(कर्ण विप्रके पैर पर माथा रखकर हाथ जोड़े मनाते हैं। वह तो डांटते ही जा रहे हैं, कुछ सुनते ही नहीं हैं। अन्तमें क्रोधमें ही कर्णको शाप दे देते हैं) अरे दुष्ट! तूने यहां गाय जैसे वधा है। महायुद्धके बीच वैसे वधेगा तुझे तेरा शत्रु। तू भी मरेगा। मेरा यही शाप तुझे जा फलेगा। (इसके बाद कर्ण जलसे मुहं धोकर विप्रके सामने खड़े होकर अपराध क्षमा करानेके लिये बोलते हैं) पहले पैर पड़े पड़े बोलेंगें बाद में उठ कर भी)

महाराज! स्वामिन्! भ्रम वश हुई गल्ति मुझसे
कृपा मेरे खातीर बस अब करें नाथ दिलसे।
यही मेरी विन्ती चरण पर सर्वस्व तज दूं
कहें मैं गायोंका शत शत महादान कर दूँ॥
कहें आप आधा तजूँ राज्य सारा, करूँ दासता आपकी जन्म सारा
मुझे हाँ!, उधारे तपस्या करावें सहस्त्रों गऊ ब्राह्मणोंको दिलावें

(इस पर ब्राह्मणदेव और अत्यन्त क्रुद्ध होकर लात पृथ्वी पर जोरसे पटककर उछलकर बोलते हैं)

विप्र–

अरे क्या यहाँ तू लुभाता मुझे है, न हूं विप्र लोभी न लज्जा तुझे है।
जरो वा मरो नाक घिस्सो दिनों तू यहाँ बात ना तोर लागी सुनों तूं।

(यह कहकर अत्यन्त क्रुद्ध ब्राह्मण क्रोधावस्थामें ही चला जाता है। कर्ण उठकर विलाप कर रहे हैं)

कर्ण– हाय! हाय! सभी मेरा उल्टा ही हो गया! मैं क्या करूं? कुछ सूझता नहीं है।

मैं सोचा था सीखिके ब्राह्मणोंसे ब्रह्मास्त्रोंका ज्ञान पूरा करूंगा।
क्या मैं बूढ़ी गायके मारनेसे, पा विप्रोंसे शाप सीधे मरुँगा।
क्या हो गया अर्जुनके वधार्थ हा! ब्रह्मास्त्रके खातिर आ गया यहां
उल्टा कहां हा! रण बीचमें वही मुझे वधेगा द्विज शाप है सही॥

(कहते कहते राजा कर्ण किसी प्रकार शोककी मुद्रामें वहांसे निकलेंगे। बाद नारदजी और प्रियवत राजर्षि पुनः रंगमंच पर जाकर पुनः पूर्ववत् बातें करने लगते हैं)

नारद– कहिये, राजर्षि देखा आपने प्राचीन भारतके राजा और ब्राह्मणके बीच एक अनजानमें बूढ़ी गायके मर जानेमें कर्ण राजाको विप्रने प्राणदण्ड दे डाला है। इससे आपको कुछ शान्ति तो मिलनी चाहिये।

प्रियव्रत राजर्षि– देवर्षि! देखने सुनने या स्मरण करने पर भी पूर्व गो स्थितिसे

आजकी गो स्थिति मुझे बड़ा ही दुःखी कर रही है। क्यों गो जातिकी आज यहां ऐसी स्थिति है? इस पर आप कुछ प्रकाश डालें।

नारद– राजर्षि! मैं किसीको भी दोषी नहीं समझता। मुझे ज्ञान तो होता है कि आजकल कालात्मा विश्व-चालक अचिन्त्य महिमा सर्वात्मा भगवानको यही अभिनय करना है। क्षण भर शान्त मुद्रा में सुनें (यों प्रभुकी स्तुति करने लगते हैं।)

कमल योनी हरी शम्भुजी हैं सही जनन रक्षा तथा संहृती जो करें।
चहत हैं जो महादेव होता वही नहि चले अन्यथा वे करें वे धरें।
नियति है जो बनी चेरिका देवकी वह, बनी बात पक्की महाकालकी
यह बनी है समस्या जगच्चक्रकी नहिं करें आप चिन्ता किसी बातकी।

क्या देखते नहीं आप, सभी बातें उलटी अपनी राह पर चली जा रही है। किसीका कुछ कोई सुनता नहीं है।

प्रियव्रत– देवर्षि! आप ठींक कह रहे हैं। कहां हम लोग वर्णाश्रम धर्मको प्राणसे प्रिय जानकर उसके सारे नियमोंको अक्षरशः सदा पालन करते थे। और प्रजाओंसे पालन करवाते थे। कहां आज उसकी जगह जाति पांती तोडक समाज बनाया जाता है। वर्णाश्रम धर्म मटियामेट किया जा रहा है। ब्रह्मचर्याश्रमका तो नाम ही नहीं है। केवल एक गृहस्थाश्रम मात्र दिखता है। सो भी बिगड़ा हुआ। वाणप्रस्थ और सन्यास भी उच्छिन्न है। कभी कहीं सन्यासी नामसे गेरुवा कपड़ा पहने कोई साधु दीख जाते हैं। सो भी गृहस्थसे बदतर दीखते हैं। धन-संग्रहमें लीन रहते हैं। सखी सेवक जुटानेमें ही उनका समय बीतता है। वे तो ज्ञानका नाम तक नहीं जानते। जवान तरुण भी सन्यासी वेशमें यहां दीखता है।

शासकोंकी तो बात ही न पूछें, वे जूआ लाटरी लगाकर धन कमाते हैं। प्रजाओं पर कर पर कर लगाते जा रहे हैं। उनके विषय में पहले ही व्यासदेव ने पुराणोंमें लिख छोड़ा है–

'राक्षसास्ते भविष्यन्ति कलौ राजन्य-रुपिणः
मनुष्यान् भक्षयिष्यन्ति धनतो न शरीरतः'
(राक्षस जाकर हो गये कलिमें शासक वृन्द
धन से, ना है मांस जो, खावें मानव वृन्द)

आज वे बातें प्रत्यक्ष चरितार्थ हो रही है। भौतिक अभ्युदय का लोभ दिखाकर चरित्र मर्यादाका विनाश किया जा रहा है। समाजवादके नाम पर धनी गरीब बनाये जा रहे हैं। बदमाशोंको उभारा जा रहा है। सज्जन पीड़ित हो रहे हैं। हिन्दुओंकी उपेक्षा है। तुर्कोंका समादर होता है। रोज रोज नये नये कानून (संविधान) बनाये जा रहे हैं। मनु-स्मृतिके पन्ने फाड़े जाते हैं। अम्बेडकरकी संहिता चलती है। खानेके

लिये मत्स्यपालन कुक्कुटाण्डवर्द्धन विभाग खोले जा रहे हैं। बाहर भारतसे भगाये गये बौद्ध पुनः बसाये जा रहे हैं। कहीं गौओंका संवर्द्धन नहीं है। भूसा खरी चरागाही परती जमीन नहीं है। शूकर संरक्षा हरिजन संवर्द्धा की जा रही है। किसानोंको गो मवेशी रखनेकी सुविधा नहीं दी जाती। मारिशस प्रभृति हिन्दू-देशोंकी उपेक्षा है। रूस-अमेरिका से दोस्ती है। इस देशमें कम्युनिज्मका स्वागत है। भारतीयताका बहिष्करण है। क्या कहूं? कुछ कहा नहीं जाता। अतः मौन रहना ही अच्छा है।

नारद— राजर्षि क्यों आप विषाद करते हैं। मेरी भी यही स्थिति है। मैं भी थोड़े में ही अपनी व्यथा समाप्त करता हूं। सुनिये—

आसुरी सम्पदाका यहां राज्य है
ना मिले सत्य, खोजे कहां सत्य है।
दैवसम्पद् यहांसे चली जा रही
पश्चिमी सम्पदा जागती जा रही
क्या सुनावें किसे सुनता हि कौन है
साधु सच्चे लगाये यहां मौन हैं।
कोकिला मौन लेती सदा वृष्टिमें।
आ रही तथ्य रीती यही सृष्टि में।

इसलिये— राजर्षे! मंनो-व्यथाको दबाकर आप अपने निवास धामको (स्वर्गको) चले जांय। मैं भी अपनी महतीको बजाते त्रिलोकीका पर्यटन करूं। (यह कहकर देवर्षि नारद तथा राजर्षि प्रियव्रत दोनों चले जाते हैं। परदा गिराकर दृश्य समाप्त होता है) इति गोमहिम प्रकाश दृश्यं पंचम समाप्त।५।

विराट राजाके गोव्रज ग्रहणोपक्रम दृश्य : ६ छठा

(स्थान :- कैलासमें चिरन्तन दम्पति शिव पार्वती दिव्य वेशमें रंगमंच पर घूम रहे हैं। भगवती भवानी सुन्दर रेशमी साड़ी पहनी हैं। सभी भूषणोंसे अलंकृत हैं। भव शिव व्याघ्र चर्म ओढ़े, कटि तक मृगचर्म पहने, गंग जूट भालचन्द्र नागवेष्टित भी है)

भवानी— प्राणनाथ! महाभारतमें भारत राष्ट्रकी कैसी प्रशस्ति लिखी है। मैं सुनना चाहती हूं। क्या भगवानकी कृपा होगी?

भगवान— आप सभी राजाओंसे प्रशंसित भारतवर्षकी प्रशस्ति सुनना चाहती हैं तो इसमें मुझे क्या प्रयास है। आप सावधान हो जांय। मैं व्यासदेवके महाभारतमें धृतराष्ट्रके पूछने पर संजयने भी भीष्मपर्वके नवमाध्याय में जो विस्तीर्ण प्रशस्ति कही है, वही संक्षेपमें आपको सुना देता हूं। सुनिये—

भवानी– हां, हां, मैं संक्षिप्त ही चाहती हूं। सावधान भी हूं। भगवान प्रारम्भ करें–

भगवान्– धृतराष्ट्रके पूछने पर संजय कह रहे हैं वही आप सुनिये–

अनुष्टुपूछन्द–

सुनें आप बताता हूँ, कीर्ति भारतवर्षकी
प्रिय है यह भूपोंका प्रीति इस पर ईशकी
है बड़ा प्रिय देवोंका वर्ष भारत भारतम्
शक्रका प्रिय है प्यारा मनूका वर्ष भारतम्।
पृथुका वैन्य राजाका ईक्ष्वाकु प्रिय भारतम्।
ययातीका बड़ा प्यारा मान्धाता प्रिय भारतम्।
अम्बरीष महात्माका प्रिय नाहुष राजका
शिविराजा उशीनरका प्रिय है मुचुकुन्द का
ऋषभका ऐलराजाका नृगका प्रिय भारतम्
कुशिकका गाधिराजाका प्रियभारत भारतम्।
प्रिय सोमक राजाका प्रिय दीलीप राजका
सभी क्षत्रिय भूपोंका प्रिय भारत भारतम्।

दोहा–

सह्यमहेन्द्र मलयगिरी शक्तिमान रिखिमान
विन्ध्याचल परिजात गिरि, कुलगिरि सातहिमान।
आगे पीछे हैं यहां पर्वत नदी समूह जनपद नाम सुनें कछू ना है बात दुरुह।
कुरु पांचाल शाल्वा है जंगल अरु माद्रेय,
दशापार्श्व बनायू है रामण कुश विन्देय।
भारतके ही ये सभी अन्दर जनपद होंय
यवन चीन-काम्बोज ओ दारुण म्लेच्छ होंय।
सकृगृदह कुलत्थहुणा पारसीका चिनजोय,
रमण और दशमालिका जनपद जो सब होय।
बढ़ते भारतवर्षको स्वामी सबका मानि,
मानें भारतवर्षकी कीर्ति बड़ी यह जानि।

यह सभी जनपद पहले भारतकी सीमाके अन्दर थे। आज सकुचते सकुचते भारतकी सीमा अमृतसर तक रह गयी है। पूरबमें भी स्वर्णवंग हो गया पृथक् है। ये सभी बातें भारतीयों की नासमझीके कारण है। ये लोग यदि अपनी दीर्घदृष्टि द्वारा मानव धर्मकी घोषणा करके– 'धृतिः क्षमा दमो स्तेयः' इत्यादि मनु प्रोक्त धर्मको ही सर्वथा

प्रचार करें तो पूर्ववत् सारा विश्व इनके वशवर्ती हो जाय। कहें, आपकी भारत प्रशस्ति श्रवणेच्छा पूर्ण हुई?

भगवती– हां भगवन्! भारत प्रशस्ति तो सुन ली, पर अमृतसर भारतकी सीमा है। यह तो आर्योंके लिये खेदावह वार्ता है?

भगवान्– अहो, आप भी, काल देशकी सीमासे बाहर रहती हुई भी यदि इधर दृष्टि देती हैं तो मैनें ऊपर कह ही दिया है। आगे भी सुनिए भारतीय आज अपने को मध्य एशियाका काकेसिया से आये हुए बताते हैं। और अपने सन्तानोंको भी वैसे ही इतिहासकी पुस्तकों द्वारा ज्ञान कराते हैं। इनको चाहिये था कि जब इन्हें स्वतन्त्रता दी गयी। उसी समय अपने इतिहासका संशोधन कराकर 'सत्य भारतीय इतिहास' इस नामका ग्रन्थ संस्कृत भाषामें लिखाकर उसका अन्यान्य भाषाओंमें अनुवाद कराकर प्रचार करते कराते।

भगवती– यह सूझ तो आपको देनी चाहिये।

भगवान्– वाह देवी! वाह! आप अपना कार्य हमारे ऊपर टाल रही हैं।

'या देवी सर्व-भूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता'
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः।

(जो देवी सब जीवोंमें बुद्धि रूप विराजती हैं तीन बार नमस्कर्ता तुझे देवि नमोनमः) यह किसके लिये सप्तशतीका पाठ मानव किया करते हैं? अतः महादेवि! आप उनकी बुद्धि ठीक करें। वे समझें कि मानवोंकी आदि सृष्टि हिमालयकी अधित्यका में मानस सरोवरके आसपास में हुई है।

इसके प्रमाण जो शास्त्रोंमें जहाँ तहाँ भरे पड़े हैं। उन्हें समझ करके खोज निकालनेकी योग्यता उनमें आप उद्बुद्ध कर दें। मैं यहाँ कुछ मार्ग निर्देश कर देता हूँ।

यह हिमालयकी अधित्यका ही, मानस-सरोवरके आसपास की भूमि आर्योंकी आदिम निवास भूमि है।

'सुवास्त्वा अधि०' (ऋ० ८/२०/३७)
'त्रिः सप्त सप्त नद्यः' (१०/६४/८)
उपह्वरे च गिरीणां संगमे च नदीनां धिया विप्रो अजायत (८/६/२८)
तदप्येतदुत्तरष्य गिरेर्मनोरवसर्पणम् (शतपथ० १/८/१६)
हिमालयाभिधानो यं ख्यातो लोकेषु पावनः
तत्र मण्डलयोर्मध्ये मेरुरुत्तम पर्वतः॥
ततः सर्वाः समुत्पन्ना वृत्तयो विविधाश्च ताः
ऐरावती वितस्ता च विशाला देविका कुहूः।

प्रसूतिर्यत्र विप्राणां श्रूयते भरतर्षभ! (महाभारत)
उत्तरे हिमवत्पार्श्वे पुण्ये सर्वगुणान्विते।
पुण्यः क्षेम्यश्च काम्यश्च स परो लोक उच्यते।
उत्तरः पृथिवी भागः सर्वपुण्यतमः शुभः।
इहस्थास्तत्र जायन्ते ये वै पुण्यकृतोजनाः। (महा भा०शा०ज० १९२)
दक्षिणेन पुनर्मेरोर्मानसस्य च मूर्द्धनि
वैवस्वतो निवसति यमः संयमने पुरे (वायु० ५०/८२)
अस्मिन् हिमवतः शृंगे नावं बध्नीत मा चिरम् (महा० वन० १८)
मनुष्या मनुतो जाता मनुर्देवतनूद्भवः।
देवानां वसतिश्च स्वरिति श्रुत्यादिसम्मतः॥ (आर्यः वि.सु.)
देविका पश्चिमे भागे मानसं सिद्धसेवितम्।
तत्रैव मानसी सृष्टिरनादिरभिवर्तते।

इत्यादि बहुतसे प्रमाण है। मैंने थोड़ा दिङ् निर्देशकर दिया है।

भगवती – (साधु साधु अत्र भगवतोपि आशीर्वादः उपलब्धः)

बहुत अच्छा आपका आशीर्वाद प्राप्त हो गया तो यह कार्य अवश्य ही होगा। मैं गो जातिके सम्बन्धमें चर्चा करना चाहती हूँ कि पहले भारतवर्षमें दुर्योधनादि आसुरी प्रकृतिके राजे भी गोधनका संरक्षण संवर्द्धन करते थे। राजा दुर्योधन अपने गोव्रजके निरीक्षणके बहाने जब पाण्डवोंको ध्वस्त करना चाहा था तो मैंने चित्रसेनको बीचमें खड़ा किया था। जब विराट्के गोधन पर आक्रमण किया था तो मैंने वृहन्नला रूपमें रहने वाले अर्जुनको खड़ा किया था। ये सारी बातें भगवान् जानते ही है।

भगवान् – हां! हां! जानता तो हूं पर गोवृत्त सुनके मुझे बड़ा मनोरंजन होता है। आप कहें मैं सुनूंगा।

भगवती – तो सुनें भगवान मैं भासकविके पंचरात्र नाटकके गोधन ग्रहण दृश्यका अभिनय करवाती हूँ। पर भगवानको मेरे साथ दर्शक बनना पड़ेगा।

भगवान् – हां, हां, देखें, मैं बैठता हूं आप भी तो बैठेंगी (यह कहकर शिव और पार्वती दोनों दर्शक बन जाते हैं। अच्छे आराम कुर्सी पर दोनों बैठ जाते हैं। अन्य लोग भी यथास्थान बैठ जाते हैं। रंगमंच पर हाथमें लाठी लिये विराट राजाका एक अहीर गोरक्षक आता है। रंगमंच पर घूमता हुआ विराट राजके गोधनकी बात करता है)

गोपालक – हमारी गायें सन्तानवती होवें। उनकी पालिकामें गोपयुवतियां सौभाग्यवती रहें। हमारे महाराज विराट एकछत्र पृथ्वी-पति रहें। आज हमारे महाराज विराटके वर्ष-गांठ पर खूब गोदान होगा। उनके लिये नगरके सभी नर-नारियोंके आबृद्ध

बाल-गोपालोंको आनन्द-मंगल मनानेके लिये नगरके सभी विस्तृत उपवनोंके मार्गों पर आने-जानेकी तथा गोधनको देखनेकी छूट है। आज मैंने नहला-धोकर सींगों खुरोंमें तेल लगाकर गायोंको खूब सजाया है। आहा! हमारे गोधन हृष्ट पुष्टांग हाथीके समान झूम रहे हैं। देखते बनता है। मानों गोलोक यहां आकर बस रहा है। (यो कहता कहता रुक जाता है। ऊपर देखकर) हा! यह काक क्यों वृक्षकी सूखी डाली पर चोंच मारता हुआ सूर्यके सामने होकर कांव-कांव कर रहा है? हे भगवान! हमारी तथा हमारे गोधनकी शान्ति होवे। मेरे महाराजका मंगल हो। (तीन बार कहकर आगे बढ़कर बोलता है।) मैं आज सबका नेता बनूंगा। अरे गोमित्रक, अरि! गोधनिया इधर आवो। इधर आवो तुम लोग।

बाला– (कुछ बालक बालिकाएं आकर) पालगों मामा पालागों।

गोपालक– हमलोगोंकी तथा हमारे गोधनकी शान्ति होवे। अरे गोमित्रक, अरि गोधनिया! आज विराट महाराजका वर्षगांठ है। आज वर्षगांठके उपलक्ष्यमें खूब गोदान होगा। इसलिये नगरके लम्बे चौड़े (विस्तृत) उपवनके मार्गों पर गलियोंमें नगरके नर-नारियोंको बाल गोपालोंको घूमनेका, गोधन देखनेकी छूट है। गौएँ बछवे-बछियोंको खूब धोय धवाकर पोंछ पांछकर सिंग खुरोंमें तेल लगाकर खूब रंग रंगाकर हृष्ट पुष्टांग गोधन सब सजाये गये हैं। आहा! हमारे गोधन आज खूब सजाए गए हैं। आहा! हमारे गोधन कैसे चमकते हैं। मानो गोलोक आज यहां की पृथ्वीके ऊपर आया है। बुलाओ सबको (ऐसा कहकर जोरसे स्वयम् पुकारता है)

गोपालक– अरे गोरख्वा अरि गोरख्वि।

पहला– (जैसी मामाकी आज्ञा ऐसा कहकर) अरे दही मुहो! अरि दही मुहियों इधर आवो। इधर आवो मामा बुलाते हैं। (जोरसे पुकारते हैं। बारी बारीसे)

दूसरी– अरे घीमुहों अरि घीमुहियों इधर आवो। इधर आवो (मामा बुलाते हैं) (जोरसे पुकारती हैं) (सभी बच्चे बच्चियां जुटकर)

सभी– मामाजी पालगों, मामाजी पालगों (एक ही बार कहेगी ऊचें स्वरसे)

गोपालक– हमारी और हमारे गोधनकी शान्ति होवे पुष्टि होवे। (इसीका रटल गाल है) आज हमारे विराट महाराजका वर्ष-गांठ है। इसके उपलक्ष्यमें हर-साल गोदान होता है। राज्यके सभी गावोंमें जिसके यहां गोधन होगा। उसको एक गाय मिलेगी। जिसको वह पालेगा सालमें उसकी एक बछिया सरकारमें पहुँचावेगा। प्रत्येक नगर गांव टोल टपरीमें गोव्रजका उत्सव मनाया जायगा। बड़े-बड़े शहरोंमें गोप्रदर्शनी होगी। अच्छे गोधन वालोंको राज्यके गोव्रज पुरस्कार विभागसे गोधनके लिये पुरस्कार मिलेगा। आज हमारे महाराजके राज्यमें गोधनाका धूम मचा होगा। झुण्ड के झुण्ड

गायें सब जगह दीख पड़ेगी। सबको सभी लोग बड़ी भक्तिसे गुड़ खिलायेंगे। प्रत्येक साल महाराजके वर्षगांठ पर गोधनका राज्यमें उत्सव पर उत्सव होता है। आवो जब तक गोदान प्रारम्भ (शुरू) नहीं होता तब तक हम लोग खूब नाचें गावें खेल बजावें (सभी खेल मजीरे झांझ हुरूका डमरु खंजड़ी तरह तरहके बाजे बजाते हुए नाचते गाते हैं) वादको गोपालक ताण्डव नृत्य करता है। सभी देखते हैं।

गोपालक– तुम लोगोंने अपने मनका नाच दिखा दिया है। अब हमारा महादेवजी वाला ताण्डव नृत्य देखो (ऐसा कहकर हरक लेकर खूब उछल कूद करता हुआ ताण्डव नृत्य करता है। उसके बैठ जाने पर कुछ लड़के घबड़ाये हुए आकर बोलते हैं)

बालक– मामा यह क्या आकाशमें बड़ी धूल उड़ रही है। (सभी आकाशकी ओर देखते हैं)

दूसरे बालक– अरे रे धूली नहीं यहां तो शंख नगारेके आवाजसा सुनाई पड़ रहा है। (सभी कान लगाते हैं)

दूसरे– ए हो मामा, मामा! यह देखो यह देखो। ये तो दिनमें ही सूर्य भगवान् छिप गये। चन्द्रमाकी चाँदनी छा गयी ये देखो। (फिर घबड़ाए सभी बच्चे दौड़कर)

सभी– मामा! बहुतसे, मामा! मामा! बहुतसे लोग दहीके समान ऊपर ऊपर छाता ताने दूधके धोये घोड़े पर चढ़े हुए गोधनशालाके चारों ओर जुट रहे हैं। चोर चोर डाकू डाकू (यह कहते चिल्लाते फालमार मारकर भागने लगे)

गोपाल– हाय! हाय! यहाँ तो बाण बरसने लगे यह भागो भागो ना ना ठहरो ठहरो मारो मारो पकड़ो पकड़ो। अरे यह खबर मैं महाराजके पास पहुँचा दूं। तुम लोग भागो नहीं। (यह कहकर विराटनगर की ओर दौड़ जाता है)। सभी भाग जाते हैं। परदा गिर जाता है) (विराट राज गोग्रहणोपक्रम दृश्य छठां समाप्त हुआ।)

विराटराज गोहरण दृश्य : ७ सप्तम

(स्थान विराटराजकी राजधानी है वहां सेनापतिके वेशमें एक पुरुष आक्रमणकी बात जानने वाला जोरसे चिल्ला रहा है)

सेनापति– अरे महाराज विराटनरेशको खबर करो खबर करो। गोधनशालाकी गायें डाकूके वेशमें छिपे धृतराष्ट्र सम्राटके सभी सैन्यों द्वारा हरी जा रही है। इसकी खबर कर दो। देखो–

वत्स भागे सभी गाय बांधी गयी, बैल वो साड़ भागे जहांके तहां
यों मची खल्बली गो ब्रजों बीच है, ग्रस्त सारे पशु भागते हैं वहां।

(नेपथ्यसे आवाज आती है) क्या कहा? धृतराष्ट्र सम्राटके सैन्य हैं?

सेनापति – हां, हां, दूसरे कौन हो सकते हैं? सुनिये –

खूब तैयार हो चांप ताने हुए, वर्म बांधे रथोंको सजाये हुए।
भूपके द्वेषसे छोड़के शिष्टता गौधना हांकनेमें करें धृष्टता।

(कंचुकी बाहर जाकर सेनापतिसे बोलता है)

कंचुकी – जयसेन! आज महाराजाका जन्म दिन है। अत: जन्म नक्षत्रके पूजनेमें लगे हैं। बेमौकेकी सूचना अच्छी नहीं है। अत: प्रण्याह तथा गोधन पूजनके बाद निवेदन करूँगा।

सेनापति – आर्य! यह समय प्रतीक्षा का तो नहीं है। जल्दी करें।

कंचुकी – हां, हां, जो कहें। अभी जाता हूं। (यह कहकर भीतर जाता है। उसके बाद दूसरा परदा उठता है। विराट राज पुरोहितादिकोंसे घिरे पूजा पर बैठे दिखाई देते हैं, कञ्चुकी आकर सूचना देता है।)

विराटराज – (उठकर)

शत्रु क्या? सुरपति भी यदी रहेगा
मेरे गोधन पर क्या हाथ दे सकेगा।
देखो क्या कथमपि हो रुका रहूं मैं
कोई हो बधकर दूं न देखता मैं

(यह कहकर पुकारते हैं) जयसेन! जयसेन! (सेनापति सामने जाकर)

सेनापति – महाराजकी जय हो (सैन्य प्रथासे अभिवादन करके खड़ा है)

विराटराज – तुम क्या मेरी जय मना रहे हो। मेरे क्षत्रियपनको तो ललकारा गया है। कहो रणकी क्या हालत है?

सेनापति – अभद्र बातोंकी क्या जिक्र करुं। थोड़े ही में सरकार सुन लें।

रथकी धूली जो पड़ी धूसर हुआ शरीर
पशुगण सब है भागते खाकर चोट गंभीर।

राजा विराट – अच्छा तो जयसेन! तुम नगरमें सर्वत्र नगारा पिटवा दो –

विराट राज जा रहे रणाब्धि तैरने अभी
चलो जिसे मिले सुपास गो बचावके अभी
मिले महान पुण्य गो बचावमें कहें सभी
लड़ड़ू दूनों हाँथ यहाँ जीयें थवा मरें कभी।

सेनापति – जैसी सरकारकी आज्ञा (ऐसा कहकर चला जाता है)

राजा विराट– (चिन्ता मुद्रामें) क्यों हमारे साथ दुर्योधन वैर रखते हैं? (ऐसा कहकर सोचने लगते हैं) (एकाएक चौंककर) हां, अभी उनका यज्ञ देखने मैं नहीं गया था। हां, तो मैं कैसे वहाँ जाता? उसी समय तो मेरे श्याले कीचकों पर विपत्ति पड़ी थी। मैं उन्हें देखूं कि इनके युधिष्ठिरकी बराबरी करनेके दिखावेमें इनका यज्ञ देखूं। नहीं, नहीं, इनको तो मुझसे स्वाभाविक वैर इसलिये है कि मैं उनसे (युधिष्ठिरसे) स्नेह रखता हूं। उनसे स्नेह तो सभी रखते हैं। अजात शत्रु उनका नाम ही है तो मैं क्या करुं? नहीं, नहीं, मुझे युद्ध करना ही चाहिये। हमारे भगवान (जूवा खेलाने वाले छिपे युधिष्ठिरको विराट राजा भगवान कहते हैं) हस्तिनापुरमें राजा युधिष्ठिरके यहां तो रहते थे। वे अवश्य उसके (दुर्योधनके) शील स्वभाव जानते होंगे। अस्तु–

कहीं वे पूछने पर भी न उसका दोष लेखें तो
मुझे तो पूछना ही है न अर्थी दोष देखे जो।

यहां दरवाजे पर कौन है?

भट– (जल्दीसे आकर) महाराजकी जय हो।

राजा– भगवानको प्रणाम करना चाहता हूं।

भट– जैसी सरकारकी आज्ञा (चला गया) (वादमें प्रच्छन्न युधिष्ठिर सन्यासी वेशमें वहां आते हैं)

भगवान– (मन ही मन सोचते हैं) यह क्या रणकी तैयारी दीख रही है? (शार्दूल विक्रीडित)

देखूं तो सब अश्व हस्ति पर भी है जीन हौदे कसे
सज्जे है रथ भी सवार सब भी तैयार पेटी कसे।
मैं तो शान्त रहूँ न युद्ध करने की है न इच्छा मुझे
मैं कैसे उनको कहूं न लड़ने को ना मुझे है सुझे।

(प्रकाशमें) महाराजकी जय हो।

राजा– (उठकर) विराटनाम मैं भगवानको प्रणाम करता हूं।

भगवान– ईश्वर आपका कल्याण करें।

राजा– कृपा बड़ी। भगवान इस आसनको सुशोभित करें। (यों आसनका निर्देश करते हैं) भगवान उस पर बैठकर पूछते हैं।

भगवान–

चढ़ाई क्यों करें कोई है भूप वागी क्या
यहां क्या दीन दुःखीको बचाना आपको भी क्या।

राजा – भगवन्! हमारे गोधन पर आक्रमण कर हमें अपमानित किया गया है।

भगवान – (चौंककर) किसने?

राजा – धृतराष्ट्र सम्राटके सुपुत्रों ने।

भगवान – हां दुर्योधनादिकोंने (मन ही मन) तब तो बड़ी दिक्कत उपस्थित हो गयी। एक खानदानके नामसे जो पाण्डवों कौरवोंका बँधा भाव है, वहाँ जब वे दुष्टता बिना विचारे करें तो चित्तभारी हुआ खिन्न मेरा यहाँ।

राजा – भगवान क्या सोच रहे हैं?

भगवान – कुछ नहीं, उन्हींके विषयमें सोच रहा हूं।

राजा – अब घमण्ड टूट जायगा। मैं युधिष्ठिरके समान, समर्थ होते हुए भी शान्त नहीं रहूंगा।

भगवान – ठीक है, आप कहते हैं। (मन ही मन)

हा सभी कष्ट मेरे भगाये गये द्रोपदीके तिरस्कार भी धो गये
ये सभी जानते दुःख भोगा करुं होत सामर्थ्यके मैं क्षमा जो करुं।

(इसी बीचमें सेनापति आकर कहता है)

सेनापति – महाराजकी जय हो। सरकार इस युद्धमें पृथिवीके प्रायः सभी राजे जुटे हैं। केवल दुर्योधन मात्र नहीं है।

उपजाति –
हैं द्रोण आये, अरु भीष्म भी यहां
विराजते कर्ण जयद्रथी जहां।
गान्धार राजा अरु शल्य राजसे
देखी ध्वजाएं कहता न बाणसे।

राजा – (उठकर, हाथ जोड़कर, क्या पूज्य गंगा पुत्र जी भी आये हैं?

भगवान – (मन ही मन) शाबास विराटराज! भीष्म तो तुम्हारे पर आक्रमण करें। पर तुम मर्यादाका पालन कर रहे हो। सर्वथा तुम आज धन्यवादके पात्र हो। ऐसा पुरुष कहां है? अच्छा तो मैं समझता हूं।

(स्त्रग्विणी छन्दसे) –
भीष्म जी आज आये न युद्धार्थ हैं
वे बताते मुझे पूर्ण तो तोर है।
जो प्रतीती हुई द्यूतमें थी वहां
आज तो पूर्ण जानो सही है यहां॥

राजा – कौन है? (सूत आकर)

सूत – सरकारकी क्या आज्ञा है?

राजा – दोहा – *रथ तो शीघ्र ले आवो पूज्य अतिथि आ गये*
न आशा जयकी है प्रति पक्ष तो तू हो गये।

सूत – सरकारकी जैसी आज्ञा ? सरकार ! (वंशस्थ छन्द से)

जो आपका युद्धजयी प्रसिद्ध है गये वही तो रथ ले कुमार है।
स्वयं दिखाने रण चातुरी वहां बड़े बड़े वीर डटे जहां।

राजा – क्या कुमार चले गये हैं ? (बीचमें भगवान बोल पड़ते हैं)

भगवान – अरे ! कुमारको रोक लो, रोक लो, वे युद्धमें न जायें।

न जानते दोष गुणादि युद्धके
कुमार वे तीव्र बड़े स्वभावके।
रणाग्नि ना देखत बालवृद्धको
यथार्थ तो ना कछु भीति आपको॥

राजा – तो दूसरा रथ मेरे लिये लावो।

सूत – जैसी सरकारकी आज्ञा (ऐसा कहकर ज्योंही जाना चाहता है। पुनः राजा पुकार उठते हैं)

राजा – अरे सुनो।

सूत – मैं रुका हूं सरकार।

राजा – *कुमारके साथ नहीं गया तू*
न सारथी क्या इस वंशका तू।
तुझे स्वयं बात विचारनेकी
न सोचता क्या खुद ही विवेकी॥

सूत – सरकार क्षमा करें। मैं स्वयं उनके साथ चलनेके लिये सारथीके नियमानुसार रथ हाँककर सामने लाया। किन्तु कुमारने ही –

रोका मुझे साथ वृहन्नला लिया क्या जानता हास्य विनोद ही किया।
रही कछू अद्भुत दिव्यता भी वृहन्नलामें हम का कहें भला।

राजा – अरे वृहन्नला कैसे गयी ? (बीचमें भगवान बोल पड़े)

भगवान – राजन् घबड़ानेकी कोई बात नहीं है।

वृहन्नला साथ लिये कुमार ही
परास्त कर रिपुको कहूं सही।
आजायेगें युद्धजयी बने हुए
प्रयोग भी बाण बिना किये हुए॥

राजा – (कुछ भी न सुनता हुआ) अच्छा तो शीघ्र दूसरा रथ लावो।

सूत – जैसी सरकारकी आज्ञा (कहकर चला गया पुनः लौटकर)

सूत – महाराज! कुमारका रथ भग्न है।

राजा – क्यों भग्न कहते हो?

भगवान भी – क्यों भग्न अभी हो गया?

सूत – महाराज! सुनें तो

१२ द्वादशाक्षरा उपजाति –

जाके कछू दूरहि राजमार्गको कुमारने मोड़ दिया निजाश्वको
श्मशानकी ओर चले अरण्यमें मैंने वही भग्न कहा स्व शब्दमें।

भगवान् – (मन ही मन) अहो हमलोगोंने अपने गाण्डीवादि अस्त्रशस्त्रोंको मुर्देकी शक्ल बनाकर जो शमीके पेड़ पर लटका रखा है। उसीको लेने अर्जुन गये हैं। (प्रकाशमें) ये महाराज सुनिये –

अये! यहां अन्य निमित्त आ पड़ा श्मशानकी ओर रथाश्व जा पड़ा।
जाने महाराज! रणक्षिती अभी श्मशान होगी झट 'शत्रुकी सभी।

राजा – भगवन्! वे मौकेकी शान्तिकी बातोंसे जोश ही उत्पन्न होता है।

भगवान – महाराज! आप तेजस्वी न हों। मैं आजतक कभी झूठ नहीं बोला हूं।

राजा – यदि ऐसी बात है तो भगवन् मुझे क्षमा करें। देखो जी! जावो पुनः रणकी खबंर लो।

सूत – जैसी सरकारकी आज्ञा (ऐसा कहता हुआ चला जाता है)

राजा – (आश्चर्यकी मुद्रामें) *अरे! यहां क्यों रण बीचसे ध्वनि*
धरा हिलाती निकली सुनात है।
यथा नदी स्त्रोत सवेगकी ध्वनि
प्रकम्पसे टूट रहा यहां है।

इस ध्वनिका पता लगाना चाहिये। (सेनापतिका प्रवेश)

सेनापति – महाराजकी जय हो। श्मशानसे चलकर क्षणभर विश्राम करके कुमार ने –

गजेन्द्रोंमें की है शर प्रहरणोंसे धवलता
हयो में सैन्योंमें शर प्रहरणोंसे विकलता।
रथोंको रोका है शर प्रहरणोंसे जहँ-तहाँ
नदी वाणोंकी है बस नहर ही युद्ध जहवां॥

भगवान– (मन ही मन) *प्रभाव है अर्जुन बाणका यही*
जो था हुआ खाण्डवदाहसे सही।
वर्षा हुई खूब सुरेन्द्रकी यथा
थी वृष्टि भी अर्जुन बाणकी तथा।

(राजा साहब तो ऊपरका कृत्य कुमारका किया जानकर खुश होते हुए पूछ रहे हैं। सेनापति भी अपने ज्ञानानुसार ही उत्तर देता है)

राजा– शत्रुओंकी अब क्या दशा है?

सेनापति– सरकार! वह तो मेरे सामनेकी बात नहीं है। पर गुप्तचरोंके द्वारा तो पता चला है कि–

द्रोणाचार्य धनुर्निनाद सुनके छोड़ा धनुर्बाण है
तोड़ा भीष्ममहावली शरधनू देखाध्वजा बाण है।
भागे कर्ण शर प्रहार भयसे भागे सभी सैन्य ही
खम्भाकी समता धरे बस खड़े हैं तो अभीमन्यु ही।

भगवान– अरे अभिमन्यु भी आये हैं। तब तो महाराज (दूसरा सारथी भेजिये)-

अग्नि है अभिमन्यु वृष्णिकुलका वो पाण्डवोंका वही
यों दोनों कुरु वृष्णि दिव्य कुलका है बाल भी एक ही
होगी चिन्तित आप भी वृहनला क्यों ना करें कल्पना
भेजें दूसर सारथी बस वहां मेरी यही धारणा।

राजा– हां, हां, भगवान् ऐसा क्यों समझ रहे हैं?

शार्दूलविक्रीड़ितसे–

भीष्म द्रोण महाबली हट गये जो बाणके वेग से
भागे कर्ण जयद्रथ दिस वहीं तो हैं उसी बाणसे।
वे क्या उत्तर वीर ना कर सके पूजा अभीमन्युकी
क्यों चिन्ता करते वृहन्नलाकी यह आपभी व्यर्थही।

सेनापति– महाराज! सुनिये कुमारका रथ क्या कर रहा है–

टिप्पणी– द्रोणाचार्यने तो अर्जुनके गाण्डीव धनुषका यह टंकार है। ऐसा समझकर लड़ना शिथिल कर दिया। यह भगवान् समझते हैं। राजा और सेनापति– जानते हैं कि कुमारके ही धनुषको अद्भुत धनुष जानकर द्रोण लड़ना छोड़े बैठे। भगवानने समझा कि अर्जुनने अपने नामका बाण भीष्मके पताके पर मारकर जो प्रणाम किया उससे उन्होंने समझ लिया कि यह अर्जुन है। अतः लड़ना शिथिल कर दिया। पर राजा वो सेनापति यही समझते हैं कि कोई हमारा वीर है। जिसका यह बाण है। अतः भीष्म हट गये। यों ही अभिमन्युके बारे में भी भगवान और राजा भिन्न मत रखते हैं। कर्ण तो आक्रमण अनुचित समझकर विमुख हो गये हैं। यह भगवान समझते हैं। ये लोग भागना चाहते हैं।

कवित्त – *खींचे बागडोरके भ्रमात चहुं ओर जानें*
छोड़े हयरश्मिके तो सरपट पलाता है।
पकड़ जब सैन्य जाते मारते नहिं उन्हें जानें
किसीको न दोष व्यर्थ कुछ भी लगाता है।
थोड़ी जमीन बीच चक्कर लगाते देखें
मानो योग्य शिष्योंको कवायत सिखाता है।

राजा – (भगवानकी बातोंसे अभिमन्युके लिये सन्देहमें पड़कर पुनः युद्ध वृत्तान्त पूछते हैं)

सेनापते! पुनः युद्ध वृत्तान्त देख आवें तो।

सेनापति – जो सरकारकी आज्ञा (ऐसा कहकर जाता है। पुनः जल्दी ही लौटकर) उच्चे स्वरसे महाराजकी जय हो! जय हो! विराट राजकी विजय है। कुमारने गोधन बचा लिया है। सभी धृतराष्ट्र सम्राटके सैन्य भाग गये हैं। (भीतरका परदा गिर जाता है। बाहरके रंगमंच पर पुनः शिव पार्वती दोनों परस्पर चक्रमण करते हुए बातें कर रहे हैं।

भवानी – प्राणनाथ! क्या ये दोनों दृश्य आपके रुचिके हुए?

भगवान – हां देवि! दोनों ही दृश्य मुझे अत्यन्त रुचिकर हुए। पहलेमें मैंने ग्रामीणोंकी गोके प्रति भक्ति श्रद्धा अनुराग प्रेम प्रशंसनीय पाया। दूसरेमें गोधनके प्रति राजाओंकी भी श्रद्धा भक्ति, उसकी रक्षार्थ तत्परता, युद्धमें भी शिष्टाचार मर्यादाका लिहाज रखना, धर्मके रक्षार्थ चौकन्ना रहना, युद्ध भी गोधन निमित्त होना, एक उसे अपने कब्जेमें रखना चाहता है। दूसरा अपने यहांसे हटाना नहीं चाहता इत्यादि 'एकाक्रिया अनेकार्थकरी' मैंने पायी है। अतः आपको भूरिशः धन्यवाद है।

भवानी – (मुस्कुराती हुई) अहो प्राणनाथ! मुझे साधुवाद दे रहें। यही मुझे चमत्कृत करता है। भगवन् मेरे तो कर्तव्य ही है आपकी रुचिको पूरा करना। इसीलिये मैं सृष्टि कर उसकी रक्षा तथा संहार किया करती हूं। भगवानकी इच्छा पूर्तिके निमित्त ही गोधन रत्नकी सृष्टि कर जगत्में एक तरफ कल्पवृक्ष दूसरी ओर कामधेनु द्वारा अमृतका प्रवाह बहा दिया है मैंने। मैं चाहती हूं कि वह सदा अपने स्वरूपमें ही रहे। उसके ऊपर देशकालका प्रभाव न पड़े। यही मेरा मनोरथ सरकार सुनें।

जगत् सर्जा पीछे गउ धन सृजा दिव्य धन भी
जिसे पाया प्राणी कलप तरु वो औषध सभी
न होता है कोई रुजभय न भूतादि भय ही
जहां गोमाताकी रहत वसती सर्व जग ही।

अच्छा तो अब हमलोग कैलासको ही चलें (ऐसा कहती चली जाती हैं। शिवजी भी उनके साथ ही चले जाते हैं। परदा गिरता है। दृश्य समाप्त होता है। विराट राजगोग्रहण दृश्य सातवां समाप्त। दूसरा अंक समाप्त।

अथ तृतीय अंक ३

गो नाना नाम कीर्त्तन दृश्य : ८ अष्टम

(स्थान :– बौद्ध विहार है। जहां अमर सिंह स्वर्गसे उतरकर बौद्ध भक्तिके कारण पृथ्वी पर लामावेशमें घूम रहे हैं। उनके साथ बौद्ध ब्रह्मचारी वेषमें दो चार शिष्य भी है)

अमर सिंह – *बुद्ध देवो णमो करुं सत्त जाणको खाण*
सिरी सुहा केवल लगी णा कछु अण्ण बखाण।

(यही मन्त्र जपते घूम रहे हैं। उसी समय एक शिष्य उनके पास जाकर पूछता है)

शिष्य – 'णमो बुद्धाय' यों प्रणाम करके गुरुवर्य! आपकी प्रसिद्धि है कि आपने गोमाताके बहुतसे नाम गिनाये हैं। तथा दूध दहीके बहुतसे भेद बताये हैं। गोमाताके भी तरह-तरहके भेदोंका वर्णन कर गये हैं। इसका क्या कारण है।

अमरसिंह – अहो वत्स! तुमने अच्छा पूछा गोका नाम लेना पुण्यप्रद और मंगलप्रद होता है। इसी कारण बहुतसी वस्तुओंके नाम गोनाम पर रखे गये हैं। भगवान् बुद्धदेवने भी गोमाताकी महिमा खूब गायी है। आवो पहले गो शब्दका ही वैदिक लौकिक अर्थोंको समझो बादको अपना अभिप्राय भी सुनना। वेदमें बहुत भिन्न-भिन्न अर्थोंमें गो शब्द तथा उसके पर्याय शब्द आये हैं। मैं पहले वे ही संक्षेपसे बताऊंगा।

शिष्य – जो भी गुरुदेवको रुचेगा वही हमलोगोंको भी अभीष्ट है।

अमरसिंह – वेदमें गोपर्याय शब्द – गो, अघ्न्या, उस्त्रिया, अही, मही, आदि इला, जगती, शक्करी, इत्यादि शब्द गो अर्थमें आये हैं। तथा गो शब्दका प्रयोग गो अर्थमें गौसे उत्पन्न गव्य दूध, दही, तक्र खीर खोवा इत्यादि अर्थमें और भी गौद्वारा जोतकर उपजाये अन्न अर्थमें भी आता है। क्रमशः उदाहरण देखो – 'मानस्तोके०' इत्यादि- मन्त्रमें 'गाय' अर्थमें। ऋ० (१/११४/८) कुछ भेदसे यह मन्त्र (यजुर्वेद १६/१६)में भी है। 'गोभिः श्रीणीत मत्सरम्' (ऋ० ९/४६/४) यहां गव्य दूध अर्थमें गो शब्द आया है। 'अग्नेर्वर्म परिगोभिर्व्ययस्व' (ऋ० १०/१६/७) यहां गौके चर्म अर्थमें गो शब्द आया है। 'गोश्रीता मत्सरा इमे' (ऋ० १/१३७/१) यहां भी गो शब्द गव्य दूध अर्थमें है। ऐसे ही बैलसे जोते खेतमें उत्पन्न अन्नके लिये भी 'गो' शब्द 'वशा' शब्द 'उक्षन्' शब्द आता है – 'उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय' (ऋ० ८/४३/११) उक्षासे उत्पन्न अन्नके लिये 'वश' नपुंसक सांड़से उत्पन्न अन्न के लिये भी उक्षन् वश शब्दका प्रयोग है। कहीं कहीं औषधि अर्थमें सोमरस अर्थमें गो पर्याय शब्द आते हैं। वृहदारण्यकमें औक्षेण आर्षभेण (६/४/१८) यहां औक्ष सोमरस है। ऋषभः शृंगी औषध लिया गया है। काकडासींगी अष्टवर्गीय औषधमें पड़ती है।

शिष्य – गुरुवर्य! इससे तो ज्ञात होता है कि वेदार्थ करना बड़ा कठिन है।

अमरसिंह – और क्या, इसीलिये तो लिखा है कि–

डरता वेद है जानो वस अल्पज्ञ विप्रसे।
मारे न थोथा मुझको अर्थानर्थ विचारसे॥

देखो वत्स! अघ्न्या गौके साथमें आकर रहने इत्यादि सार्थक धातु भी दानार्थक गत्यर्थक इत्यादि अर्थ वाले बन जाते हैं। जैसे– अघासु हन्यन्ते गावोऽजुर्न्योः पर्युह्यते (ऋ० १०/८५/१३) हन्यन्ते का 'भेजी जाती है' ऐसा अर्थ होता है। 'यो ब्राह्मण ऋषभमाजुहोति' (अर्थ० ९/८) आजुहोतिका 'देता है' ऐसा अर्थ होता है। जिसके लिये गायें दी जायं उसका नाम ही गोघ्न पड़ता था। उसे अतिथि कहा जाता था। इस भारतवर्षमें पहले गायोंका प्राचुर्य था। वस्तुओंका लेनदेन भी गायोंके द्वारा होता था। अतिथिको माय देना शिष्टाचारमें गिना जाता था। आगे आकर नासमझीसे लोगोंने 'गोघ्न' इत्यादि शब्दोंका मनमाना अर्थ करके अनर्थ कर डाला है। इत्यलम्। (उस वैदिककालमें और आज विधर्मी राज्योंमें बिल्कुल उलटा हो गया है। समझना कठिन है। उस कालसे इस कालके भेदको बिना अंग्रेजोंके लिखे इतिहास बदले कुछ जान नहीं सकोगे) इति शिवम्।

अब गो शब्दका लोकमें अर्थ समझो– पुलिंग गो शब्दका अर्थ– सूर्य, बैल, गोमेध, गौतम ऋषि ये चार अर्थ हैं। जब स्त्रीलिंग गो शब्द है तो- दिशा, वाणी, भूमि, गाय। ये चार अर्थ हैं। जब पुलिंग स्त्रीलिंग दोनोंमें प्रयोग करोगे तो- स्वर्ग, हीरा (बज्र), जल, किरण, दृष्टि (इन्द्रियां) लोम (बाल) बाण ये सभी अर्थ होते हैं। इतने अर्थमें गो शब्द इसलिये रखा है कि जितना भी गो शब्द उच्चारण करोगे उतने ही मंगल पुण्य तुम्हें मिलेगा। यों भी लोगोंको शुभ फल मिले यह ईश्वरीय विधान है।

शिष्य – इसीलिये गुरुदेव! आपने भी स्त्रीलिंग पुलिंग दोनों लिंगोंमें ही गो शब्दको रखा है।

अमरसिंह – हां, हां, लक्ष्य दृष्टिसे ही गोके तथा गो सम्बन्धी द्रव्योंके अधिक अर्थ तथा नाम मैंने गिनाये हैं। इस प्रकार भी लोगोंको पुण्यार्जन हुआ करे। गो शब्द सम्बन्धके नाम कीर्तन द्वारा भी।

शिष्य – तो गुरुदेव! अब अपने अभीष्टको हमलोगों पर अनुग्रह करके सिद्ध करें अमरकोशके गो सम्बन्धी नामार्थोंसे–

अमरसिंह – गऊके सभी अर्थोंमें गव्यका प्रयोग होता है। और यह तीनों लिंग है। गो सम्बन्धी दूध, दही, घी और गऊका विकार भी गव्य कहाता है। गऊके बिट्को गोमय कहते हैं। गोविट गोमय दो नाम है। पुंनपुंसक दोनों लिंग है। सूखे गोबर

को 'करीष' कहते हैं। वह भी पुंनपुंसक दोनों लिंग हैं। दुग्ध, क्षीर, पयस्, तीनों समानार्थक नपुंसक है। पयस्य, आज्य दधि इत्यादि सभीको (क्षीर) खीरको भी कहते हैं। गाढ़े दहीसे भिन्न सभीको द्रप्स (छांछ) कहते हैं।

शिष्य – 'दध्यादि'में आदि शब्दसे क्या लेते हैं? 'घनेतरत्' तो सभी तक्र कहा जायगा?

अमरसिंह – आदि शब्दसे तक्र उदश्वित् द्रप्स सभी लिये जायेगें। नवनीत (मक्खन)को पयस्य कहते हैं। यह पुंनपुंसक दोनों है। द्रप्स मथित दहीको ही कहते हैं। देखें – घृत, आज्य, हविष्, सर्पिसु, नवनीत, नवोद्धृत, ये सभी घीके नाम नपुंसक हैं। दण्डाहतं, कालसेयम अरिष्टं गोरसम् ये चारों तक्रके ही नाम हैं। बिना जलके मथित मात्रको 'मथितं दधि' कहते हैं। चतुर्थांशं जलयुक्त मथित दधिको तक्र, दण्डहत, कालसेम, अरिष्ट, गोरस कहते हैं। तथा जलयुक्त मथित दधिको उदश्वित् अर्द्धाम्बु कहते हैं। अरिष्टका दूसरा अर्थ भी है – अशुभ, सूतिका-गृह, आसन, ये भी नपुंसक हैं।

शिष्य – आचार्यपाद गुरुदेव! अब आगे हमलोगोंको बतावें –

अमरसिंह – दहीके ऊपरका पानी तथा कपड़ेसे छानकर निकले जलको मस्तु (नपुंसक) कहते हैं। नयी व्यायी गायके १० दिनके भीतरके दूधको पीयूष कहते हैं। उसे अग्नि पर पकाके गाढ़ा बना लेते हैं। वह भी पीयूष ही है। अमृतका भी नाम पीयूष है।

शिष्य – बिनागुरु कृपाके पूरा ज्ञान नहीं होता। अतः गुरुजी स्वयं बतावेंगे।

अमरसिंह – गोप, गोपाल, गोसख्य, गोधुक्, आभीर, बल्लव ये छः नाम अहीर के हैं। गो सख्यः और गोदुहः ये दो पुलिंग पाठभेद भी है। गवादि जानवर पैरमें बांधे जाते हैं। गलेमें नहीं। गोमी गोमान् गौके स्वामीको कहते हैं। गोकुल, गोब्रज, गोधन तीन नाम गो झुण्डका है। 'आशितंगवीन' शब्द विशेष्य निघ्न स्त्रीलिंग है। जहां चरकर सभी जानवर तृप्त हो जाय उसे ही आशितंगवीनं वन कहते हैं। देशोअरण्यानी वा उक्षा, भद्र, वलीवर्द, ऋषभ, वृषभ, वृष, अनडान्, सौरभेय, नव पुलिंग बैलके नाम है। बैलके झुण्डको औक्षकम् (नपुंसक) कहते हैं। गायोंके झुण्डको गव्या, गोत्रा, (स्त्रिलिंग) कहते हैं। वत्सोंके झुण्डको वात्सकम् (नपुंसक) कहते हैं। धेनुके झुण्डको धैनुकम् (नपुंसक) कहते हैं। सांडको महोक्षः (पुलिंग) कहते हैं। बूढ़े बैलको वृद्धोक्षः जरद्गवः (पुलिंग) कहते हैं। जो बछवा बैल तैयार हो जाता है उसे जातोक्षः (पुलिंग) कहते हैं। नये बछवेको तर्णकः (पुलिंग) कहते हैं। उससे बड़ेको शकृत्करिः वत्सः दोनों (पु०) कहते हैं। जब हलमें जोतने योग्य होते हैं, तो दम्य और वत्सतर (पु०) कहाता है। जब जुआमें जुड़ने लगा तो आर्षभ्य (पु०) हो गया। जब हल बहने लगा तो खण्ड, गोपति, इयूचर, इत्वर (पु०) कहाता है। बैलके कन्धे पर ऊँचे टीलेका नाम वह (पु०) है। नीचे लटके भागको सास्ना (स्त्री) गल कम्बल (पु०)

कहते हैं। नाथा बैल 'नस्तित:तस्मात् नस्ति' नस्ति (पु०) कहाता है। जुवा कन्धे धरने वालेका नाम प्रष्ठवाह युगपाश्वर्ग (पु०) है। जुआ ढोने वालेका नाम (गाड़ीके बैल)– युग्य, प्रासङ्ग्य, शाकट (पु०) है। हल वहने वालोंका नाम हलसे धरती खन देनेके कारण हालिक, सैरिक (पु०) कहते हैं। खूब बहने वालेका नाम– धुर्य, धौरय, धुरीण, धुरेन्धर, ध्रुवह (पु०) है। साथ बहने वालोंका नाम– एकधुरीण एकधुर एक धुरावह (पु०) है। सब बहने वालेका नाम– सर्वधुरीण, सर्वधुरावह (पु०) है। गायका लौकिक नाम– माहेयी, सौरभेयी, गौ, उस्त्रा, माता, शृङ्गिणी, अर्जुनी, अघ्न्य, रोहिणी, येनव है। उत्तम गायको 'नैचिकी' कहते हैं।

शिष्य– गुरुदेव! जब गायका नाम ही माता और अघ्न्या है तो मारनेका प्रश्न ही नहीं उठता है। फिर यह क्या जहां तहां गो बचावोका नारा सुनते हैं?

अमरसिंह–

विस्तीर्ण पृथ्वी है पड़ी, बहुभावि लोग विचित्र हैं,
क्या क्या न हो सकता भला घटना कछू न विचित्र है।
हैं देव राक्षस ही जहां हो मनुज हैं बसते सभी
तो क्यों न खावें मांस राक्षस हो मतारीका तभी॥

शिष्य– तो ऐसे राक्षसोंको फाँसी दे देनी चाहिये गुरुदेव!

अमरसिंह– हां अवश्य फाँसी देनी चाहिये। वेद में ऐसा ही लिखा है देखो ऋग्वेदके १० मण्डल में ८७ सूक्तका १६ वां मन्त्र है– वैसे अथर्वका भी (१/१६/४)को देखो।

हे भगवन! जो राक्षस - पुरुष सम्बन्धी मांसमें और पशुओंके मांसमें रूचि रखता है। और जो हमारे अवध्य गायोंके दूधसे हमें वंचित करता है उसके शिरको तीखे शस्त्रके प्रहारसे काट डालें। (ऋ० १०/८७/१६) यदि कोई हमारी गायको, अश्वको या पुरुषको मारता है, तो हम उसे सीसे (गोली)से उड़ा दें ताकि वह हमारे बीच न रह सके। (अथर्व १/.१६/४) यों ही- वेदमें गायोंकी बड़ी प्रशंसा है यजुर्वेदके १२ अध्यायके ४९ उनचासवां मन्त्र अनन्त धार वाले स्रोतस्के समान दूध घी देने वाली गायको (जो अदिति अघ्न्या है) मत मारो। पुन: १३ अध्यायके ४२, ४३, ४४, ४७, ४८वें मन्त्र में- हे अग्ने! अश्वकी अवध्य गौकी, हे अग्ने! भेड़की, द्विपाद पशुकी, एक खुरके पशुकी हिंसा मत करो। इत्यादि बहुतसे मन्त्र हैं। तो भी राक्षसोंको वेदमें गोवध सूझता है। सूर्य प्रकाशमें भी कहीं उल्लू रह सकता है? हमलोगोंको तो ऐसी बातें सुनना भी पाप है। देखो गायोंके विविध नामोंके उच्चारणसे इस पापको धो डालो–

शिष्य– गुरूदेव! आप कहें, हम सभी सुनेंगें।

अमरसिंह— देखो वर्णभेदसे गऊके नाम— शवली (चितकवरी) धवली, धवला, (सफेद) कपिला, पाटला (लाल) शृंगिणी, दीर्घा, ह्रस्वा, खर्वा, वामनी, एक एक वर्षा, एक हायनी, द्वि वर्षा, द्वि हायनी, त्रि वर्षा त्रिहायणी, त्र्यवर्षा चतुर्हायणी, चतुवर्षा, वशा, वन्ध्या (बांझ) अवतोका, बतोका दो, मृतवत्स (म्रवद्गर्भा) सन्धिनी (गाभिन) वेहत्-गर्भघातिनी (ठांठ गाय) काल्य उपसर्य, (उठी गाय) प्रष्ठौही, बालगर्भिणी (जल्दी वाह गयी) अचण्डी-सुकरा (सीधी गाय), चण्डी (छानकर दुहाने वाली), हरसाल व्यानेवाली- परेष्टुका। बहुत दिनकी व्यायी- चिर प्रसूता, वष्कयणी (बकेना) नयी व्यायी- धेनु, नवसूतिका। दूहनेमें सरल गाय- सुव्रता, सुखसंदोहा। बड़ी स्तन वाली- पीनोघ्नी, पीनस्तनी पीवरस्तनी। द्रोणक्षीरा, द्रोणदुग्धा- (एक द्रोण दूध देने वाली गाय), बन्धक पर रखी गाय धेनुष्या कहाती है। हर साल व्याने वाली गाय- समांसमीना है। उधस्, आपीन (नपुंसक) स्तनका नाम है। शिवक, कीलक (पु०) खूँटेके नाम हैं। बांधनेकी रस्सी (नपु०स्त्री) दमन् दामनी पशुरज्जु दो नाम है। मथनीका नाम- वैशाख, मन्ध, मन्थान, मन्थन् मन्थदण्ड पांच है।

शिष्य— गुरुवर्य! हन धातुका नाम सुनते ही आपने हिंसा शब्द श्रवणके प्रायश्चित रूपमें गोमाताके सभी नामोंकी आवृत्ति एक सांसमें कर डाली है। अहो अद्भुत! गोभक्तिकी पराकाष्ठा इसे ही कहते हैं। हमें भी आशीर्वाद दें कि ऐसी ही दृढ़ भक्ति हमें भी गोमाताके प्रति तथा भारतमाताके प्रति हो।

दूसरा शिष्य—नहि, नहि, पांचों गकारोंके[१] प्रति हमारी दृढ़ भक्ति हो ऐसा आशीर्वाद दें।

अमरसिंह— भगवान् बुद्ध शाक्यमुनि भी सात नामसे गोरक्षार्थ ही भारतमें अवतीर्ण हुए थे। यों हैं-[२] शाक्यमुनिस्तु यः सशाक्यसिंहः। सर्वार्थ सिद्धः। शौद्धदनिश्चयसः। गौतमश्वार्कबन्धुश्च। माया देवी सुतश्च यः सः (अमरकोशः)। अतः आज भी शिष्यगण जैसा चाहते हैं वैसे ही पांचों गकारोंमें आपकी दृढ़ भक्ति हो यह मेरा शुभाशीर्वाद है। (यह कहकर शिष्योंके साथ चले जाते हैं)। परदा गिरा गोमाता नाम कीर्त्तन अष्टम दृश्य समाप्त हुआ।

आर्थिक गोमहत्वका दृश्य : ९ नवमाँ

(स्थान :— उत्तर प्रदेश राज्यमें नैनीताल जिलाके काशीपुर तहसीलके समीप बालीराम नामक जमीन्दारके एक कोस भरके फार्मके अन्दर गोधनशाला है, जहां गायें सांढ़ बैल छोटे बछवे तरुण बछवे सभी बन्धन विमुक्त विचरते हैं। सेन्धानमक रखा रहता है। जब चाहते हैं तब चाट लिया करते हैं। खानेके

१. पुस्तकके १५.पंचदश दृश्यके अन्तमें पांचों गकारोंका उल्लेख है।
२. बुद्धदेवके सातो नाम।

चारोंका भी वहां ही प्रबन्ध है। ख़ाने पीने तथा घूमनेकी स्वतन्त्रता होनेके कारण सभी खूब हृष्ट पुष्ट स्वच्छ सुन्दर दीखते हैं। मालूम होता है कि गोलोक यहां बसा है। एक ओर आराम कुर्सी पर बाली राम सिक्ख वेशमें विराजमान हैं। दूसरी तीसरी कुर्सी पर उत्तर प्रदेश राज्यके पशुशालाध्यक्ष अपने सहायकके साथ विराजमान हैं। वे दोनों बालीरामके वैज्ञानिक हलोंको देखनेके लिये तथा ट्रैक्टरोंको बन्द कराकर हाथीके समान आठ जोड़ी बैलों द्वारा कृषि कराना देखने आये हैं। दोनोंमें परस्पर बातें होती हैं।)

पशुशालाध्यक्ष– (उठकर उनके साथ दोनों उठ जाते हैं आश्चर्य मुद्रामें) अये! परम प्रसिद्ध बालीरामजी! हमलोगोंने सुना है कि आपने अपने ११ ग्यारह ट्रैक्टर मशीनोंको बन्द करके वैज्ञानिक हल बनवाये हैं और उन्हीं हलोंसे आठ आठ जोड़ी बैलों द्वारा आठ आठ हल एक साथ अपने प्लाटोंमें चलवाते हैं। और ट्रैक्टरसे भी दुगुना अन्न उपजा रहे हैं। ये ही सब देखने हमलोग नैनीतालसे आपके फार्म पर आये हैं। कृपया हमें देखनेकी सुविधा दें।

बालीराम– (हर्षकी मुद्रामें) स्वर रागमें गाते हैं, भुजंग प्रयाच्छन्दसे–

सुधापान रोजे करे भाग्यशाली, रखेगा यही गाय जो रंग काली, ।
बताऊं उसे क्या न चिन्ता किसीकी, रहे दुग्ध घी गाय पोसी जिसीकी॥

अये अध्यक्ष महोदय! यह सब ठीक ही है। मैं स्वयं अपने परिवारोंके बीचमें अगल बगलके पुरजन परिजनोंको नित्यप्रति अमृतका पान करता कराता हूं। मेरे अगल बगलके सभी लोग दूध दहीके साथ घी में बने सभी पदार्थोंका सेवन करते हैं। जिससे वे लोग स्वर्गका सुख भोग रहे हैं।

अभी अचानक आ गये हुए आप लोगोंकी आतिथ्य सेवा में जो मैं समर्थ हो सका हूं। उसका कारण इन्हीं गोमाताओंकी सेवा है। मेरा यहां तो गोलोकका दृश्य सर्वदा रहता ही रहता है। तथा सर्वथा सभीको देखनेकी भी सुविधा रहती है। इस प्रान्तकी भूमि गोमूत्र तथा गोबरकी खादसे सींची हुई होकर सदा लक्ष्मीकी वर्षा करती रहती है। अत: हमारी वसुन्धरा सचमुच वसुन्धरा है। आप स्वेच्छया देख सकते हैं–

वसुन्धरा गोबर खादके बने, वसुन्धरा गोधन वाससे बने।
गोमूत्रसे वो हर बैलसे सदा वसुन्धरा सौंपत दिव्य सम्पदा॥

मेरी धानकी खेती चारों ओर मेड़ बंधी रहनेसे कोंसो लहलहाती हुई उत्तम वासमती धानके पौधोंके सीधे डण्ठलोंके लटके वालोंकी शोभा देखतेही बनती है।

दिग्व्यापिनी चल रही कृषि धानकी जो,
है उच्च वासमति धान कहात भी जो।

है लम्ब बाल झुलता मन लोभ लेला,
लागे यहां भ्रमरके रहता झमेला॥

(यह कहकर बालीराम मौन हो जाते हैं। तब अध्यक्ष पुनः बोलते हैं)

अध्यक्ष– बालीरामजी आप तो इतने मग्न हैं कि आपको देखकर हमलोगोंको भी श्रद्धा होती है कि कैसे हम ऐसे हृष्ट पुष्ट तथा सदा आनन्द मग्न रहा करें। आपके आतिथ्यको तो हमलोग जन्म भर नहीं भूलेंगे। चलिये अब अपने गोव्रजके निरीक्षणके आनन्दसे भी हमें आप आप्लावित करें। इसीलिये तो हमलोग नैनीताल ऐसे शीतल-अधित्यका प्रदेशसे इस उष्ण स्थलमें आये हुए हैं। चलिये आप आगे चलें हम आपके पीछे चलेंगे। (सभी गोव्रज देखनेके लिये जब तैयार होते हैं तो भीतरका परदा उठ जाता है। वहां बड़े भारी बाड़ेमें हाथीके समान बैल गायें बछवे घूमते हैं। गो मूत्रकी पोखरी दीखती है। गोबरका पहाड़ दीख रहा है। बालीराम हाथ उठा उठाकर सबको दिखा रहे हैं।

बालीराम– अध्यक्ष महोदय! आप दोनों मेरे गोव्रजको देखें। मेरे यहां सभी गाय बैल सांड़ बछवे खुले मुक्त बन्धन विचरते हैं। इसी कारण ये इतने हृष्ट पुष्ट हाथीसे दीख रहे हैं। इनको बन्धनमें रखना पाप है। छुटे होनेसे ये बड़े प्रसन्न रहते हैं। हाथीके समान इन बैलोंसे जोती गयी मेरी वसुन्धरा सचमुच वसुन्धरा हो जाती है। सोलह सोलह बैल जब एक पंक्तिमें मेरे वैज्ञानिक हलोंसे पृथ्वी जोतते हैं तो इनके सामने ट्रैक्टर भी पंगु हो जाते हैं। इन शिव वाहनोंके खुर जहां जहां धरा पर पड़ते हैं वहांसे पृथ्वीके विष सदाके लिये प्रस्थान कर जाते हैं। यह काम ट्रैक्टर नहीं कर सकते। देखिये वे ११ ग्यारह ट्रैक्टर जिन्हें मैंनें बन्द कराकर इन शिव वाहनोंको पाला पोसा है। इनसे मैं ट्रैक्टरोंसे दुगुनी धरा जोतता हूं। और ट्रैक्टरोंसे मेरी सम्पत्ति उतनी नहीं बढ़ी है। जितनी इनसे बढ़ती जाती है। अध्यक्ष महोदय! मैं कह नहीं सकता जबसे मैंने यह सात्विक खेती शुरु की है। तबसे मैं कितना आनन्दित और प्रसन्न व सुखी हूं।

देखिये ये गोबरके पहाड़ ये गोमूत्रकी नदियाँ मैं इन्हींसे पाता हूं। ये ट्रैक्टर नहीं दे सकते हैं। ये गोबर और गोमूत्र पौधोंके लिये तो अमृत हैं ही। पृथ्वीके लिये भी कायाकल्पका काम करते हैं।

अध्यक्ष महोदय! ईश्वरने जब धरा उगाई तो उसे सदाके लिये पुष्ट रखनेके निमित्त ही तरह तरहके जानवर बना दिये जिनके गोबर और मूत्र पृथ्वीके खाद बना दिये। और दूध मनुष्योंके लिये अमृत बरसा दिये हैं। सभी जानवर मनुष्योंके लिये सर्वोपयोगी हैं। गाय भैंस बकरी भेंड़ा ये सभी पृथ्वी व मनुष्यों, दोनोंके परमोपकारी है। घास खाने वाले जानवर तो मनुष्योंके बड़े भाई हैं ईश्वर ने ही बना रखे हैं। यह आसुरी

सम्पदा पच्छिमकी है जो तरह तरहके यन्त्रोंका आविष्कार करके इनका उच्छेद कर रही है। ईश्वरने तो ये जंगम यन्त्र मनुष्योंको दे रखे हैं। परस्परोपकारक भाव भी इनका दृढ़ अद्भुत है। आप इस पर गम्भीरतासे विचार करें। (यह कहकर बालीराम मौन होते हैं)

अध्यक्ष– (आश्चर्य मुद्रामें) बालीरामजी! आपने तो हम दोनोंको आश्चर्यमें डाल दिया है। हमलोग क्या कहें? हाथीके समान आपके बैलोंको देखकर गोबरोंके पर्वत गोमूत्रकी पोखरी देखकर हमलोग चकित हैं। जहां ऐसी खाद सम्पत्ति रोज उत्पन्न हो रही हो। वहां वसुन्धरा क्यों न सत्य सार्थक वसुन्धरा हो। अतः आप ही अपने गोव्रजकी महिमा संक्षिप्त ही हमको सुना दें।

बालीराम– अध्यक्ष महोदय! आप लोग! इतना ही देखकर चकित हैं। अभी तो आगे मेरी कामधेनुशाला, सुरभिशाला, धेनुशाला, समांसमीनाशाला, पयस्विनी शाला, घटोध्नीशाला, नैचितकी शाला, सुव्रताशाला, वयष्फयणीशाला इत्यादि भिन्न-भिन्न रंगकी गायोंकी शालाएं हैं। जिसमें तरह-तरहके रंग जातिके गायें बैल एक साथ रहते हैं। उन्हें भी आपसमें एक जातिके कारण बड़ा ही प्रेम रहता है। देखने वालोंको भी बड़ा ही कौतुहल होता है कि इतने रुप-रंग एक जातिमें है। सबको अंगुलियाँ उठा उठा कर बता रहे हैं।

अध्यक्ष– बालीराम जी! हमलोग सचमुच इन विचित्र भेद शालिनी गोजातिको देखकर कौतुहलसे आक्रान्त हो गये हैं। जब गो जाति पर इतनी कृपा ईश्वरकी है तो क्यों नहीं वे जगत्पूज्य तथा बन्द्य होवे। अहो-अहो!

बड़ी गोमहिमा बखानने न योग्य है मानवका कहे उसे।
रचा जभी ईश्वरने जगत् यहां तभी बड़ी श्रेष्ठ बना रखी उसे॥

हमलोग तो अनेक रंग और जातिके चित्र विचित्र गो जातिके जानवरोंको देखकर ही विमुग्ध हो गये हैं। हम कुछ नहीं कह सकते। आप ही इनके गुण दोष जानते हैं। और जो कुछ इनके संग्रहसे आर्थिक लाभ होता है उसके भी जानकार हैं। अतः संक्षेपमें इनके आर्थिक लाभका विवरण प्रस्तुत करें (यह कहकर उनके मुखकी ओर देखते हैं)

बालीराम– अध्यक्ष महोदय! मैंने तो आर्थिक लाभके ही लिये भिन्न-भिन्न गुण स्वभाव वाली गायोंको जुटा रखा है। नैचिकी सुव्रता सुरभि वयस्कयणी द्रोण द्रोणदुधा घटोध्नी इत्यादि गायें अमृत समान दूध देती हैं। अनायास सरलतया दुहा जाती। थोड़े खाती हैं। बहुत दूध देती हैं। उनसे उत्पन्न बैल खूब खेतीमें काम देते हैं। हर वहनेमें इस जातिके बैल बहुत ही सीधे होते हैं। आपसमें लड़ते नहीं द्रोणदुहा घटोध्नी दूध भी अधिक देती हैं। इनके सन्तान भी बड़े बहादुर होते हैं। सृष्टि गाय

एक ही बार व्यायी तो क्या बराबर दूध देती रहती है। मैं क्या गायोंकी प्रशंसा करुं। इनका नाम ही माता है। ये गायें मनुष्यकी माताएं हैं। इनके पालनेसे मनुष्यके उभय लोक बन जाते हैं। इस लोकमें तो वह सभीसे अधिक सुखी सम्पत्तिशाली होगा ही परलोक भी उसका गो सेवाके कारण सुधर जाता है।

इनके गोबर खेतमें पौधोंके लिये सुधा है। मूत्रसे सभी रोग मनुष्य तथा पौधे दोनोंके नष्ट होते हैं। इनके बछवे खेत जोतें। दूध अमृत समान दें। ये इनके मरने पर चर्म, सींग, खूर गोरोंचन सभी उपयोगी ही तो हैं। क्या क्या बताऊं? पूछिये नहीं? इस धरती पर गाय सचमुच कामधेनु ही है। इनसे लाखों रुपयोंकी आय हर मास होती है।

ऋग्वेदमें इसकी यों प्रशंसा है। (भुजंगप्रयात से)

दुहाती रहे गाय मेरे घरोंमें, करे भद्र मेरा रभांती घरोंमें।
बने पुष्ट सन्तान लक्ष्मी कहाती हमें सर्वदा कष्टसे है बचाती॥
(ऋ० ६/२८/१)

चाणक्य आदि अर्थशास्त्रियोंने भी गाय की खूब प्रशंसाकी है। देखिये –

(स्रग्विणीसे)

गाय है सर्वदेव प्रिया सर्वदा, सर्वधर्मार्थिदायी सदा दुग्धदा।
गोबरोंमें बसे श्री बसे मूत्रमें जन्हुकन्या बसें, काल है रक्त में॥

अध्यक्ष महोदय! आपने जो पूछा सो तो मैंनें कह दिया है। कहिये अब क्या सेवा करुं?

अध्यक्ष – बालीरामजी आपकी वाणी दूधके ही समान सुधा बरसा रही है। जो आप कह रहे हैं। कहते चलें। बड़ा ही अच्छा लग रहा है।

बालीराम – अध्यक्ष महोदय! गो महिमा अवर्णनीय है। देखिये मैं ही अकेले नहीं, यहांके सभी लोग परिजन पुरजन सहित अमृत पान कर रहे हैं। सभी लोगोंने ही ट्रैक्टरोंको बन्द कराकर मेरे वैज्ञानिक हल खरीद लिये हैं। ऐसे ही बड़े-बड़े गाय बैल पोसे हैं। दूध दही भी खूब खा पी रहे हैं। खेती भी ट्रैक्टरोंसे दुगुनी हो रही है। खाद जो इनको खूब मिल रही है। जिससे वसुन्धरा देवी सदा खुश ही बनी रहती हैं। खूब इन्हें अन्न सम्पत् देती है।

मैंनें भी बहुत अर्थ क्षति उठाकर ये ट्रैक्टर बन्द किये हैं। हजारों रूपये इनके खरीदनेमें लगाये हैं सर्वदा ये बिगड़ते रहते हैं। इनके मरम्मतसे सैकड़ों खर्च होते हैं। बिलायती खाद खरीदो, जिनसे अन्नका स्वाद चला जाता है। ट्रैक्टरोंने बैलोंको खा लिया। दूधके पाउडर गायोंको खा जांयगा। यह देश कहाँ जायगा जरा सोचें

तो आप। अस्तु, मैं जब ट्रैक्टरोंसे ऊब गया। तब यह वैज्ञानिक हल निकाला और शिव वाहनोंकी सेवामें लगे। तबसे मैं बड़ा ही सुखी हूं। मैं अपना आनन्द और खुशी बता नहीं सकता, ट्रैक्टरकालका दुःख और शिव वाहनकी सेवा कालका सुख, दोनों वर्णनातीत है। थोड़ेमें आपसे कहना है।

क्योंकि आप विज्ञ हैं 'अनुक्तमप्यूहति पण्डितो जनः ? (ज्ञानी आदमी सभी बातें इशारे पर समझ लेते हैं) आप सब समझ गये। हमारी सरकारको (गर्त) गढेमें गिरनेसे बचाइये। इस आसुरी सम्पदाको यहां शीघ्रातिशीघ्र बन्द कराइये। अपने हलोंको तथा बैलोंको वैज्ञानिक बनाइये। वे ईश्वरी जंगम मशीन हैं। उन्हीं मशीनोंको बढ़ाइये। इन आसुरी मशीनोंको जैसे बने वैसे जल्दी बन्द कराइये। इति शिवम्।

अध्यक्ष– बालीरामजी आपने तो हमारी आंखें खोल दी हैं। मैं सब समझ गया ईश्वरके जंगम मशीनके गुण तो अवर्णनीय है। वह स्वयं खाद भी उत्पन्न करता है खेती भी करता है। उसी खेतीसे अपने और अपने स्वामीके सभी कार्य सिद्ध करता है। ट्रैक्टर तो बिल्कुल इसके विपरीत है। वह सभीको बरबाद ही करता है। वह तो सचमुच इस देशका बकासुर है।

हम क्या कर सकते हैं। हमारी सरकारने असुरोंको गुरु बना रखा है। वह हमारी एक नहीं सुनेगी। जब तक सिधरी (मछली) पहाड़ तक नहीं पहुंच जाती तब तक लौटती नहीं। जब सरकार देशको इन आसुरी सम्पदाओं द्वारा खूब नष्ट भ्रष्ट कर लेगी तभी इसे स्वयं हटावेगी। हाय! हाय! क्या भगवानको 'कालोस्मि लोकक्षयकृत प्रवृद्धो' ही अभीष्ट है क्या?

अये कृषि-विशेषज्ञ बालीरामजी आपकी दृष्टिसे विचार करने पर हमें सूझता है कि भूमि पहले सात्विक खाद गोबर गो मूत्र लेती थी और शिव वाहनोंकी खूरसे रौंदी जाती थी तो सात्विक स्वादिष्ट अन्न पैदा करती थी। अब तो आसुरी ट्रैक्टरसे जोती हुई आसुरी खाद खाकर विष उगलती है। इन अन्नोंमें न कुछ स्वाद है। न सात्विक बल है। यों ही भूसे भी जो मशीनके हैं गाय व बैलोंके प्रिय नहीं है। इन असुरोंने मानव और जानवर दोनोंके सुखोंको दानव बनकर चूस लिया है। तभी तो इनकी चेलिन बनी हमारी सरकार मछरी अण्डे खिलानेके लिये 'मत्स्य पालन' 'मुर्गी पालन' विभाग खोल रही है। इनमें पानीके समान धन बहा रही है। गाय बैल पोसनेके लिये क्यों नहीं अनुदान देती। हम तो देखते हैं। 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि' यही उक्ति चरितार्थ हो रही है। नहीं तो कहां देहात्मवादी यूरोप कहां अध्यात्मवादी भारत उसका चेला बन रहा है।

अध्यक्ष– अध्यक्ष महोदय! आप तो स्वयं सब जानते ही हैं। गोवंशकी वृद्धिसे राष्ट्रकी बड़ी वृद्धि होती है। ऋग्वेद और अथर्ववेद दोनों ही गोव्रजकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। दोनोंका कहना है कि जब अघ्न्या गायें सदा सुखी प्रसन्न रहती हैं तो वह राष्ट्र भी सुखी प्रजा सम्पन्न रहता है। गोवंश वृद्धिसे राष्ट्रकी वृद्धि वेद बताते हैं। यह ट्रैक्टर दानव तो गोवंशका विच्छेद करने पर ही तुला हुआ है। जब यहांसे गोजातिका ट्रैक्टरके कारण बिलकुल बहिष्कार (विलय) हो जायगा तो गोबरकी खाद वो गोमूत्र बिल्कुल इस देशसे उच्छिन्न हो जायेगें। भारतवर्ष भी म्लेच्छ देश हो जायगा। गोबर गणेशजीका अभाव व गोपाल गोविन्द ये सब नाम भी लुप्त हो जायेंगें। गोवत्स अजापुत्र विलीन हो जायेंगें। तभी तो पूरा कलि हो जायगा।

इसका उपक्रम आज ही प्रारम्भ हो गया है। मैं निराश होकर भगवान ही को पुकारता हूं। वही बचावें अपने प्रिय गोवंशको।

हे भगवान! हे गोविन्द!

गोवंशको कालियसे बचावें
अरण्यमें ग्वालनको बचावें।
मिले हमी जो प्रभुको जगावें
बने · वकी ट्रैक्टरको भगावें॥

अध्यक्ष– महात्मन् बालीराम जा! आपकी दृष्टिसे हम सब भी देखना चाहते हैं इससे हमारी दृष्टि बड़ी बारीक हो जाती है। जैसे आपने कहा है। सभी मानव भोज्य अन्नोंमें – गेहूं-धान-बाजरा-मकई-मसूरी-अरहर-मटर-चना-जौ इत्यादिमें बाहर रहने वाले डण्ठल पत्ते तुष् (त्वचा) भूस्से भूस्सी इत्यादि भाग जानवरोंका होता है। बहुत सूक्ष्म भाग भीतरके दाने मानवोंके लियें रखे गये हैं इसी तरह सूखे कपास इत्यादि में डण्ठल पत्तेके अतिरिक्त विनौले (कपासके बीज) जानवरोंका अत्यन्त प्रिय खाद्य पुष्टिकारी भी ईश्वर ने रखा है। तेलहनोंमें देखिये सरसों तीसी (अलसी) इत्यादिमें तेल निकालने पर खरी (सिट्ठी) जानवर का कितना प्रिय वह भाग है। मूलकन्द इत्यादिमें देखिये सभी ऊपरके भाग जानवरोंका है। बहुत थोड़े सूक्ष्म भाग ही मानवोंका है। कितनी बातें दिखाई जायं। थोड़े में समझें इन वस्तुओंको उत्पन्न करना भी खेत जोतकर दबरी करके मनुष्योंके सामने रख देना ये सभी काम जानवरोंके हैं। वे सभी आज ये राक्षस ट्रैक्टर आदि तरह-तरहके मशीन बनाकर छीन रहे हैं। इन जानवरोंकी जीविका छीन कर अपने को वैज्ञानिक घोषित करते हैं। और ये मैकालेके मानस पुत्र भारतीय, इनका नकल करके इनको बढ़ावा दे रहे हैं।

'ऊँटके विवाहमें गदहोंका गान' परस्पर प्रशंसा हो रही है। 'अहो रुपम्! अहो ध्वनि: !!'

(उष्ट्रकाणां विवाहेतु गर्दभा एव गायका:
परस्परं प्रशसन्ति अहो! रुपम् अहोध्वनि:)

गदहा ऊंटकी प्रशंसा करके कहता है। वाह (शाबास) कैसा सुन्दर रुप है। उसके बदलेमें ऊट भाई ही गदहेके गानकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं। वाह वाह (शाबास, शाबास) कैसी सुन्दर ध्वनि निकल रही है। वही यह वैज्ञानिकता है। पहले जानवर उच्छिन्न किये जा रहे हैं। बाद ये मानव स्वयं मकडेके जालके समान अपने बनाये इस वैज्ञानिक जालके फन्देमें फंसकर मर जायेंगे। जैसे रेशमके कीड़े मकोडे अपने ही जालमें फंसकर मरते हैं। बस-बस बालीरामजी! मुझसे अधिक न कहलावें। इस विज्ञानका यही नतीजा एक दिन निकलेगा सुन्दीप सुन्दका न्याय बहुत प्रसिद्ध है। भगवानने उल्टी बुद्धिका लक्षण कहा है–

कहता धर्म अधर्मको उलटी जिसकी बूझ।
तामस गुणयुत बुद्धिको बुद्धि तामसी सूझ॥

(यह कहकर चुप हो गये)

बालीराम– साधु साधु अध्यक्ष महोदय! आपने तो भावावेशमें आकर आखिरी नतीजा (अन्तिम परिणाम) तक पहुंचा दिया है। आपने मेरे भावको पूर्ण समझ लिया है। अब मुझे कुछ कहना नहीं है। देखिये– देवसम्पत्तिशाली इस भारतमें दैव सम्पत् गोवंश वृद्धिका ही कार्य होना चाहिये।

उसमें विज्ञानके प्रयोग हो गायें द्रोण दुधाएं हों। बैल हाथीके कान काटें। गेहूं कानी अंगुलीके बराबर हो। मटर चना गूलरके बराबर बनाइये इधर विज्ञान लगाइये।

थोड़ेमें सुनिये– *होवें यहां बैल बड़े बड़े सभी,*
हों गाय भी द्रोण दुधा यहां सभी।
बहे सदा दूध दही नदी यहां,
हो उर्वरा अन्नमयीधरा यहां॥

पूरी करें वृष्टि पयोद भी सदा,
फूले फले वृक्ष लता यहां सदा।
रहे यहां गोबर खादकी कथा,
बना रहे स्वाद अनाजमें यथा॥

नेता तजे दम्भ पखण्ड धूर्तता,
रहे कहीं ना जन-वर्ग-मूर्खता।
हो वृद्धि तो जंगम-यानकी यहां,
विलीन हो यान मशीनके यहां॥

गोवंशमें मानव वंशमें घना,
परस्परं प्रेम सदा रहे बना।
दी ईशने खाद्य-निवास-एकता,
बनी रहे तो दृढ़ बन्ध बन्धुता॥
हां! क्यों बढ़े आसुर सम्प्रदाय हां,
प्रत्यक्ष जो नाश-करी बनी वहां।
न देह-वादी यह देश है कभी,
जो पश्चिमी देश कहावते सभी॥
जगद्गुरुका पद है मिला जहां,
क्यों म्लेच्छ-आके बनते गुरु वहां?।
क्यों ना मिलेगा परिणाम बेतुका,
न अन्त होगा यदि दुष्ट हेतुका॥

यों मैं थोड़ा ही कहकर विश्राम लेता हूं। (यह कहकर बालीराम चुप हैं)

अध्यक्ष – जगत्के उपकार करने वाले बालीरामजी! हमलोगोंका आजका दिन बड़ा ही अच्छा है कि आपके दर्शन हुए और आपकी गोधन-शाला देखनेका अवसर मिला। ईश्वरकी कृपासे यह हमारे पूर्व-जन्मका पुण्य है कि हम यहां आ गये। आपका गव्यपान द्वारा आतिथ्य् तथा इस गोधनका निरीक्षण इस जन्ममें भूलनेका नहीं। आपको भूरिशः धन्यवाद देकर हम लौट रहे हैं। आपका बहुत समय लिया है इसके लिये क्षमा मांगते हैं। जै, जय भारत।

(यह कहकर लौटना चाहते हैं कि बालीरामजी पुनः घेर कर बड़े पंजाबी गिलासमें दोनोंको लस्सी पिलाकर बिदा करते हैं। दोनों परस्पर हाथ मिलाकर बिदा लेते हैं। बालीराम वहां ही रह जाते हैं) परदा गिरता है। गऊका आर्थिक महत्व दृश्य नवाँ समाप्त। तीसरा अंक भी समाप्त।

अथ चतुर्थ अंक ४

गोमेधाश्वमेधादिवैदिकशब्दार्थ दृश्य : १० दशम

(स्थान :– काशी क्षेत्रका कन्या शिक्षा मन्दिर। वहां दो वैदिक विद्वान परस्पर संलाप करते प्रवेश करते हैं)

प्रथम – (आश्चर्य मुद्रामें) अये विद्वन्! मैनें सुना है कि आजकल धरातलमें कहीं भी गोचर भूमि (ब्रजभूमि) अश्वचर (आर्वभूमि) मेषचर (गान्धार भूमि) पशुचर (ब्रजभूमि) या (पाश्चरभूमि) है ही नहीं। जो प्राचीनकालमें सर्वत्र प्रसिद्ध थी। और जिसके लिये राष्ट्रकी समृद्धिकारी गोमेध, अश्वमेध, आवीमेध, मेषमेध, अजमेध, महिषमेध आदि बड़े-बड़े याग होते थे।

यहां भारतमें इन पशुओंकी समृद्धि थी। इन पशुओंके चारागाहके लिये इनके नामसे भूमि परती छोड़ी जाती थी। राज्यकी ओरसे उसकी व्यवस्था होती थी।

द्वितीय – (आश्चर्य मुद्रामें ही) अये महात्मन्! आप इतनेके लिये आश्चर्य प्रगट कर रहे हैं? इस समय तो इन शब्दोंका उल्टा अर्थ हो गया है। स्वयं पण्डित लोग भी मूर्खोंमें प्रसिद्ध अर्थका समर्थन करते हैं। मूर्ख लोग कहते हैं कि यहां 'अश्वमेध' 'गोमेध' इत्यादि यज्ञ होते थे। जिसमें घोड़ेको काटकर हवन किया जाता था। बादको वह जी उठता था। यों ही गाय और बैलकी भी दशा होती थी। इत्यादि अनाप-शनाप बातें मूर्ख जनतामें फैली है। पण्डित भी बिना जाने समझे इन बातोंका समर्थन कर दिया करते हैं।

प्रथम – हां! हां! ऐसी अनर्थ परम्परा फैली है। केवल अर्थ ही नहीं भूला है। उसका उलटा अनर्थ भी फैल गया है। इसके निवारणका उपाय तो शासकोंके द्वारा होना चाहिये। यह तो भारी अनर्थ-बीज जड़ जमा चुका है। मनुजीके कथनानुसार तो यह वाक्स्तैन्य हुआ। वाक्स्तेनता तो चौर्यमें गिना जाता है। मनुने लिखा है –

(दीपकछन्द) –

वचनके बल जगत्का जो सभी व्यवहार होता है।
वचनका चोर जो होता सभीका चोर होता है। (मनु० ४/२५६)

यह मनुकी उक्ति यहां अक्षरशः सत्य हुई दीखती है। हाय! हाय! इतना अनर्थ भारतमें चल रहा है। और यहांके शासक कानमें तेल डाले पड़े हैं। इसका संशोधन नहीं कराते।

द्वितीय – हां महाराज! आप तो सत्य ही कह रहे हैं कि शासन नहीं कराता। न वह करा सकता है। यह कार्य तो पण्डितोंका है। पण्डित लोग शास्त्रोंका गम्भीर

अध्ययन, इन शब्दोंका यथार्थ अर्थ, सबके सामने रखे तब न यह जन्मका कोढ़ छूटे। जब स्वयं पण्डित ही अज्ञानमें पड़ा है। तो वह क्या कर सकता है? देखते नहीं पशुयागके नामसे आज जहां तहां ग्रामोंमें काली मन्दिरोंको बूचरखाना बनाये हुए हैं। वहां बकरे काटे जाते हैं।

गोमेध, अश्वमेध, गौओंकी वृद्धि अश्वोंकी वृद्धिका उपाय करना राष्ट्रोंको इनकी समृद्धिसे विभूषित करना। इनके चरागाहके लिये परती जमीन छोड़ना ये सब बातें तो दूर गयी। उलटे इन्हें मार डालना अर्थ कर डाला है। यह कितना अनर्थ है।

आज भारतवर्षमें पशुओंके नाम पर कहां परती जमीन छूटी आपको मिलेगी? रेल लाइनके बगलकी जमीन भी जोत जोतके लोग खेत बनाते जा रहे हैं। चार आंगूलकी जमीन भी गोचरके नाम पर यहां नहीं मिलेगी।

प्रथम– अहो! ऐसी स्थितिमें तो पहले इन शब्दोंके वैदिक कालिक अर्थ बताना बड़ा आवश्यक है। बाद उसके प्रचारका भी प्रबन्ध करना है। पहले तात्कालिक अर्थ ही समझाना है। आप सुननेको सावधान हो तो मैं इसका उपक्रम करूं।

द्वितीय– हां, हां, भला अत्यावश्यक कार्यके कारण क्या नहीं त्याग किया जा सकता है? मैं सर्वदा सावधान हूं। आप उपक्रम करें–

प्रथम– देखिये यज्ञकी कल्पना ही सृष्टिके आधिदैविक और आध्यात्मिक सूक्ष्म तत्वोंको बतानेके लिये आध्यात्मिक तथा आधिदैविक तत्वोंके प्रतीक रूपसे रखी गयी है। निरुक्तका एक वाक्य है–

'याज्ञ-दैवते पुष्पफले, देवताध्यात्मेवा' (निरु० १/१९)

अर्थात् पुष्पसे फल होता है। वैसे ही यज्ञप्रक्रियासे ब्रह्माण्ड (दैवतप्रक्रिया)का ज्ञान होता है। पुनः दैवत प्रक्रियासे अध्यात्म-प्रक्रियाका ज्ञान भी पुष्प-फल वत् स्थायी है। आधिदैविक ज्ञानसे आध्यात्मिक ज्ञान होता है। अतः आधिदैविक ज्ञान पुष्प है तो आध्यात्मिक ज्ञान फल हुआ। निष्कर्ष यह है कि अध्यात्मज्ञानमें दैवतज्ञान कारण है। दैवत-ज्ञानमें याज्ञ-ज्ञान कारण है। इसलिये शतपथ आदिग्रन्थोंमें याज्ञिक प्रक्रियाकी व्याख्यामें इत्यधियज्ञम्, अथाधिदैवतम्, अथाध्यात्मम्। ये तीनों बातें आती हैं। अतः स्पष्ट प्रतीत होता हैं कि यज्ञ केवल ब्रह्माण्ड पिण्डका ज्ञान कराने वास्ते नाटक मात्र है। वेदी निर्माणसे लेकर पुरोड़ास हवन (घृताहुति) तक सभी क्रियाएं ब्रह्माण्डमें सृष्टि तत्वकी प्रक्रिया बतानेका नाटक है। और पुरुषोंमें त्याग भावना सिखानेके लिये तथा बाहरी वातावरणको शुद्ध स्वच्छ बनाने तथा अंतिम् फल समष्टिमें एकता लाने, बिना ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र इन चारों शक्तियोंको मिले जगत्का कोई कार्य नहीं होता है, इन्हीं भावोंको बताने वास्ते ऋषियोंने यज्ञका नाटक किया है।

इसीलिये इस नाटकमें सूर्य किरणें वायु अग्नि पृथिवी इनको पशु बनाया गया है। इस कल्पनासे भी तो आंख खुलनी चाहिये कि इनका बध क्या हो सकता है। यहां तो सूर्य कहीं अश्व है। किरणें कहीं रस्सी हैं। कहीं गो पृथिवी है। कहीं मनुष्य वाणी गो है। क्या-क्या बताऊं, वेदार्थ मूर्खोंके लिये नहीं है। ऋषियोंके भावोंको भी लोगोंने बिगाड़ कर यज्ञोंका तरह तरहका फल कल्पना कर लिया। बादको नये नये यज्ञ भी गढ़ लिये गये। मन्त्र भी गढ़े गये। पहले सृष्टितत्वके प्रतीक नाटक रूपमें यज्ञ होते थे। उसमें पर्याग्नि करणान्त, पशुओंका उपयोग करके, उसके बाद उत्सर्जन कर दिया जाता था। केवल पुरोड़ास (घृताहुति) करके नाटक यज्ञ समाप्त होता था।

बादको मनुके पुत्रों नरिष्यन् नाभाग् ईक्ष्वाकु आदि द्वारा यज्ञोंमें पशुवध प्रारम्भ हुआ फिर क्या पूछना है। आसुर प्रकृतिके मनुष्योंने जो जो चाहा सो सो कर डाला। अश्ववामीय सूक्त प्रथम अध्याय एक सौ चौसठवें (१/१६४) सूक्तमें सूर्य और उसकी रश्मियोंका वर्णन है। १/१६२-से १६४ तक आधिदैविक तत्व ही वर्णित है। इसका प्रबल प्रमाण है वृहदारण्यकके आरम्भमें (ऋ० १/१६२) सूक्तमें निर्दिष्ट अश्वांगोंकी आधिदैविक व्याख्या। क्या क्या बताया जाय— पुरुष-मेधका वर्णन यजुर्वेदके ३०वां और ३१वां अध्यायोंमें है। वहां पुरुष और मेध क्या है। इसका निर्वाचन आधिदैविक और आध्यात्म ही है। आधिदैवत पक्षमें नारायण (आदित्य) पुरुष हैं। और ये सभी लोक उनका मेध अङ्ग है। (देखो— शतपथ १३/६/१/९) किरण रुपी रस्सियोंमें सभी लोक बंधे हैं। आध्यात्मिकमें जीवरूप पुरुष अनेक प्रेम बन्धन पुत्र, पत्नी, धन, जन समाज सभी बन्धनोंमें बंधा है। १८४ प्रकारके पुरुषोंको एकत्र करके उनसे ऊपर उठनेका प्रयत्न करेगा। यह आधियज्ञ पक्ष है। योंही सर्वत्र अश्वमेध गोमेध आदि सभी शब्दोंको समझना है। मेधका अर्थ मेधृ-संगमें धातुसे धत्र् करके भावमें मिलाना, मिलना, बढ़ना, बढ़ाना, अङ्ग, पवित्रता इत्यादि अर्थ कर सकते हैं। धातूनाम्-नेकार्थत्वम् है ही। वैदिक शब्द यौगिक ही होता है। अतः पुरुषम् एधयतीति पुरुषमेधः पुरुष पूर्व कण्यन्त एधसे चत्र् प्रत्यय करके मुमूका निपातन करके भी पुरुषमेध अश्वमेध गोमेध इत्यादि शब्द बना लें। पश्चिमी गोभक्षकोंको गुरु बनाकर घोड़ा खाना, गाय खाना, राक्षस बनकर पुरुष खाना इत्यादि अर्थ उन्हीं राक्षसोंके लिये छोड़ दें।

द्वितीय— ओहो! आपने तो भावावेशमें मेरी आंखें खोल दी। मैं तो समझ गया कि क्यों यज्ञकी कल्पनाकी गयी और आज क्या उसका स्वरूप हो गया है। आधिदैविक और आध्यात्मिक अर्थोंकी तो बात ही विलुप्त है। आधियाज्ञिक अर्थ भी बिल्कुल उलट गया है। पुरुष, अश्व, गउवों (गौवों)की वृद्धि गव्यादिकी वृद्धि इत्यादि अर्थकी जगह न जाने क्या क्या अर्थ लोगोंने कर डाला है। हमलोगोंने समझा था कि भारत

जब स्वतन्त्र होगा तो भारतका सच्चा भारतीय स्वरूप निखर उठेगा। मुसलमानों तथा अंग्रेजोंने जो भी इतिहासके बहाने यहां विष वमन किया है, शास्त्रोंका वेदोंका अर्थ उलटा पुलटा किया है, वे सब निकाल फेकें जायगें। सच्चा इतिहास, सच्चा वेदार्थ, सत्य-भारतीय मर्यादा व संस्कृति पनप उठेगी। भारतीय स्वतन्त्रताका भाव जाग उठेगा। इत्यादि बातें सोची थी सो तो स्वप्न हो गया। यहां तो उलटा छूटकर यूरोप बनानेका मशीन खुल गया है। घर घर जन जन यूरोपीय (पश्चिम देशीय) भाषा, भाव, परिच्छेद क्या क्या बताऊं सभी जगह पश्चिमके भावोंका इंजेक्शन लग गया। चिकित्सा पश्चिमी, शिक्षा पश्चिमी, विनोदगृह सिनेमाघर पश्चिमी, कथा पुराणका नाम नहीं। सबसे बढ़कर हमारे देशका हृदय जो स्त्री समाज था वहां भी पश्चिमी संस्कृति राक्षसी पैठ गयी है। अब तो खुलकर गर्भपातादि दुर्गुणोंका प्रवेश हो गया है।

थोड़ेमें कहना है कि यह पूतना राक्षसी भारतको मारने आई है। कोई भी शिशु कृष्ण बनकर इस राक्षसीका हनन करे। नहीं तो यह भारतकी स्वतन्त्रता नहीं है। यह तो यूरोप स्वतन्त्र हुआ है। यहां भारतमें आकर नंगे नाच रहा है। यहांके शासक ढोल मजीरे बजाकर खूब बढ़ावा दे रहे हैं। शब्द नहीं है। जिससे मैं इस यूरोपीय स्वतन्त्रता राक्षसीका वर्णन करुं। इतना ही कहूंगा कि भारतको जेलमें बन्दकर यूरोपको नंगे नाचने की छूट है।

प्रथम– तभी तो आज पच्चीस वर्षकी स्वतन्त्रतामें भी मनुकी उक्ति सफल नहीं हो रही है।

दोहा– *भारतमें जन्में हुए आर्य-विप्र ढ़िग आय,*
द्वीप द्वीपके नर सभी निज चरित्र सिख जायं।

यह भारतका आदर्श वाक्य आज तक प्रसारित नहीं हुआ। अधिक क्या कहूं– अत्यावश्यक वैदिककालिक 'गोमेध' 'अश्वमेध' 'पुरुषमेध' इत्यादि शब्दोंका अर्थ शासकोंने जनतामें गौओंकी वृद्धि घोड़ोंकी वृद्धि १८४ प्रकारके पुरुषोंसे बढ़कर अपनेको बनाना इत्यादि अर्थ कहां फैलाया? सभी लोग तो वही मूर्खताकी बातें करते हैं। पुरुषमेध-पुरुष मारना इत्यादि। सारी विडम्बना तो देशी विदेशी राक्षसों द्वारा चलाई गयी प्रथाकी है। इसे दूर करना है। देखिये 'गोमेध' शब्दका अर्थ पहले क्या समझा जाता था–

गोमेध था गव्य पदार्थवृद्धि प्रख्यात सर्वत्र पुरा युगाद्धि,
घी दूधमें खीर पुरी बनी जो गोमेध वे ही कहते सभी जो।
थी छूट खाने अरु पानमें भी गोमेधके यज्ञ करें धनी भी,
गोमेध राजा करते सदा थे बोलें सभी लोग कथा वहां थे॥

जब तक गव्य पदार्थकी वृद्धि गोधनकी समृद्धि अश्व-घोड़ोंकी वृद्धि राष्ट्रकी समृद्धि इत्यादि वैदिक कालिक यथार्थ अर्थ इन शब्दोंका जन जन में, घर घरमें व्याप्त नहीं हो जाता है तब तक इस राष्ट्रका अभ्युदय कहां? (ऐसा कहकर बैठ जाते हैं)

द्वितीय– महाराज! आप तो जानते ही हैं। पहले यहां गाय ही द्रव्य-विनियमका साधन थी। सारा व्यापार गोजातिके आधार पर ही होता था। इस कारण गोजातिका पूर्वकालमें बड़ा सम्मान था। एक ग्रामसे दूसरे ग्राम जानेमें, वस्तुओंको एक ग्राम से दूसरे ग्राम ले जाने, ले आनेमें अधिक क्या कहना है। इस देशमें गो जातिके साथ मानव जातिका भाई चारेका व्यवहार था। जब से ये पश्चिमके देहात्मवादी स्वार्थी म्लेच्छ जातिके गोभक्षक आये इन्होंने विज्ञानके नाम पर सभी विभांगोंमें लौह यन्त्र चलाकर सभी जानवरोंका उच्छेद कर दिया है। अन्धे भारतीय आंख मूंद कर इनके विज्ञानके चाकचिक्यमें फंसते जा रहे हैं।

इनका परिणाम जो होगा। वह ये ही तो भोगेंगे। ईश्वरीय विज्ञानका साधन जब पशु जाति पृथ्वीसे उच्छिन्न हो जायगी। तो वही मानव जातिको भी उच्छिन्न कर देंगे। सन्दोपसन्द न्यायसे अणुबम गिराकर शून्य धरातल कर देंगे। अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है। तत्कालीन मान नहीं मान वही इस परिणामको भोगेगा।

मुझे तो यही कहना है कि 'मेध' शब्द यहां समृद्धि अर्थमें लिया जाता था। गवामेधः-समृद्धिः गोमेधः, एवं अश्वानांमेधः-समृद्धिः अश्वमेधः। इत्यादि शब्दार्थ था। मेधृ-मेधा-हिंसनयोः संगमे च पूर्णतायाम्। इत्यादि धात्वर्थ भी तो अनेक होते हैं। मेध्याआपः (पवित्रा इत्यर्थः) वहां पवित्रार्थ मेध शब्द है। इनके चरागाह गोव्रज, गोकुल, मेषोंका गान्धार, पशुओंका पाश्चर। इत्यादि अपभ्रंश शब्द आज भी इन बातोंको सूचित कर रहे हैं।

शास्त्रोंमें राष्ट्रम् अश्वः (शतपथ १३/२/१०) क्षत्रं वा अश्वः विडितरे पशवः (श०प०१/१२) अग्निर्वा अश्वः मेध शब्द भी नानार्थक है। पुण्या आपो मेध्या आपः यहां तो पशु समृद्धिके सभी कार्य यज्ञ ही कहे जाते हैं। अथर्ववेदमें गोसमृद्धि कर्माणि (१९/१/२७) अनडुत्समृद्धि कर्माणि (२०/२५/२६) जहां पर लिखा है। वहां हि पशुयागः (१०/१/२०) ऐसा शब्द भी लिखा है। इससे साफ प्रतीत होता है कि पशुयागः पशुसमृद्धिकरः यागः। इसका यही अर्थ होगा अर्थात् गौवोंकी समृद्धि, साँढ़ो (बैलों)की समृद्धि पशुयाग कहाता है इनका संवर्द्धन ही पशुयाग है यह सोम यागका प्रसंग है। यहां पशु-हिंसाका नाम तक नहीं लिया जा सकता वहां ही अन्धोंको पशु हिंसा सूझती है।

मेरा तो कहना है। यज्ञाः पशवः। जैसे यज्ञ सर्वोपकारक कर्म है। वैसे ही पशु भी सर्वोपकारक ही हैं। अधिक क्या कहना है। ये तो मनुष्योंके ज्येष्ठ भाई ही हैं। इसीलिये –

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरो वाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेषवोस्त्विष्टकामधुक्। (गीता ३/१०)

सृष्टिके आदिमें ब्रह्माजी ने पशुओंके साथ ही प्रजाओंकी सृष्टि करके कहा कि इन पशुओंकी सेवासे ही तुम्हारी वृद्धि होगी। ये पशु तुम्हारे कल्पवृक्ष हैं कामधेनु हैं। इत्यादि सारी बातें मानव और पशुओंका ही आदान प्रदानकी ध्वनि करता है। जिसके पास यह दृष्टि हो वह देखे। हाय! आज पश्चिमी विज्ञान लौह युग बनाकर उस पशु जातिका उच्छेद कर रहा है। इन्द्रके वंशज, विरोचनकी सन्तानोंके पीछे दौड़ रहे हैं। ईश्वर इन्हें बचावें।

प्रकृत बात मुझे यही कहनी है कि राष्ट्रके धन-रूप अश्व समृद्धि गो समृद्धि करना ही अश्वमेध गोमेध-अविमेध इत्यादि यज्ञ प्राचीनकालमें होते थे। सर्वत्र पशुओंके लिये चरागाह छोड़े ज़ाते थे। देहातोंमें भेड़ोंको झुण्ड के झुण्ड खेतों में आज भी रातमें रखाते हैं। वे सब वहां जो शौच पेशाब करती हैं। उस खेतमें खूब अन्न समृद्धि होती है। दृष्टि वाले देखें। इत्यलम्।

द्वितीय – अहो! अहो! आपने अश्वमेध आदि शब्दोंके अर्थ बतानेके प्रसंगोंमें मुझे दिव्यदृष्टि दे दी है। मैं बराबर सोचता था कि जब यज्ञका नाम ही अध्वर है। जहां ध्वर हिंसा नहीं हो उसे अध्वर कहते हैं (अवविद्यमानोध्वरोयत्र सो ध्वरः) वहां हिंसा हो ही नहीं सकती। सो आपके व्याख्यानसे मेरा समाधान हो गया। इसी प्रसंगमें वेदार्थ ज्ञानमें भ्रान्त विद्वानोंके भी आपने नेत्रोन्मीलन किया है। आज वे भी यदि विवेकसे काम लें तो बहुतोंका उपकार करेंगें। वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति। 'कपिंजलादि व्यतिरिक्त सर्वभूतहिंसा निवर्तकमे' 'माहिंस्यात् सर्वाभूतानि' इत्यादि वाक्योंसें संकोच कल्पना सभी कपूरके समान उड़ गई। आजसे मीमांसा-शास्त्रमें भारी परिवर्तन हो गया।

सांख्यकारिकाकार ईश्वरकृष्णकी 'दृष्टवदानुश्रविकः सह्य विशुद्धिक्षयतिशययुक्तः' इत्यादि सभी तो वाक्य बालूकी भीत हो गये। शास्त्रकी धारा ही जो उलटी बह रही थी सो आज अपने मार्ग पर चलने लगी है। जो भी आपको धन्यवाद दिया जाय वह थोड़ा ही है।

मैं तो पहलेसे ही काकवलिः श्वान-बलिः (काकेभ्यो बलिः काक-वलिः, श्वानेभ्योवलिः श्वान बलिःके समान ही) इत्यादि शब्दोंके समान ही अजेभ्यो वलिः अजवलिः। इसी तरह महिषवलिः इत्यादि शब्दार्थ करता था। दूसरे कहीं कहीं रूपक रूपमें भी इन वाक्योंका प्रयोग है।

जैसे – अज:काम:तस्य: बलि: त्याग: अजवलि: । महिष: क्रोध: तस्य वलिस्त्याग: महिषवलि: । पशौ: मलस्य (शाम्भवादिमलत्रयस्य) वलिस्त्याग: इत्यादि (विवेकाधारम् शास्त्रं चिन्तनीयं भवति) अर्थात् सब जगह विवेकसे शास्त्रका अर्थ किया जाता है। जब शास्त्रने गोका नाम ही अघ्न्या धर दिया। तो गाव: हन्यन्ते जब मुझे मिलेगा। तो मैं 'गाव: चाल्यन्ते' गायें हांकी जाती हैं। वस्तुत: सूर्यके विवाहमें दहेजमें सैकड़ों गायें दामादके लिये हांककर उनके घर पहुंचाई गयी थी। कहीं 'गाव:-सूर्यकिरणा: माघे मासिहन्यन्ते मन्दीभवन्ति' सूर्यकी किरणें मास मासमें मन्द पड़ जाती हैं। या 'गाव: वाच: अतिथ्ये हन्यन्ते' अतिथिके आने पर अपनी वाणी पर नियन्त्रण करना पड़ता है। गोघ्न अतिथिका नाम ही है। अतिथिके लिये गाय मारी जाय यह अर्थ या तो राक्षस करेगा या पागला करेगा। ऐसे मूर्ख मण्डलमें शास्त्र चर्चा ही व्यर्थ है। शास्त्रोंमें राक्षस प्रकृतिके मनुष्योंने मिलावट भी कर दिया है। इसे भी देखना होगा।

प्रथम– यह तो पद पद पर देखना होगा। तुलसीदास जी भाषा कविने भी किष्किन्धाकाण्डमें रामचन्द्रके मुखसे कहलवाया है–

हरित भूमि तृण-संकुल समुझि परहि नहि पन्थ
जिमि पाखण्ड विवादतें लुप्त होंहि सद्ग्रन्थ (दो० १४)

वाल्मीकीय रामायण महाभारत आदि ग्रन्थोंमें भी राक्षसोंने मिलावट किया है। देखिये वाल्मीकिने गायत्री मन्त्रके एक एक अक्षर पर एक एक हजार श्लोक बनाकर २४००० चौबीस हजार श्लोकोंका वाल्मीकीय रामायण तैयार किया। पर आज आप वाल्मीकीय रामायण देखें तो क्षेपकोंका भरमार है। क्षेपकों सहित गिनिये तो २६ छब्बीस हजार हो जाता है। और क्षेपक निकालकर गिनें तो कम २३ तेइस हजार हो जाता है। कोई प्रमाण ही नहीं रह गया है।

एक ही तरहका मिलावट नहीं है। रामचन्द्रने कैकेयीके द्वारा लगाये गये शर्तको स्वीकार किया है। यही स्वीकार किया है कि मैं मुनि वेश और मुनिवृत्तिसे रहूंगा। इत्यादि। और उन्होंने इस शर्तका अक्षरश: पालन किया। तो भी वाल्मीकीय रामायणमें रामका मांस खाना। दशरथजीके श्राद्धमें मृगका मांस देना इत्यादि घुसा ही दिया है। सीताजी द्वारा गंगाको भैंसा चढ़ाना मद्य पिलाना आदि सभी अनर्गल बातें तो लिखी ही है।

मत पूछिये, ऐसे घोर अनर्थ किये गये हैं कि विवेकी विद्वान काँप उठता है। भवभूतिका चाण्डित्य है। यह किसी राक्षसका काम है कि वशिष्ठजीके लिये वृको वा व्याघ्रो वा कहलवाया है।

योंही महाभारतमें अहिंसक राजाओंके लिस्टमें रखे गये रन्ति देव राजाके द्वारा दो दो हजार गौका बध लिख डाला है। हालांकि वहां दान देनेके लिये बांध कर

रखेगये दो हजार गोके लिये वह श्लोक है। विद्वानोंके लिये मैं श्लोक पढ़ देता हूं–

चित्रशाला प्रेसमें छपे महाभारतके वन पर्वके २०८ अध्यायमें सातवां श्लोक है। इसका अर्थ है– राजा रन्ति देवके शकट शालामें दो हजार बैल गाय दानार्थ प्रति दिन बांधे जाते थे। १२ बजे तक दान देकर समाप्त कर दिये जाते थे।

राज्ञो महानसे पूर्वं रन्ति देवस्य वै द्विज!।
द्वे सहस्रे तु बध्येते पशूना मन्वहं सदा॥ (महा०वन०अ०२०८ श्लोक७)

विचारनेकी बात है कि कोई हिंसार्थक धातु बध है ही नहीं। बध-बन्धन भ्वादि है। बध संयमने चुरादि है। बन्ध बन्धने क्यादि है। इन्हीं तीनोंका बध्येते रूप (पद) बन सकता है। 'हनो वध लिङि २/४/४२ लुङि-च ४३' तो होगा ही नहीं। इस स्थितिमें राक्षसोंने 'बध्येते'का अर्थ मारना कैसे कर डाला? यहां तक कि इनके गोवधसे चर्मण्वती नदी निकल पड़ी। देखिये बेबुनियाद राक्षसोंकी उड़ान कितनी ऊँची है। कथापि खलुपापनामलमश्रेयसे यतः। इत्यलम्।

द्वितीय– हां महाराज! आपका कथन बहुत ठीक है। इसी कारण महाभारत कार व्यासजी भी तो यही बात डंकोंकी आवाजमें कहते हैं–

लुब्धैर्वित्तपरै ब्रह्मन् नास्तिकैः सम्प्रवर्तितम्
वेदवादानविज्ञाय सत्याभासमिवानृतम्। (महा०शा० २६३/६)
लोभी धनके चाहसे नास्तिक जो थे दुष्ट
शास्त्रोंको मिश्रित करें करें नृपोंको तुष्ट।

आपने भी तुलसीदासजीका दोहा अभी सुना ही है। रन्तिदेव राजाका गोदान तो चित्रशाला प्रेसके महाभारतमें ही द्रोणपर्वअध्याय ६७ श्लोक १०में स्पष्ट लिखा है–

सहस्रशश्च सौवर्णान् वृषभान् गोशतानुगान्
अध्यर्धमासमददाद् ब्राह्मणेभ्यः शतं समाः (द्रोणपर्व अ० ६७/१०)

(अर्थ– सैकड़ों गायोंसे युक्त अच्छे वर्णोंके हजारों हजारों वृष राजा रन्तिदेव छ:छः महीनेकी संक्रान्तियों पर दान किया करते थे। यह उनकी प्रसिद्धि थी। अतः आपके ही कथनानुसार शास्त्रोंमें–

अश्वालम्भं गवालम्भं सन्यासं पलपैत्रिकम्।
देवराच्च सुतोत्पत्तिम् कलौ पंचविवर्जयेत्।

इत्यादि जितने भी इस ढंगके अनापसनाप वचन मिलते हैं। वे सभी उपेक्षणीय है। तथा 'दाशगोघ्नौ सम्प्रदाने' ३/४/७३ इस सूत्रमें गावो वाचो हन्यन्ते नियम्यन्ते यस्मै सोऽतिथिः गोघ्नः। अथवा गावःसुरभयो वान्यो वा हन्यन्ते दीयन्ते संयम्वन्ते वा अस्मै

इति गोघ्नोऽतिथिः। ऐसे जितने प्रयोग है। सभीका अर्थ अपने विवेकसे करना होगा परम्परासे नहीं। वस इसी प्रकार सब जगह करना होगा।

अब समाप्त कीजिए। एकसूत्र समझ लें कि पशु और मानव भाई हैं। अतः कहीं भी पशुओंकी हिंसा नहीं बतानी होगी।

प्रथम– नहीं नहीं अभी समाप्त नहीं करें। कहां किसने क्या मिलाया है? इसका भी कुछ थोड़ा बहुत निर्देश तो कर दें। यह तो बड़ी भारी समस्या है।

द्वितीय– हां विद्वन्! इसमें क्या सन्देह! यह तो भारी समस्या है। घटा देना बढ़ा देना दूसरेके नाम पर ग्रन्थ लिखकर रख देना। सब कुछ संस्कृत साहित्यमें है। आप देखते नहीं जैमिनि मुनिका सूत्र है। 'विरोधेत्वन-पैक्ष्मंस्यादसति ह्यनिमानुमानम्' (१/३/३) श्रुति विरुद्ध स्मृति अप्रमाण है। यदि श्रुतिसे विरुद्ध न पड़ती हो तो प्रमाण है।

अतः विवेक ज्ञान आवश्यक है। शास्त्रकारोने भी इस पर खूब ऊपोह किया है। देखिये–

प्रत्यक्षञ्चानुमानञ्च शास्त्रञ्च विविधागमम्।
त्रयं सुविदितं कार्यं धर्मशुद्धिमभीप्सता॥

(अर्थ - प्रत्यक्ष शिष्टाचार, स्मृति, श्रुति, तीनों पर विचार करके ही यथार्थ धर्मका ज्ञान करना चाहिये। मैं अपना तथा अन्य विद्वानोंका कुछ अनुभव आपको बताता हूं सुनिये–

आस्ट्रेलियासे आये जो, विप्र लोग यहांके भी,
नृप त्रिबिन्दु-पुत्रीसे पुलस्त्य ऋषिके तभी।
विश्वश्रवा थे ख्यात औ जिनके थे रावण पुत्र,
उन्होंने वेदमें भारी किया है मिश्रण यहां॥

संहिता ब्राह्मण मिलाकर है श्रुति भी रची,
तैत्तरीय कहाती है कृष्णा यजु बड़ी बची।
सायण महीधर व मम्मटादीने व्याख्या बहु है रची,
उपनिषदारण्योंमें, लोगोंने बढ़ती रची॥

'अरेऽस्यमहतोभूतस्य' इत्यादिको बढ़ा दिया,
वृहदारण्यकमें मांस मैथुन लगा दिया।
'कृष्णाय देवकी पुत्राय' छान्दोग्य में बढ़ा यहां,
कोंकणस्थ हुए विप्र यहूदी कुलके यहां॥

फैलायी कलकी रीतिरिवाज सबने यहां,
सतीका जलना टोना उच्चाटन कला यहां।

पुराण रचना भारी तथा उपनिषद् बहु,
अल्लोपनिषदित्यादि ज्योतिष ताजिक भी बहु॥
स्किथियन कायस्थ हुए शक्हूणादि छत्रियां,
शाकद्वीपी क्रौंचद्वीपी संथाल करवीछ्युपजातियाँ।
अतो विवेकसे जो भी चले शास्त्र विचारमें,
वही सच्चा बने ज्ञानी वही हो दृढ़ धर्म में॥

इति शिवम् (बैठते हैं)

प्रथम – (उठकर) अनुष्टुभसे

धन्यवाद करुं मैं क्या ऋणी हूं आपका सदा।
जो दृष्टि आपने दे दी देखूंगा उससे सदा॥

(यह कहकर दोनों चले जाते हैं। परदा गिरता है। वेद शब्दार्थ दृश्य १० दशम समाप्त)

वेदार्थ विमर्श दृश्य : ११ ग्यारह

(स्थान :– जिज्ञासु-समारक-कन्या-महाविद्यालय, तुलसीपुर, वाराणसी वहां वे ही दो वैदिक ब्राह्मण विपरीत क्रमसे बाते करते हैं। पहले द्वितीय ही पूछते हैं)

द्वितीय – अये विद्वन ! आपने गो-मेध अश्वमेध आदि शब्दोंके वैदिक (वेद-कालिक) अर्थ बताकर हम विद्वानोंकी भी आंखे खोल दीं। जिससे अब हमलोग आध्यात्मिक आधिदैविक आधियाज्ञिक तीनों अर्थ वेदके होते हैं, यह जान गये। यज्ञकी कल्पना ही आधिदैविक आध्यात्मिक सूक्ष्म तत्वोंको बतानेके लिये रूपककी कल्पना है। नाटक है। आगे चलकर लोगोंने उन यागोंके दूसरे दूसरे प्रयोजन (फलों)की भी कल्पना कर ली। इस प्रकार यज्ञ भी तरह तरहके बन गये। मन्त्रोंको भी कर्मकाण्डियोंने निरर्थक गढ़ लिये। शनैश्चरके लिये 'शन्नो देवीरभीष्टये' बुधके लिये 'उद्बुद्धस्वाग्ने' इत्यादि। जिस यज्ञका कुछ फल लिखा न मिले, तो उसका स्वर्गफल है। यागजन्य अदृष्टकी भी कल्पनाकी गयी। खूब धतींगका साम्राज्य छा गया। तभी तो वेदसे बगावत करके 'महावीर स्वामी' 'बुद्धदेव' इत्यादि महात्माओंने 'सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्ग:'का नारा लगाया। अस्तु, इसकी तो यथार्थता हम जान गये। परन्तु साक्षात् जो हिंसार्थक शब्द आये हैं, उनकी व्याख्या तो हिंसार्थक ही हैं। स्पष्ट वही अर्थ उस शब्दका प्रसिद्ध है। इसका भी तो समाधान होना चाहिये। (यह कहकर बैठ जाते हैं)

प्रथम– (हर्ष मुद्रामें मुस्कुराते हुए) आर्य विद्वन्! आपने जो समझा है। वह भी ठीक है। जो प्रश्न किया है। वह भी ठीक है। इसका उत्तर तो बड़ा लम्बा होगा।

द्वितीय– तो क्या हर्ज है। कई जन्मका कोढ़ एक रविव्रतसे तो दूर नहीं होता। जैसे बने वैसे इसको दूर करें। मुझे तो ज्ञात होता है कि वैदिकोंने बुद्धदेवसे चिढ़कर हिंसाका बढ़ावा दिया है। तुम अहिंसाका प्रचार करोगे तो हम हिंसा ही का करेंगे। 'वादीभद्रं न पश्यति' यही कहावत भी है।

प्रथम– नहीं भगवन् नहीं यह बात नहीं है। 'अहिंसा परमो धर्मः' यही सिद्धान्त है। वेदकी तो 'मा हिंस्यात् सर्वाभूतानि' यही प्रभु आज्ञा है। देखिये, वैदिक विचारोंने वेदके बचावके लिये आठ विकृतियोंकी कल्पनाकी है। वे लोग वेदमें कोई भी अशुद्धि नहीं आने देते। हिंसा तो बहुत दूरकी वस्तु है। उनका तो यज्ञ 'अध्वर' कहाता है। जिसमें हिंसाका नाम लेना पाप है। यह तो राक्षसोंका काम है।

द्वितीय– भगवन्! आपने वेदकी रक्षाके लिये आठ विकृतिका यहां नाम लिया है। पहले इसीको बता दें तब मेरे प्रश्नका उत्तर दें।

प्रथम– अच्छा तो पहले यही सुन लें–

जटा माला शिखा रेखा ध्वजो दण्डो रथो घनः।
अष्टौ विकृतयः प्रोक्ताः क्रमपूर्वा मनीषिभिः॥ *(विकृति वल्ली १/५)*

ये ही आठ विकृतियां हैं। इनका लक्षणोदाहरण विलम्ब साध्य है। अतः अपने प्रधान प्रश्नके उत्तर सुनें– यज्ञ वाचक शब्दोंमें कोई भी शब्द हिंसावाची नहीं है प्रत्युत 'अध्वर' शब्द बिल्कुल हिंसा-विरोधी बैठा है। न ध्वरति हूर्छति हिनस्ति इत्यध्वरः। न पूर्वक ध्वृ धातुसे अच् करके अध्वर बना लें– अथवा अविद्यमानो ध्वरो– हिंसा यत्र सोऽध्वरः- इत्यादि प्रकारसे अध्वर शब्द बनेगा। सर्वथा हिंसाका अभाव जहां हो वही अध्वर कहाता है।

कायिक वाचिक मानसिक तीनों प्रकारकी हिंसाकी निवृत्तिका सूचक यज्ञवेदीकी तीन मेखलाएं होती हैं। उनमें पानी भरा जाता है। ताकि भूलसे भी सूक्ष्म जन्तु चींटी आदि न जाने पावे।

'ऋत्विक्', 'ब्रह्मा', 'आचार्य' तीनका वरण होता है। ॐ शान्तिः! शान्तिः! शान्तिः :!। इत्यादि तीन संख्याओंके सर्वत्र प्रतिपादनमें यज्ञ कल्पना करने वाले ऋषियोंके बड़े बड़े अभिप्राय हैं।

वेद मन्त्र हैं– 'क्रव्यादमग्निं प्र हिणोमि दूरम्' (ऋ०१०/१६/९) 'योअग्निः क्रव्यात् प्रविवेश नो गृहन्निमिमं पश्यन्नतरं जातवेदसं तं हरामि पितृ-यज्ञाय दूरं स धर्ममिन्वात् परमेसधस्थे' (ऋ० १०/१६/१०) व अर्थव० (१२/२/७) यह मन्त्र दोनों वेदोंमें

आया है। इसका भाव है कि क्रव्यात् मांसभक्षी अग्निको तो मैं दूर श्मशानमें 'पितृमेध' के लिये रख छोड़ा है। यह तो शुद्ध घृताहुतिके लिये यज्ञाग्नि है। इस यज्ञाग्निको राक्षस या विक्षिप्त (पागल) पुरुष ही क्रव्याग्नि बतावेगा।

और देखिये जो आर्य देवताओंसे प्रार्थना कर रहा है कि 'पशून् पाहि' 'मा गाः हिंसि'। 'मा हिंस्यात् सर्वा भूतानि'। (अर्थ हमारे पशुओंकी रक्षा करो। गौओंको मत मारो। किसी भी जानवरकी हिंसा मत करो। वही आर्य अपने हाथसे बकरा काटेगा व कटवायेगा। पगलाके सिवाय दूसरा कौन कहेगा? और भी अन्धे लोग आंख फाडकर देखें– 'एतद्वा उ स्वादीयो यदधिगवं क्षीरं वा मांस तदेव नाश्नीयात्' (अथर्व० ९/६/९) (गौका दूध स्वादिष्ट है। उसे खावो। मांसविष है। उसे न खाना इत्यादि साक्षात् निषेधके रहते कौन राक्षस वेदमें गोवध देखता है?

द्वितीय– साधु साधु विद्वन्! आपने ठीक पूर्व दृश्यकी बातोंको सिद्ध कर दिया कि वेदमें कहीं भी अघ्न्य, अघ्न्या, बैल, गायकी हिंसा या पशुओंकी हिंसा है ही नहीं। यह गोवध अश्ववध इत्यादि शब्दोंका गायमारना, घोड़ामारना अर्थ राक्षसोंकी कल्पना मात्र है। अस्तु, इस युक्ति युगमें कुछ युक्तियोंका भी तो उल्लेख करना चाहिये। अतः आप कुछ युक्तियां भी मुझे बता दें कि मनुष्य क्यों मांस न खाय?

प्रथम– अच्छा तो आप इस वैज्ञानिक युगमें इसका विज्ञान भी जानना चाहते हैं कि, क्यों मनुष्य मांस न खाये। देखिये– मांस खाने वाले प्राणी जीभसे चाट चाटकर पानी पीते हैं। उनके बच्चे पहले अन्धे जनमते हैं। बाद, कुछ दिनोंके बाद, ही उनकी दृष्टि खुलती है। उनको स्वेद (पसीना) नहीं निकलता। वे रात दिन दोनों कालोंमें समान देखते हैं। कभी भी उनको प्रकाशकी सहायताकी अपेक्षा नहीं होती। वे अन्धकारमें भी वैसे ही देखते हैं जैसे प्रकाशमें। कहिये इन चारोंमें कोई भी लक्षण मनुष्य में हैं?

- और सुनिये, मांसभक्षी ही पश्चिमी वैज्ञानिक सर रिचर्ड ओवेन और श्रीजेम्स ओल्ड-फिल्ड इन दोनों वैज्ञानिकोंने आहारनलिकाकी तथा मनुष्य मल की परीक्षा करके बहुत दिन पूर्व ही यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्यकी प्रकृति मांस भक्षणके विरुद्ध है। वह अपनी प्रकृतिके विरुद्ध यह कार्य (मांस भक्षण) करता है। ईश्वर संकल्पके विरुद्ध मनुष्य यह कार्य करता है। तभीतो 'मांस' शब्दकी व्युत्पत्ति मनुने की है। अमुत्र-लोके स भक्षयिता-यस्य मांसम् अहम् इह अद्मि इति। परलोकमें हमको वह खायगा। जिसका मांस मैं खाया हूं। मां-मुझे स-वह (खायगा) 'खानें' क्रियाका अध्याहार करके उन्होंने 'मांस' शब्दका निर्वचन किया है। देखिये मनुश्लोक–

मांस भक्षयिताऽमुत्र यस्य मांसमिहाद्म्यहम्।
एतन्मांसस्य मांसत्वं प्रवदन्ति मनीषिणः। (मनु० ५/५५)

द्वितीय– आपने युक्ति और मनुजीके 'मांस' शब्दके निर्वचनसे भी यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्यका भक्ष्य मांस नहीं है। इसके अतिरिक्त भी कुछ हो तो कृपया बता दें।

प्रथम– हां एक सत्य घटना है, जो मत्स्य पुराणके (१४३) एक सौ तैंतालिसवें अध्यायमें, वायुपुराण आदि प्रायः सभी पुराणोंमें, महाभारतके शान्ति पर्वमें (३३५) तीन सौ छत्तीससे लेकर (३४०) तीन सौ चालीस अध्याय तक चलती है। जिसका सारांश है कि 'अज' शब्द पर ऋषि और देवताओंमें विवाद हो गया। ऋषि-पक्षका 'अज' निर्वीज पुराना धान था। देव पक्षका 'अज' बकरा था। निर्णायक उपरिचर राजा वसु माने गये। जो पहलेसे ही ऋषियोंसे द्वेष करते थे। यह बात ऋषियोंको ज्ञात नहीं थी। जब उनके सामने दोनों पक्ष रखा गया तो उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि देव पक्ष ठीक है। यहां 'अज' बकरा ही है। निर्वीज, पुराना तीन वर्षका धान्य जो ऋषि पक्ष है, वह मान्य नहीं होगा। कुछ शब्द भेदसे यही कथा आश्वमेधिक पर्वके (९१) एकानवे अध्यायके ७ सातवें श्लोकसे चित्रशाला प्रेससे मुद्रित महाभारतमें वैशम्यायन उवाचसे चलती है। आगे (९२) बानबे अध्यायमें अगस्तकी कथा भी है। तभीसे यज्ञमें हिंसा चल पड़ी। और बहिर्वेदी अन्तर्वेदी (पूर्ववेदी-उत्तरवेदी) इत्यादि शब्दोंकी भी कल्पना चल पड़ी। वहांकी घटनाके कुछ श्लोक मैं सुना देता हूं। वसुराजने पूछा 'कस्य कोवा मतो वादो व्रूत सत्यं द्विजोत्तमाः' (महा०शा०३३७/१२) ऋषियोंने उत्तर दिया–

धान्यैर्यष्टव्यमित्येष पक्षोऽस्माकं नराधिप!
देवानां च पशौ पक्षो मतो राजन् वदस्व नः॥(३३७/१४)

इतना कहने पर भीष्म जी कहते हैं कि–

देवानां तु मतं ज्ञात्वा वसुना पक्षसंश्रयात्
छागाजेन हि यष्टव्यम् एवंमुक्तं वचस्तदा (३३७/१६)

इत्यादि विगर्हित तो चल ही रहा था। उसके ऊपर रावण आदि गर्हित प्रवृत्ति वाले पण्डितोंने ब्राह्मणादि ग्रन्थोंका गर्हित व्याख्यान कर डाला है। इससे यह बात स्पष्ट है कि संहितामें किसीका चोंच नहीं लगा है। ब्राह्मणादि इधरके ग्रन्थोंमें ही मिलावट प्रारम्भ है। इसके पूर्व संहिता भाग शुद्ध स्वच्छ बचा है। इसी कारण महाभारतादिशास्त्रोंमें ऐसा लिखा है–

श्रूयते हि पुराकल्पे नृणां व्रीहिमयः पशुः।
येनायजन्त यज्वानः पुण्यलोकपरायणाः॥
महा०भा०अनुशा० ११५/५६

(अर्थ— पहिले धान जव गेहूं, पशु नाम कहात थे।
इससे पुण्य लोकार्थी करते चरुयाग थे॥)

और भी—

लुब्धैर्वित्तपरै ब्रह्मन् नास्तिकैः सम्प्रवर्तितम्।
वेदवादानविज्ञाय सत्याभासमिवानृतम्। (महा०शा०अ० ३६३/६)
लोभी धनके चाहसे नास्तिक जो थे दुष्ट।
शास्त्रोंको मिश्रित करें करें नृपोंको तुष्ट॥

यही श्लोक पूर्वदृश्यमें भी गया है।

ऐसे बहुतसे वाक्य मिलावटके बारेमें महाभारतमें है। देखिये—

सुरा मत्स्या मधुमांसमासवं कृसरोदनम्।
धूर्तैः प्रवर्तितंसर्वं नैतद्वेदेषु कल्पितम्॥

अर्थ— *मधु मांस सुरा आदी व आसवा कृसरोदनम्।*
मिलाया धूर्त राजोंने नहि ये वेद सम्मतम्॥
मानान्मोहाच्च लोभाच्च लौल्यादेतत् प्रकल्पनम्। (महा०शा०२६५/९)
धनके लोभ लीलासे राज-सन्मान कारणम्॥

ये ही सब दुष्ट हेतु इन दुष्टभावोंके सन्निवेशमें है। ऐसा संक्षेपसे समझें। रन्ति देव राजा अहिंसक था। इसका प्रमाण शान्ति पर्वके २६२ अध्यायमें व्याधकी अहिंसाकी प्रशंसा ४७ श्लोकमें। तथा अनुशासन पर्वके ११५ अध्यायमें रन्तिदेव राजाका नाम अमांस भक्षी अहिंसक राजाओंकी लम्बी लिष्टमें आना प्रत्यक्ष प्रमाण है कि राक्षसोंने जहां तहां मिश्रण किया है। राजा रन्तिदेवके नाम पर दो हजार गायोंका रोज कतल कराना यह तो राक्षसने अतिसाहस किया है। इसे तो वेदाज्ञाके अनुसार तत्काल गोली मार देना ही होगा। (ऋग्वेद १० मण्डल ८७ सूक्त १६ सोलहवां मन्त्र)

'तेषां शीर्षाणि हरसापि वृक्ष' इस वेद मन्त्रका यही भावार्थ है। इन राक्षसोंके शिर गोलीसे उड़ा दो। हाय! हाय! एक गायके लिये जहां सम्राट दिलीप अपनी देह सिंहको दे डालता है। एक गायकी हत्या सुनकर हिन्दू आज भी बलवा (बगावत) कर डालता है। सारे भारतमें हिन्दूकी अटूट श्रद्धा गोजाति पर बनी है। वहां ही यह तुर्कीस्तानका राक्षस ऐसा श्लोक महाभारतमें मिलाता है। कालिदासादि सभी विद्वान उसे चाहे भ्रान्त होकर, या वहां भी इसी प्रकार राक्षसोंने मिलाया हो, उत्तर राम चरित प्रभृति नाटकोंमें भी चाहे उस लेखककी भ्रान्त धारणा हो, या वहां भी ऐसे राक्षसोंकी करामात ही हो, कि हिंसाका समर्थन दीखता है। सूर्य पश्चिम भले उदित हो पर वेदका गोमेध अश्वमेधादि शब्दोंका अर्थ गोसमृद्धि अश्वसमृद्धि भू-समृद्धि राष्ट्र देशादि समृद्धि इत्यादि अर्थोंमें ही वेदोंमें आये हैं। राक्षसी अर्थमें पशुहिंसा अर्थमें नहीं नहीं नहीं। इति शिवम्!

गोमेध विकार बोधको गोशब्द युक्तास्ति सवैदिकै बुधैः।
गोमेध यागो भवतिस्म सर्वतो दुग्धादि दध्यादिघृतादिभिः पुरा।

द्वितीय – हां महाराज! मैंने थोड़ेमें आपका आशय यही समझा है कि यद्यपि मिलावट तो शास्त्रोंमें बहुत पहलेसे चला है पर संहिता भाग इस दोषसे बिल्कुल ही निर्लिप्त है। ब्राह्मणोत्तर कालमें जब व्याख्यानकी प्रथा चल पड़ी तो अनेकार्थ शब्दोंकी खींचा-तानी करके अथवा 'शब्दाः कामदुहाः', इस नियमसे रावणादि तामसी विद्वानोंने अपने मनमाना अर्थ कर डाला। विनियोग भी अनर्थक कल्पित कर लिये। बहुकाल बीत जानेके कारण तथ्या तथ्यके अज्ञानमें किसीने उन व्याख्यानोंके समर्थनमें किसी ने उनके खण्डनमें मीमांसकोंने वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति। इत्यादि तीसरा ही प्रकार निकाला। निष्कर्ष यह निकला कि तुलसीदास जी ऐसे तटस्थ सन्तको भी कहना पड़ा है–

'हरित भूमि तृण संकुल सूझि परै नहि पन्थ।
जिमि पाखण्ड विवादते लुप्त होंहिं सदग्रन्थ'॥

इसीलिये विवेकी पुरुषोंको संस्कृत वांगमयका आलोडन बड़ी सावधानीसे करना होगा।

उपक्रमोपसंहारावभ्यासो पूर्वता परम्।
अर्थवादोपपत्ती च लिंग तात्पर्य-निर्णये॥

अर्थ – किसीभी शास्त्रका तात्पर्य निकालनेमें ये ही उपक्रम उपसंहार इत्यादि कारण होते हैं। यों विचार करने पर वेद पुराण तथा सभी शास्त्रोंमें गाय बैलको अघ्न्या और अघ्न्य बताया है। अथर्ववेदमें स्पष्ट ही लिखा है–

यदि नो गां हिंसीः यद्यश्वं पुरुषम्। तं त्वां सीसेन विध्यासो यथानो सौ अवीरहा (अथर्व० १/१६/४) (अर्थ– यदि तुम हमारे गायको घोड़ेको पुरुषको मारेगा तो हम गोलीसे तुझे उड़ा देगें) इत्यादि घोर दण्डका वर्णन है।

यों ही ऋग्वेदमें मागामनागामदितिं वधिष्ट (ऋ०८/१०१/१५) (निरपराध अवध्य गायको मत.मारो) महाभारतके उद्योग पर्वका पद्य है–

अवध्या ब्राह्मणा गावो ज्ञातयः शिशवः स्त्रियः।
येषामन्नानिभुञ्जीत येऽपिस्युः शरणागताः॥ (महा०उ० ३६/६६)

अर्थ – *विप्र-बालक-जाति-नारी, अन्न जिसका खा रहे।*
गउ, सात मारे जात नहि जो आय शरणागत रहे।

जो सात अवध्य बताये गये हैं। जिनमें गऊका साक्षात् उल्लेख ही है और वह स्त्री भी है। शरणागत भी है उसका अन्न (दूध) भी पिया जाता है। यों चार प्रकारसे गऊ अवध्य सिद्ध हो रही है। इसकी सेवासे विमुखका, उलटे मार डालनेवालेका

कुम्भी पाक नरकसे क्या कभीभी उद्धार हो सकता है? हाय हाय!। हमारा तो ऐसी गोजातिको बार-बार प्रणाम है। बोलिये गऊ माताकी जय। परदा गिरता है– वेदार्थविमर्श दृश्य ११ एकादशवां समाप्त हुआ।

गोरक्षादृश्य : १२ बारहवां

(स्थान :– हरद्वारका गंगाकिनारा (हरकी पौड़ी) आर्य समाजके संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीजी भारतकी शोचनीय दशा देखकर विशेषतः गोजाति पर करुणोदयके कारण चिन्तामग्न टहल रहे हैं।)

स्वामी दयानन्दजी– (विषादमुद्रामें) यजुर्वेदके (१३) तेरहवें अध्यायमें 'गामा हिंसीरदितिं विराजम्।' (४३) 'धृतंदुहानामादितिम् माहिंसीः (४९) है अन्तर्यामिन् भगवन् वेदमें तो आप ऐसे वाक्य पढ़ते हैं। आज आपके विराट रूपके हृदय स्थली भारतमें प्रति दिन होती हुई असंख्य हत्याओंकी क्यों उपेक्षा कर रहे हैं? क्या क्षीरनिधिमें शयनकी पौराणिकोंकी कल्पना सही है क्या? तभी तो इन्द्रो विश्वस्यराजति। शंनो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे' (यजु० ३६/८) इत्यादि वैदिकी प्रार्थनाकी भी उपेक्षा कर रहे हैं। उन पौराणिकोंकी यह भी तो कल्पना है कि आप राक्षस हन्ता हैं। तो वह भी झूठी ही है। हाय! इतनी भारतमें गोहत्या हो और आर्य-सन्तानें सोती रहें। (यह कहते कहते बैठ जाते हैं। उसी अवसर पर ब्रजपाल नामका कोई उनका परिचित व्यक्ति मिलता है। वह नमस्ते करके बोलता है)

ब्रजपाल– नमस्ते, स्वामीजी महाराज! आज आपको बड़ा चिन्तित देख रहा हूं। क्या बात है? क्या कोई गहरा आघात लगा है? ज्ञानियोंको क्या चिन्ता?

स्वामीजी– अहो ब्रजपाल जी! आपका मंगल हो! इस दुर्दिनमें आप! कहांसे पधारे हैं? सुनिये आजकलके दुर्दान्त राक्षसरूपी मनुष्योंको देखकर मैं डर रहा हूं। जो मूक पशु पक्षियोंको मार मार कर खा डालते हैं।

'अंक मारुह्य सुप्तस्यय वञ्चनेंका विदग्धता'

(गोदमें सोये हुएको ठग लेनेमें क्या चातुरी है) देखिये स्थूल दृष्टिसे एक गाय यदि पांच बछवे और पांच ही बछिया जन्माती है तो वे बछवे और बछियां और उनकी सन्तान परम्परा अन्नोत्सादनकर तथा दुग्ध प्रदान कर चार लक्ष मनुष्योंका एक कालिक भोजन तैयार कर देती है। ऐसे ही गणित द्वारा आप हिसाब लगावें तो जितने भी दूध देने वाले जानवर हैं– बकरी, भेड़ी महिषी, अश्वर (घोड़ी) ऊटनी व गदही इत्यादि सभी जीते जीते दूध देकर मनुष्योंका उपकार करते ही हैं। मरने पर भी चर्म सिंग पूंछ खुर इत्यादि अपने सभी अंगोंसे मनुष्योंका बराबर उपकार ही करते हैं। पक्षी भी वैसा ही उपकार मय अपना जीवन बिताते हैं–

गायें वो खगवर्ग रजसे गोरोचना पंखसे,
हड्डी-चर्म खुरादि सींग युगसे घी वो दही दूधसे।
औरो गोमय मूत्रसे खग पशु यों लोमसे पुच्छसे,
देखों है उपकार वे कर रहीं क्यों मारता जानसे।

ऐसी पूज्य उपकारी जानवरों और पक्षियोंको कृतघ्न नर पिशाच मानव मार डालता है। यही सोचता हुआ मैं दुःखी हो रहा हूं कि इन हत्यारोंका कैसे निस्तार होगा ?

ब्रजपाल – हे स्वामिन् देखें ! 'पीत्वा मोहमयीं प्रमाद मदिरामुन्मत्तभूतं जगत।' मोहमयी (मोहरुपी) मदिरा (शराब) पीकर जगत् बौराय गया है। कुछ सुनता ही नहीं है। उनकी बुद्धि विपथ-गामिनी उलटी हो गयी है। कहने पर उल्टा तर्क उपस्थित करते हैं। जिसे सुनकर आपभी उद्विग्न हो उठेंगे।

स्वामीजी – क्या उनका तर्क है ? जरा सुनें तो।

ब्रजपाल – मैं ही सुनकर उद्विग्न हो जाता हूं। पर बिना कहे। आप कैसे मानेंगे। अतः कहता हूं।

स्वामीजी – थोड़े ही में कहो।

ब्रजपाल – वे कहते हैं! जो स्वयं पशु या पक्षी मारकर खायगा उसे भले मांस खानेका दोष लगे। जो बाजारमें कटा मांस दूकानों पर बिकता है उसे खानेमें क्या दोष है ? मनुजीने भी कहा है –

'देवान् पितृन् समभ्यर्च्य खादन् मांसं न दोष भाक्।'

(देवताओंके लिये तथा पितृ श्राद्धमें अर्पण किये गये मांस खानेमें कोई दोष नहीं लगता) इति। ऐसा लिखा है। यही उनका दुस्तर्क है।

स्वामीजी – हां! हां! अन्धेर परम्परासे चली आती जडताने ऐसा लोगोंको जकड़ लिया है कि मनुके प्रत्यक्ष लिखा प्रमाण पर भी विश्वास नहीं होता !

अनुमन्तः विशसिता निहन्ता क्रयविक्रयी।
संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः॥

(मनु० ५/५१)

अनुमोदन करता तथा प्रेरक बनता जोय
मारक बेचक कीनता धोवे बनावे जोय
खाने वाला मूढ़ ये आठ कसाई होय
मनु बतावे ये सभी पापी धर्म विगोय

ब्रजपालजी मैं तो यही कहूंगा कि हायरे! मूढ़ते तुम पक्की पिशाचिनी है। तुम्हारे आगे मानव दानव - राक्षस तक बनता है।

ब्रजपाल – स्वामीजी महाराज मेरी दृष्टिमें 'देवान् पितृन्' इत्यादि वचन प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

स्वामीजी – हां, हां, आपका तर्क ठीक है। यह प्रक्षिप्त ही पद्य है महावैज्ञानिक जिस मनुने-

समुत्पत्ति च मांसस्य बध बन्धौ च देहिनाम्।
प्रसमीक्ष्य निर्वतेत सर्वमांसस्य भक्षणात्॥
वर्षे वर्षे अश्वमेधेन योयजेत शतं सभाः।
मांसानिच न खादेत तयोः पुण्य-फलं समम्॥

अर्थ – *बनता कैसे मांस है, सृष्टि देहकी देखि।*
गजब मशीनी है खुदा कौन बिगारे रेखि॥
कब्र करे इस पेटको, मुरुदा मांस घरेखि।
खाऊंगा नहि मांसको किसी जीवका देखि॥
करते जो हय मेधका हों प्रति वर्ष सुयाग।
जोनर मांस न खात है पुण्य बरावर भाग॥

इत्यादि बातोंसे सिद्ध है कि मांस नहीं खाना चाहिये। ऐसी स्थितिमें मनु महाराज ऐसे वैज्ञानिक सम्राट मांस खानेका विधान करेगा? यह अवश्य किसी धूर्तराज कृतघ्न मांस - भक्षीका प्रक्षेप है। आप निश्चित जानें।

तैत्तिरीय शाखाका ब्राह्मण, उपनिषद् आरण्यक, रामायण, महाभारत पुराण काव्य कोश सभी जगह मिलाना बढ़ाना बराबर चलता जा रहा है। इसी कारण तो मैंने सत्यार्थ प्रकाश लिखा। देखते नहीं कि कैकई के साथ मुनिव्रत की प्रतिज्ञा करने वाले रामचन्द्र ऐसे मर्यादा पुरुषोत्तमको भी मांस भक्षियोंने अपने समान बना डाला है। क्या पूछते हैं? चलें आगे।

ब्रजपाल – स्वामी जी महाराज! मैं तो स्वयं प्रतिक्षण विचारता हूं कि ये बेचारे निरीह पशु पक्षी जब हत्या स्थल पर ले जायें जाते होंगे तो ये अपने रक्षकोंको या शासकोंको या उन तक ले जाने वाले कृतघ्न (नाशुक्रा) कसाइयोंको क्या कहते होंगे। 'कि रे नराधम पिशाच! निर्लज्ज! हत्याघरको मुझे ले जा रहा है। हम लोंगोने तुम लोगोंका जन्म भर सेवा कर खेत जोतकर अन्न उपजाकर दाव ओसाकर सूक्ष्म वारीक गेहूं धान तो तुम लोगोंको दिया। अपने ऊपरका स्थूल भाग डण्ठल घास भूसा फलोंके छिलके खाकर पेट भरने पर भी, चामसे जूता बनकर, रोमसे कम्बल, तरह तरहके ऊनी वस्त्र, सिंगसे कंघी, पूंछसे चँवर, हड्डीसे तरह तरहके खाद आदि, अधिक क्या कहना है सभी चीजें सभी अंगोंसे बनकर मरने पर भी तुम लोगोंका उपकार ही किया है। तो भी तुम्हें दया नहीं? मुझे मारने वास्ते हत्या घर ले जा

रहे हो? इतना निर्दयी क्रूर कृतघ्न भी मनुष्य होते हैं? तुमको तो नरकमें भी वास नहीं मिलेगा। अरे नीच! राक्षस भी अपने रक्षककी रक्षा ही करता है।'

स्वामीजी – ब्रजपालजी! पहले आर्य यहां ईश्वरके संकल्पानुसार पशु पक्षीको ज्येष्ठ भाई बहन समझकर कर्मणा मनसा वाचा उनके साथ आदान प्रदानके द्वारा उपकार्योपकारक भाव रखते थे। तभी तो राजासे रंक तक पशु पक्षी पालन परायण रहते थे। राजे महाराजे, सेठ साहूकार, धनी मानी, कृषक, व्यापारी सभी पृथ्वीका आधा भाग पशु पक्षीके लिये जंगल छोड़ देते थे। आधी जमीनमें ही खेती करते थे। आधी धरा (पृथ्वी) परती छोड़ते थे। जिससे प्रत्येक ग्राममें गोचर भूमि छोड़नेकी प्रथा बनी हुई थी।

जहां पर स्वतन्त्र रूपसे पशु-पक्षी विचरते थे स्वच्छन्द घास चरनेकी सुविधा रहती थी। पशु-पक्षी खुले रहने पर बड़े आनन्दित रहते हैं। कृत्रिम बन्धन पसन्द नहीं करते। गायें भी घास चरकर अधिक दूध देती है। हृष्ट पुष्ट भी होती हैं। स्वाभाविक भोजन उनका चरना ही है। खूंटे ही पर बांधकर खिलाना तो कृत्रिम प्रथा है। सभी ग्राम, पशु परती जमीनमें चरनेसे अधिक समृद्ध होते हैं। राष्ट्रकी बड़ी वृद्धि होती है।

वैदिककालमें ये ही गोमेध अश्वमेध इत्यादि यज्ञ होते थे। जिनमें गोजातिकी अश्वजातिकी समृद्धि पर विचार होता था। 'अघ्नया गावः' 'राष्ट्रं पशुः' 'मेध्याः पशवः' 'यज्ञाः पशवः' यज्ञतुल्य उपकारी पशु कहे जाते थे। पशुके गोबरमें लक्ष्मीका वास, मूत्रमें गंगाका वास, खूरमें पृथ्वीके विषनाशनेकी शक्ति होती है। 'सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वाः'का एक अर्थ यह भी है कि यज्ञके साथ याने पशु जातिके साथ प्रजाकी सृष्टि करके ब्रह्माने उपदेश किया कि इसीसे तुम्हारी वृद्धि है। परस्पर उपकार्य भाव तुम्हारा इनके साथ है। तभीतो पहले आर्योंका लोहा सारा संसार मानता था।

जो भी देश भारतको सोनेके खान समझकर इस पर आक्रमण करते थे। वे उलटे अपनी पुत्रीकी शादी यहांके राजाओंसे करके लौट जाते थे। इतनी शक्ति और समृद्धि यहां पर थी।

गो समृद्धया पुराकाले भारतं स्वर्ण-भारतम्।
वैदेशिकाः पराभूता ये भियोत्कुमिहागताः ॥

अर्थ – *भारत सोनेका पुरा चिड़िया जात कहाय।*
आयें जो रणके लिये लौटें मूल गवाय॥

वही भारत परस्पर कलहके कारण जब बिल्कुल कमजोर हो गया तो पृथ्वीराजके समय जयचन्दके भेदनीतिसे

'नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण'

अर्थ – *भाग्य पलटने पर सभी ऊँचे नीचे होय।*
प्रकृतिका यह नियम है मोड़ न सकता कोय॥

यहां पहले विधर्मी तुरुक आये। बादमें राजनीति पटु अंग्रेज आये इनके शासनमें जो गोजातिकी दुर्दशा हुई। उसीका यह परिणाम है कि गोहत्या पशुहत्याकी छूट है। यद्यपि इनके धर्मशास्त्रोंमें भी (कुरान शरीफ और बाइबिलमें भी) हिंसाका निषेध बताया है तथापि जैसे आर्य-शास्त्रोंमें मांस भक्षी नर पिशाचोंने मिश्रण किया है। वैसा ही वहां मांसभक्षियोंने मिलावट किया है। देखिये –

इसाई मुस्लिमोंके न धर्मशास्त्रमें है खराब भाव कोई न आर्य शास्त्रमें है।
स्वभाव दुष्ट लोंगोके दुष्टता बढ़ाता पवित्र शास्त्रमें भी सुरादिमांसलाता॥
(महेश वक्र छन्द)[१]

इसीसे मुगल बादशाहोंके शासनमें भी कानूनन गोहत्या बन्द थी। जिससे भारतमें समृद्धि थी।

ब्रजपाल – स्वामी देव! आप सर्वसमर्थ है। हमें बतावें कि कैसे भारतमें पूर्ववत् गो और अश्वोंके समृद्धकारी वैदिककालीन अश्वमेध गोमेध इत्यादि यज्ञ होंगे। जिससे यहां भारतमें पूर्ववत् पुनः धन समृद्धि बढ़े और पशु समुदाय आनन्दित और समृद्ध बने रहें।

स्वामीजी – इस राक्षसी युगमें जहां धनियोंके यहां विलायती कुत्ते पोसे जाते हैं। वहां गोजातिके कल्याणकी मान्यता कैसे होगी। तो भी प्रश्नका उत्तर तो आवश्यक है। देखो, जब तक देशमें पशुओंकी हत्या कानूनन सर्वत्र बन्द नहीं होगी। और सभी सधर्मी विधर्मी सभी मनुष्य मनसावाचा कर्मणा पशु जातिकी रक्षामें सन्नद्ध न होगा। तथा शासक गण पच्छिमके देहात्मवादियोंके पशुजातिध्वंसक लौह यन्त्रोंके आयातको रोक कर गो वलीवर्दोंसे खेती दंवरी न करावेंगे। ग्रामोंसे ग्रामान्तरमें वस्तु पहुंचानेका कार्य पशुओंसे प्रारम्भ नहीं होगा। तब तक इस देशकी समृद्धि स्वप्न कथा ही रहेगी। ईश्वरका संकल्प गोवंशसे अश्ववंशसे मानव व्यवहार करानेका है। गोवंशसे ही तेल पेरना, ईखसे रस निकालना, जब तक जारी नहीं होगा। तब तक इस देशका कल्याण नहीं। सारे पश्चिमी पशु विनाशी विज्ञानको विदा करना होगा। देखो ब्रजपालजी विज्ञान के चाकचिक्यमें फंसा भारत रसातलमें चला जायगा। लौह यन्त्र रोककर प्रति नगर प्रति बड़े कस्बोंमें पशुओंकी प्रदर्शनी, शासनकी ओरसे मत्स्य विवृद्धि कुक्कुटाण्ड विवृद्धिका स्वप्न छोड़कर प्रति प्रजागृहमें गो वलीवर्दकी वृद्धिके अनुदानकी व्यवस्था होनी चाहिये।

---

(१) महेश वक्र छन्दका लक्षण है– 'जरौ रजौ गुरु दो महेश वक्र जानो।' महेश वक्र छंन्द होता है।)

ब्रजपाल – स्वामी देव! आपके निर्देशसे तो आधुनिक विज्ञान ही व्यर्थ हो जाता है। इसका सदुपयोग तो होना चाहिये इस पर कुछ प्रकाश डालें।

स्वामीजी – देखो ब्रजपालजी! ईश्वर संकल्पके विरुद्ध मैं किसी भी विज्ञानका समर्थन नहीं करुंगा। ईश्वर संकल्प है कि बड़ी नदियोंसे द्रुतयानकी व्यवस्था होनी चाहिये। उसके विरूद्ध स्थल मार्गसे रेलकी व्यवस्थासे कृषि योग्य भूमिकी बर्बादी कर दी गयी है। अब ट्रैक्टर और भूस्सेकी मशीन दांवनेकी मशीन तेल निकालना रस निकालना इत्यादि मशीनोंका आविष्कार करके गोवंशके विनाशका समर्थन मैं नहीं कर सकता। सूत काटनेका, आटा पीसनेका, चाउर निकालनेका, पानी खींचनेका इत्यादि मशीनोंके आविष्कारने स्त्रियोंका पुरुषोंका स्वास्थ्य तो चौपटकर ही दिया है। अब पशुजाति पर इस ईश्वर संकल्प विरुद्ध विज्ञानका धावा है इसे मैं नहीं सहन कर सकता।

हां गोजातिर्के नस्ल बढ़ावो उनके देहवृद्धि करो दूध वृद्धि करो। इन बातोंमें क्यों नहीं पाश्चात्य विज्ञान प्रवृत्त होता। ध्वंस ही की ओर क्यों प्रवृत्त होता है। इसका प्रतिकार होना ही चाहिये। अत: मैं आसुर विज्ञानका समर्थन नहीं कर सकता। इसके लिये आग्रह छोड़ो।

ब्रजपाल – हां गुरुदेव! आपका निर्देश बड़ा गम्भीर है। भारतको इस पर गम्भीरतासे विचार करना होगा। पूर्वकालमें आसुरी सम्पदाओंको (आसुर विज्ञानको) देवताओं ने नहीं अपनाया है। भारत अवश्य गलती कर रहा है कि, आंख मूंदकर पच्छिमका नकल कर रहा है। इसको पीछे पछताना पड़ेगा।

स्वामीजी – अये ब्रजपाल जी! अंग्रेजोंकी अभिसन्धि (षडयन्त्र)का आपको ज्ञान है?

ब्रजपाल – नहिं गुरुदेव! यह तो मैं नहीं जानता हूं। क्या बात है?

स्वामीजी – सुनो जब सन् (१८५७) का गदर शान्त हो गया तो इन्क्वायरीसे यह ज्ञात हुआ कि भारतीयोंकी गो जाति पर बड़ी भक्ति है। वही इस विद्रोहका कारण है। अत: गोजाति परसे भारतीयोंकी श्रद्धाका उन्मूलन जिन जिन उपायों द्वारा हो सके उन उन उपायोंका प्रचार शासनके द्वारा गुप्त रूपसे चल पड़ा। उसी उपायोंमें पूर्व ऋषि सब मांस, गोमांस, खाते थे यह भी एक गोभक्ति ह्रासका कारण है। योंही इतिहास बदलना शास्त्रोंका व्याख्यान बदलना इत्यादि बहुतसे कारण अंग्रेजोंने निकाले हैं। जिन्हें यहांके मैकालेके मानस पुत्रोंने अधिक बढ़ावा दिया है। यह आप जानें।

ब्रजपाल – अहो महामहिम गुरुदेव! आपकी कृपासे आज मैने यह जाना कि ईश्वर संकल्प विरुद्ध विज्ञानका नियन्त्रण होना चाहिये। और अंग्रेजोंकी अभिसन्धिका यह नतीजा है कि यहांके शिक्षित वर्ग गोजातिकी उपेक्षा करता जा रहा है। तथा भारतीयतासे

ही विमुख हो गया है। उसे ऐसी शिक्षा दी गयी है कि अंग्रेज तुम्हारे उद्धारक हैं। वे जो लिख गये हैं। उसे ईश्वर वाक्य मानो। मैं अब इन धूर्त राष्ट्रोंकी अभिसन्धिको जान गया। अतः मुझे एक श्लोक याद आता है कि—

जो है भारतवर्ष कीर्ति उसकी गावें सभी देव भी।
हैं वे धन्यमनुष्य जो जन्मते हैं दिव्य वे देव भी॥
जो हैं हेतु विमुक्तिका स्वरगका हैं देव आते जहां।
देखो हैं सब देव भी ललचते मैं जन्म लेता यहां॥

यह ऐसा दिव्य भारतवर्ष है। यहां सचमुच ईश्वर संकल्पानुरुप ही कार्य होना चाहिये। मैं ईश्वरसे यही प्रार्थना करूंगा कि वह हमारे शासकोंको सुबुद्धि दें कि वे पश्चिमाभिमुखता छोड़कर भारतके अनुरुप जंगम मशीन गोजातिका प्रयोग सभी कृषि कार्योंमें तथा पूर्ववत् शकटादि वाहनोंमें करें। जिससे गोजातिकी वृद्धि हो। स्वामीजी महाराज मैंने आपका समय बहुत लिया। अब जानेकी आज्ञा दें। (यह कहकर चला जाता है। परदा गिरता है) गोरक्षा दृश्य १२ बारहवां समाप्त हुआ चतुर्थ अंकभी।

अथ पंचम अंक ५

सुरभि समभ्यर्थना दृश्य : १३ तेरहवां

(स्थान :– गोलोक है। जहां भगवान सहस्त्र– फणा वाले शेषनाग पर लेटे हैं। लक्ष्मी देवी चरण युगका संवाहन कर रही हैं। गरुड़जी चंवर डुला रहे हैं। नारदजी तीनों लोक घूमकर जब भारतमें आते हैं तो वहां गो की दुर्दशा देखकर अत्यन्त क्षुब्ध हो जाते हैं। वाद मनसे भगवानको, ओरहना देनेके गरजसे सुरभिकी प्रार्थना लेकर उनके पास जाते हैं। उनका जाना बिना रोकटोक हो जाता है।)

नारद – (महती नामकी वीणा बजाते हुए भगवानको प्रणाम करके बोलते हैं) भगवन् नमस्ते। वाह वाह हमारे भगवान् गोलोकका आनन्द खूब लूट रहे हैं। सभी लोकोंमें श्रेष्ठ अपने विराटरूपके हृदय-स्थानीय भारतवर्षकी ओर सर्वोत्कृष्ट सृष्टि रत्न गोवंशकी सुधि बिल्कुल भूल गयी है सरकारको।

विष्णुदेव – (चौंककर) अहो नारदजी ! आप तो आपानन्दी हैं। आपको क्या आशीर्वाद दिया जाय। कहिये बहुत दिनों पर कैसे दर्शन दिये हैं ?

नारदजी – बस, बस, महाराज ! ऊपरके उपचारका कोई प्रयोजन नहीं। अपनी प्रियतमा सुरभिकी करूण कहानी सुननेकी कृपा करें। यही बहुत है।

विष्णुदेव – हां, मैं तो सब जानता हूं। पर आपके मुखसे सुननेका बहुत प्रयोजन है। कहिये –

नारदजी – महाराज ! मानवोंसे भी पहले सर्जी गयी अपनी प्रिय गोजातिकी क्यों सरकारकी ओरसे उपेक्षा है ? जिसके लिये मुझे आना पड़ा है। विलाप करती हुई सुरभिने जो रो रोकर कहा है। उसे आप उसीके मुखसे सुनें मैं कहता हूं।

ॐ अग्निमीडे पुरोहितम् यज्ञस्यदेवमृत्विजं होतारं रत्नधातमम्'

(इस ऋग्वेद मन्त्रको मंगल स्थानमें सस्वर पाठ करके पद्यमय प्रार्थना पढ़ते हैं)

(सुरभिके शब्दमें) – *गोविन्द हे कृष्ण गवार्तिहारिन् !*
गोवृन्दके बीच विहार कारिन् !
गोलोकवासिन् गऊ-वत्स-चारिन् !
मुझे भुलाते कस ! सर्व-साक्षिन् !

महादेव ! जब जब मर्त्य लोकमें धर्मकी हानि और अधर्मका अभ्युदय होने लगता है। तो पृथ्वी मेरा ही रूप धरकर आपसे प्रार्थना करती है। तो आप अवतार लेकर सबका दुःख दूर करते हैं। आपके ही समान मैं भी सारे विश्वमें नामोंसे तथा अपने निवाससे भी हर जगह व्याप्त हूं। भारतमें मेरा गौ, धेनु वकेन, इत्यादि तरह तरहके

बहुतसे नाम हैं। इन्हीं नामोंके अपभ्रंश रूपमें तरह तरहके बहुतसे मेरे नाम और द्वीपोंमें फैले हुए हैं। सभी भाषाओंमें देश भेदसे वहां मेरे रुप रंगमें भी कुछ भेद हो गये हैं। इंगलिश भाषामें 'काउ' जर्मन भाषामें 'कुह' आर्मिनियन भाषामें 'कोव' लेटिन भाषामें 'गुखोस' यूनानी भाषामें 'वो' 'वोउर' जातिनी भाषामें 'वो' 'वोस' 'वोव' इत्यादि बहुतसे अपभ्रंश शब्द सभी भाषाओंमें है।

आपने भी कृष्णावतारमें मेरे नामोंको मिलाकर बहुतसे अपने नाम रखे हैं। गोपाल! गोविन्द! गोप! इत्यादि सहस्र नाम स्तोत्रमें आपके नाम गोविन्द! गोवित्पति! गोहित! गोपति! इत्यादि आये हैं। भोजपुरी भाषामें मेरे नामका एक बड़ा प्रिय विरहागान है। जिसे कानोंमें अंगुली डालकर मस्त होकर गाय चराने वाले गोप बालक गाया करते हैं। 'खिलल बा बकेना गायके दूध' (बकेना गायके दूध जल्दी ही बली बना देता है। यही इस गानका अर्थ है)

काश्मीरमें जो बड़ा अंगूर पैदा होता है जिसे दाख कहते हैं। उसे मेरे स्तनका सादृश्य देकर 'गोस्तनी' यह संस्कृत नाम रखा गया है। 'गोपुच्छ' नाटकं भवति (नाटक गो पुच्छाकार होना चाहिये। जैसे– गोका पूंच्छ कुछ दूर जाकर मोटा होकर पुन: पतला हो जाता है। उसी प्रकार नाटकभी पहले थोड़ा बीचमें अधिक अन्तमें पुन: छोटा होकर समाप्त होना चाहिये)। भोजनकी प्रशंसासे भी मेरे दुधका नामोच्चारण किया जाता है। जैसे– यह वस्तु गोरसके ऐसी मधुर लगती है। बहुत क्या कहना है। गीताके आविर्भावका रुपक मेरे आधारपर बनाया गया है जो दर्शनीय है।

सभी उपनिषदें गायें हैं। दूहनेवाला ग्वाला (गोप) तो भगवान् कृष्ण हैं। पार्थ बछवा अर्जुन है। सद्बुद्धिवाले सज्जन दूध पीने वाले हैं। गीता पुंस्तक रुपी अमृत दूध है।

जैसे ग्वाला (अहीर) बछवेको आगेकर गायका दूध निकालकर लोगोंको देता है। वैसे ही भगवानने अर्जुनको निमित्त बनाकर गीता ज्ञान रुपी अमृत दूध निकाल लिया है। जिसे आज सभी सज्जन पीते आ रहे हैं।

यद्यपि भगवान कृष्णके मुखसे अर्जुनके हृदयमें प्रवेश करनेके कारण गीता आगम रहस्य शास्त्र है। तथापि वेद उपनिषदें भी तो भगवानकी ही वाणी है। अत: गीताको भी तो वेद और उपनिषदोंके सार कह ही सकते हैं–

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनदन:।
पार्थो वत्स: सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत् (गी०महा०)

अथर्ववेदके १० दशम काण्डके १० सूक्तकी ६ छठी ऋचा है– यज्ञपदीराक्षीरां स्वधा प्रागामहीलुकापर्यन्यपत्नी देवा अप्येति ब्राह्मणा (अथर्व० १०/१०/६)

इसका अर्थ राक्षसोंने बड़ा बिगाड़ा है। आप स्वयं समझ सकते हैं कि, वेदमें

बड़ी दुधार बहु प्रजा 'वशा' मानी गयी उसकी बड़ी प्रशंसा वेदने की है। वशा गोको ब्रह्माने देवताओंसे भी बढ़कर उत्पन्न की है। उसके पद यज्ञ हैं। उसका क्षीर 'ईस' है मनुष्योंको उन्नत करता है। वह पितरोंका स्वधा प्राण है। (श्राद्धमें पितरोंको दूध घी मधु डालकर, वशाके ही दूध घीमें क्षीर पकाया जाता है) पकाया क्षीर पिण्ड रुपमें स्वधा कहकर पितरोंको दे दिया जाता है) महीलुका पृथ्वीको प्रकाश देने वाली वशा है। जिसके घर वशा गो होगी वह पृथ्वी पर बड़ा ही खुशी रहता है। वशा पर्यन्य मेघोंकी स्त्री है। वे पानी वर्षाकर घास पैदाकर उसका पालन करते हैं। इस ऋचामें कहीं मारने काटनेका नाम भी है? यों ही यह सूक्त 'वशा' गोकी स्तुतिके लिये वेदमें आया। आगे स्पष्ट दान देनेका मन्त्र है। परन्तु राक्षसोंने 'शतादनां ददाति' इसका भी अर्थ बिगाड़ा है। 'शतस्य शतमानवानाम् ओदनम् क्षीर भोजनं यस्या दुग्धेमवितुम् अर्हति' जिस 'वशा' गोके दूधमें क्षीर (खीर) पकाकर खानेसे सौ मनुष्य तृप्त हो सकते हैं। उसी गायको ये राक्षस मारकर सौ आदमीको खिलाना अर्थ करते हैं। किसने इन गोभक्षी राक्षसोंको संस्कृत पढ़ा दिया कि ये गोको वेदमें 'अघ्न्या' कहते हैं। यह बात न जानकर 'शतवेदना' सौ आदमी गायके मांससे भात खा सकते हैं। ऐसा अर्थ इन राक्षसोंने कर दिया है। हाय! हाय! यह शब्द लिखनेमें भी पाप जानकर मैं इस प्रसंगको यहां ही समाप्त करता हूं।

इन राक्षसोंका अधिकार ही नहीं है। वेद छूनेका। यह अर्थ क्या करेंगे? शातवेलकर आदि विद्वानोंने वेद छापे हैं। उनके निरुक्तादि शास्त्रोंके आधारपर अर्थ भी कर दिये हैं। उन वेदोंको मंगाकर पढ़ें। यहां पुनः सुरभि-प्रसंग चलता है–

गोमूत्रिका बन्ध नामक चित्त काव्यमें भी मेरा 'गो' नाम आया है। गोर्वाहीकःमें भी मेरे ही नामका दृष्टान्त है। अन्नं भट्टने 'सास्नादिमत्वं गोर्लक्षणम्'में मेरा ही उपयोग किया है। ईश्वरकृष्णने सांख्य कारिकामें– 'वत्स विवृद्धि निमित्तम्' इस कारिकामें मेरे बछवेका नाम लिया है तो, गंगाधर शास्त्रीने उसके खण्डमें 'गो: प्रस्नौति पयोहितम्'[१]इत्यादि श्लोकमें मेरा नाम लेते हैं।

इस श्लोकका पूरा हिन्दी अनुवाद पदमें ही देखें–

कर्तृत्व ना वन सके जड जो प्रधान
क्या कुम्भकार रहता मृतिका प्रमान।
देखा नहीं जगतमें जड़ कर्तृको
गो दूध देत अपनी बछिया प्रियं को।

---

(१) यह श्लोक 'अलिविलासि संलाप' नामक काव्यका है। यह अद्भुत काव्य सर्वदर्शन समन्वय करता है। पठनीय है। आचार्य परीक्षामें सबने रखने योग्य है।

सभी वेदोंमें हमारी स्तुति है। अनेक अर्थोंमें हमारे नामोंका प्रयोग होता है। वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ सभी तो भेद मेरे नामोंका सभी वेदोंमें आते हैं। हमारे साथ हन् धातु दानार्थक हो जाता है। कहीं मेरा ही नामार्थ बदल देता है। इसका उदाहरण सर्वत्र वेदोंमें व्याप्त है। शास्त्रोंमें भी जहाँ तहाँ मिल जाता है। ऋग्वेदमें – आया है–

'माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः' (८/१०१/५)

'वृषासिदेवोवृषभः पृथिव्या वृषा सिन्धूनां वृषभः सियानाम्' (६/४४/२१)

'गोभिः शृणीत मत्सरम्।' 'गावोहन्यन्ते।' 'गोघ्ने तिथिः।'

ये सभी उदाहरण हैं। विवेकी विद्वान् ही इन वाक्योंका अर्थकर सकता है। दूधसे सोम लता पकावे 'गो' शब्दसे गव्यपदार्थ दूध लिया गया है। गायें हांक दी जाती हैं। सूर्यके विवाहमें दामादके लिये दहेजमें जो गायें मिली वे हन्यन्ते चाल्यन्ते हांककर उनके घर पहुंचा दी गयीं थीं गोः हन्यन्ते दीयते अस्मै इति गोघ्नो तिथिः।

दूसरा अर्थ भी तो होता है। गौः वाणी हन्यन्ते संयम्यन्ते अस्मै इति गोघ्नोति तिथिः। जिसके लिये अपनी वागिन्द्रियको नियन्त्रण करना पड़े वह अतिथि है। इत्यादि अर्थ आर्य ही कर सकता है जिसके यहां वेदमें 'गौः'का नाम 'अघ्न्या' लिखा है। म्लेच्छ जो गाय खाता है वह तो यह अर्थ कर ही नहीं सकता क्योंकि वह गाय मारता ही है।

भगवन्! मेरा तात्पर्य इतना ही है कि वेदमें मेरा बड़ा बखान है। बड़ी स्तुति है। स्वर्गमें कल्पवृक्ष है तो मैं पृथ्वी पर कामधेनु हूं। मेरे बच्चे बैल बनकर जगत्की कृषि कराते हैं तो बच्चियां गाय बनकर दूध देती हैं।

भगवन्! मैं अपनी प्रशंसा नहीं करती, केवल शास्त्रोंमें लिखी वेदवत् सिद्ध प्रामाणिक बातोंका अनुवाद मात्र कर देती हूं। अनुवादमें अनुवादकर्ता तटस्थ माना गया है।

देखिये पाणिनिने भी मेरे तथा मेरे बच्चोंके नामोंपर बहुतसे सूत्र लिखे हैं। एक सूत्रका मैं श्लेषालंकारसे अर्थ करता हूं–

'सर्वत्र विभाषा गोः ६/१/१२२' सर्वत्रैव जगति गोः गोजातीनां विभाषा विशेषण भाषा भाषणं कीर्तनं भवतीत्यर्थः। अर्थात् जगतमें सभी जगह गो जातिकी ही चर्चा है। 'इतिगु' जगतिवर्तते सर्वत्र' वाह गो! वाह गो! सभी जगह हो रहा है।

प्रत्यभिज्ञा शास्त्रके विद्वानोंने मेरी तुलना जगज्जननी पराशक्तिसे विशेष रूपमें की है। देखिये –

याचें नहीं न ठगते हम हैं किसी को
देखें न दीन बनते हम हैं किसीको।
स्त्री दिव्य वस्त्र मधु भोजनका बखानी
हैं कामधेनु हृदये वसती भवानी॥

भगवन् मेरी महिमा तो सबसे बढ़कर आपने बनायी है। पर मनुष्य ऐसे अभागे हैं कि मेरी समुचित सेवा कर अपना समुचित लाभ भी नहीं उठाते क्या कहूं? देखिये–

भगवान् जैसे व्याप्त हैं तिहुलोकमें सर्वत्र ही
मैं भी तथैव ही व्याप्त हूं इस लोकमें सर्वत्र ही।
नर भाग्यहीन भजे नहीं भगवानको जैसे यहां
तस भाग्यहीन न सेवते नर भी अहो! मुझको यहां॥

वेदमें तो मेरे नामोंका वाच्यार्थ लक्ष्यार्थ तथा नानार्थ सभी प्रकारके अर्थ हैं। इसी कारण अज्ञानी वेदार्थ नहीं कर सकते। महाभारत कहता है–

'विभेत्यल्यश्रुता वेदो मामयं प्रहरिष्यति।'

(अल्पज्ञोंसे वेद डरता है कि, यह तो मेरे अर्थका अनर्थ कर देगा) वही यहां हुआ। मनु प्रभृति प्राचीन विद्वानोंने जो वेदार्थ स्मरण करके स्मृतियां लिखी हैं। वहां तक तो ठीक वेदार्थ हुआ है। सायण, मम्मट आदिने एक एक शब्दोंका अर्थ करके जो भाष्य लिखा है वह तरीका ही दूषित है। अत: वे सभी अल्पज्ञोंके भाष्य अग्राहय ही हैं। अस्तु, सुरभि कहती है आयुर्वेद तथा ज्योतिष प्रभृति सभी शास्त्रोंमें मेरा कीर्त्तन है।

दूध देनेके कारण भी मेरे नामोंके भेद हैं– जो गाय दिनमें तीन बार दुही जाय उसे त्रिकालदोहा जो सुबह या मध्यकाल या सायं एक ही बार दुहाती हो उसे क्रमश: प्रातदोहा या प्रातस्तनी। संगवीया या माध्यन्दिनी। सायंदोहा या सायन्तनी। दो दो नाम हैं वे गायें नियमत: एक ही बार अपने समय पर ही लगेगी। सामान्यत: त्रिदोहा या सायं प्रातस्तनीय ही प्रसिद्ध है। वर्ण भेदसे भी मेरे नाम हैं– सफेद गायको– श्वेता, कर्की, कपिला, धवला। चितकवरी– चित्रा, शवरा। काली गाय– कृष्णा, नीला, सम्पन्ना, क्षीरा, बहुदुग्धा। लाल गायको सन्ध्या, शोणा, रक्ता, रक्तवर्णा। मृतवत्सा जो दूसरेके बछवेसे लग जाय, वह निवान्या या निवान्यवत्सा। (शतपथ ब्रा) २/६/१/६ अभिमान्या या अभिमान्य वत्सा (ऐतरेय ब्रा० ७/२) सकृत् प्रसूता गृष्टि: कहाती है। वशिष्ठजी की नन्दिनी गाय सृष्टि थी। ठाँठ गायको लोकमें वशा कहते हैं। पर वेदमें पर्याप्त दूध देने वाली, पर्याप्त सन्तानवती, स्वामीकी समृद्धकरी गाय वशा कहाती है। सांड चाहने वाली गाय उपसर्या कहाती है। पाणिनि-सूत्र है 'उपसर्य काल्या-प्रजने ३/१/१०४' वरदागयी गाय 'सन्धिनी' कहाती है। गर्भ जिसका गिर गया हो उसे स्रुवंदर्भा या वैहत् कहते हैं। पहली व्यान वाली 'प्रष्ठोही'। हर साल व्यानेवाली 'समांसमीना'। जिसके बहुत बच्चे हो चुके हों 'पौष्टुका' कहते हैं। दुहनेमें सरलता तथा दूधकी मात्रा वृद्धि पर भी नाम भेद है– सुखदोहा या सुव्रता। छोटाध्नी, द्रोणक्षीरा, कुम्भक्षीरा, बहुक्षीरा, प्रचुरक्षीरा इत्यादि।

इन्द्रकी प्रशंसामें भी मेरे वत्सोंका उपयोग है। 'अभिविप्रा अनुवत० (ऋ ९/१२/२) संख्यापर भी नाम रखे गये हैं। अष्टकर्णी, कर्कीरिकर्णी, द्वयंगुलकर्णी, स्थूणाकर्णी, स्थूलाकर्णी। (मंत्रायणी संहिता) 'कर्णे लक्षण० ६/३/११५' इत्यादि सूत्रभी मेरे नाम सिद्धिमें पाणिनिने बनाये हैं। सम्प्रदानादि कारकोंमें भी पाणिनिने मेरा उपयोग किया है–

दासगोघ्नो सम्प्रदाने ३/४/७३ गो हन्यते दीयते अस्मै इति गोघ्नो तिथिः (बौद्धोंने काशिकामें इसका अर्थ बिगाड़ा है।) 'आतो नुपसर्गे कः ३/२/३' इस सूत्रका उदाहरण गोदः है। गोलोकमें मेरा कीर्तन है– 'तदस्य प्रियमभि०, यत्र गावोभूरिशृंगा० (ऋ० १/१५४/५-६) मेरे आधारपर यहां व्यापार होता था।

महर्षियोंके आश्रममें मैं कामधेनु मानी गयी थी। सारी हवन सामग्री मैं देती थी। राजाओंके ससैन्य आतिथ्य मैं ही कराती थी। विश्वामित्र वशिष्ठ संग्राम मेरे ही लिये हुआ है। हैहय वंशके विनाशका मूल कारण मेरा ही अपमान तो है। देखिये–

दोहा– *वसें गंग गोमूत्रमें लक्ष्मी गोबरवास,*
सभी देव सब अंगमें यमका रक्त निवास॥

गोमूत्र गोबर सभी मेरा उपकारी है। एक रक्त ही मेरा ऐसा है कि जिसने मेरा रक्त गिराया। उसका, उसके परिवारका, उस जातिका, उस राष्ट्रका समूल नाश हो जाता है। अभागे नर इस रहस्यको समझते नहीं। मैं तो मूक पशु हूँ। हां वेदभगवान् इस बातको सदा कहा करते है। पर उसे भी राक्षस प्रकृतिके जीव नहीं समझ पाते।

देखिये, मेरे दूध दही गव्यकी प्रशंसा–

जीत सभामें शास्त्रसे भोज्य गव्यसे जीत,
रणजीतें रण वांकुरे शील सभीकी जीत॥

क्या क्या कहूँ? कितना कहूँ? जब जलमें समाधिस्थ च्यवन ऋषि मछुवोंके जालमें फंसकर बाहर आये तब उस स्थलके राजाने उनको मछुओंसे खरीद लेना चाहा। उनका क्या मूल्य हो इस प्रश्न पर तो च्यवन ऋषिसे ही उनका मूल्य पूछा तो उन्होंने सारे राज्यसे भी बढ़कर एक गायको ही अपना मूल्य बताया था। जो उन मछुवोंको दिया गयी। ऐसी हमारी महिमा है।

कालिदासने गोमूत्रसे नेत्रज्योति तत्काल दिव्य हो जाती है ऐसा दर्शाया है। इसके प्रमाणमें रघुवंश काव्यके तृतीय सर्गमें १५ प्रन्द्रहवां पद्य सुनें–

किया वहां मूत्र किसी गऊने
लिया उसे नेत्र लगा, रघूने।
उसे दिखा अश्व आंकाशमें था
लिये हुए इन्द्र जिसे खड़ा था॥

जब रघु अपने पिताके अश्वमेध यज्ञके घोड़ेके पीछे चल रहे थे। एकाएक घोड़ा अदृश्य हुआ। उसी समय एक गाय उनके आगे मूत्र करने लगी। रघुने उस मूत्रको नेत्रमें लगा लिया। लगाते ही दिव्य दृष्टिवाले हो गये। आकाशमें इन्द्रको घोड़ेके साथ देखकर युद्ध छेड़ दिया। वही प्रसंग इस पद्यमें है।

इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि मेरे मूत्रमें नेत्रज्योति बढ़ानेकी दिव्य शक्ति है।

वेदने मेरा नाम ही अघ्न्या, माता रखा है। उसी वेदसे पश्चिमके सम्पर्कमें रहने वाले वेदको बेड कहनेवालोंके भारतीय शिष्य भी मेरा वध सिद्ध करते हैं। और मेकालेके मानस पुत्र उसका प्रचार करते हैं। हाय! हाय! हाय! यह कहती हुई सुरभि मूर्च्छित हो जाती है। मैं तत्काल उसका उपचार करके उसे होशमें लाकर आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। (यह कहकर नारदजी चुप हैं। भगवान बोलते हैं)

विष्णुदेव — (शेष शय्यासे उठकर)

नारदजी! आपने बहुत स्वल्प गो महिमा सुरभिके मुखसे सुनाया है। उससे कहीं अधिक अवर्णनीय गो महिमा मुझे अभीष्ट है। ऐसा जानें। मेरा तो सर्वत्र सभी काल यह उच्च स्वरसे युग युगका सर्वविदित उद्घोष है—

दोहा— *गाय मोर आगे रहें पीछे भी वे मोर*
सवदिशि मेरे वे रहें वास गऊमें मोर।

इस मेरी प्रतिज्ञाको कौन नहीं जानता है। माया थमनावतार (कृष्णावतार)में ब्रह्माजीके गर्वको चूर करनेके लिये मानव मानसे वर्षभरमें छोटे छोटे गोप बालक, बछवा बछिया सब कुछ बना रहा। इसे कौन नहीं जानता है। व्यासजीने भागवतके दशमस्कन्ध पूर्वार्द्धके १३ तेरहवें अध्यायमें लिखा है—

जेते बालक गोपवृन्द सब थे, थे कृष्ण तेते बने,
जेते वत्सतरी व वत्सतर थे, थे कृष्ण लेते बने।
वैसे अंग सुरुप उम्र सबकी माता पिता जानते,
माताएं सबलोग धेनुगण तो भारी खुशी मानते॥

भा०१०/१३/२०

यों ब्रह्माने जब मेरे साथी गोपों और गो वत्सोंको मायासे छिपा दिया था तो मैं ही मनुष्य मानसे वर्षभर सब कुछ मैं बना था। उन दिनों ब्रजमें आनन्दकी वृष्टि वह चली थी। मेरी पूजा भी गौमें होती है। सूर्यब्राह्मण आदि एकादश स्थान मेरी प्रधान पूजाके स्थान हैं—

विप्र अग्नि सूरज गऊ नभ वायु जल जान
भू आत्मा सब जीव ही मेरा पूजा स्थान। (११/११/४२)

गऊ तो सर्वप्रिय वस्तु मैंने बना रखी है। उसका मिसाल जगतमें है ही नहीं। उसके सम्पर्कसे दिनके अन्तमें सायंकालका समय गोधुली बेला कहाता है। उसमें सभी काम प्रशस्त माना गया है। गोजाति जब परती जमीनसे चरकर घर लौटती है तो उसके खुरसे इतनी धूल उड़ती है कि आकाश आछन्न हो जाता है। अतः सायंकालका नाम ही गोधुली बेला पड़ गया है। इसी समय आर्य लोग विवाहार्थ बारातको कन्याके द्वारपर उपस्थित करते हैं। क्योंकि यह समय बड़ा ही पवित्र माना गया है।

'गोधूली सा मुनिभिरुदिता सर्वकार्येषु शस्ता।
यह गोधूली सब कार्यमें है श्रेष्ठ मानी भी गयी।'

देखिये – ज्योतिषी लोग क्या कहते हैं –

दोहा – *सदा पच्छिम यात्रामें, दुआरिपर पूजामें*
गोधुली शुभ है मानी, जाती बुध समूहमें।

यों ही जप मालिकाको 'गौमुखी' कहते हैं। पवित्र विचारको 'गवेषणा' कहते हैं। नगर द्वारको 'गोपुर' कहते हैं। खिड़की नाम 'गवाक्ष' जल यन्त्रका नाम 'गोमुख' ये सभी पवित्र गोशब्दके उचारणके लिये ही हैं।

दक्षिण देशमें 'गोवत्सद्वादशी' उत्तरमें 'गोपाष्टमी' गोवर्द्धनपूजा 'गोधनपूजा' ये सभी गो महिमाका प्रख्यापन करते हैं। पुराणोंमें मेरे संकल्पसे ही यह मन्त्र गोपूजनमें बोला जाता है –

क्षीरोदार्णव सम्भूते, सुरासुरनमस्कृते!
सर्वदेवमये मात! गवे तुभ्यन्नमोनमः। (महाभा० ६/१५)

ऐसी स्थितिमें गो महिमा जितनी भी आप कहेंगे वे सभी मेरे सामने थोड़ा ही है। सुनिये –

देशोमें प्रिय है सुभारत मुझे, गोवंशसे प्रेम है
गंगा पावक गाय नाम कहने से होत भी क्षेम है।
गौके सेवनसे सभी धन जनोंकी वृद्धि भी सर्वदा
होवें हृष्ट सुपुष्ट सन्तति सभी, सत्कीर्ति पावें सदा॥

और भी सुनिये –

स्त्रग्विणीसे –

पथ्यके साथ गोमूत्र दावा बने, रोग भागें सभी जो महामन्त्र है।
पेट वो नेत्रका नाशता रोग है ना कछू भेद चाहे सुधा पान है।

और भी सुनिये- प्रसंगसे –

दोहा— *गो पीछे द्विज पैरको, योगिहृदयकवि वानि,*
शुद्ध होत मुख वाजका अग्नि स्त्रीका मानि॥

यों धर्म-सूत्रकारोंने गोके पिछले भागको ही शुद्ध माना है इसी कारण पथ्य भेदसे गोमूत्र सभी रोगोंकी दवा हो जाता है पर पेट और नेत्रके लिये तो साक्षात् ही गोमूत्र दवा है। उसमें पथ्यकी आवश्यकता नहीं है।

अधिक क्या कहना है। सभी मनुष्योंके लिये सब प्रकारके हित करनेके संकल्पसे मैनें गोजातिकी सृष्टि की है। अतः धर्म भेदका संस्कार छोड़कर सभीको गोवंशकी रक्षा करनी होगी। सभी धर्मोंमें गो अघ्न्या (अवध्या) कही गयी है। सभी देशोंमें इसका सम्मान होना ही चाहिये। अज्ञानसे ही राक्षस इसे मारते हैं। उनके लिये भी यह (अवध्या) अघ्न्या है।

थोड़ेमें रहस्य सुनिये—

विराड्रूप जानो जगत्सृष्टि भारी,
करामातें भी शक्तिकी है हमारी।
वही जानते बुद्ध जो ज्ञानमें है,
सही प्रत्यभिज्ञा वही रखते हैं॥
विलासार्थ मैंने जगत् सृष्टिकी है,
विना वेदके ज्ञान सच्चा नहीं है।
सही कार्य धारा उसीकी चलेगी,
सही प्रत्यभिज्ञा जिसकी रहेगी।

एकाकी नरमें प्रभु, कहत हैं ऐसा सभी वेद जो,
स्वेच्छासे वह होत हैं युगल (मिथुन) भी बोले वही वेदजो।
पीछेसे सब विश्वमें करत भी गो जातिकी सृष्टिको,
जो सर्वार्थिकरी कहात हरती हो रोग जो विश्वको॥

भारतवर्षमें तो मैंने गोजातिको उस देशका प्रतीक बना रखा है। कालात्मा होकर मैं अपनी माया शक्तिसे इधर उधर किया करता हूँ।

(वसन्ततिलका) *क्यों देशको गउ-समूह धनी बनावे,*
ता, सेवता जब उसे कस सौख्य पावे।
जो भाग्यवान बनना खुद चाहता है,
वह ही सुखी नर गऊ-कुल सेवता है॥

दोहा— *अपने कार्यसे प्राणी, अधऊँचर्धसे चढ़े*
गर्त खोद अधो जाता, गेहकर ऊँचे चढ़े

इसी न्यायसे जब मनुष्य गोजातिकी सेवा करता है। तो उन्नति पाता है। जब उसका अनादर करता है तो गर्तमें गिरता है। इसलिये इसमें मुझे हस्तक्षेप करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। मनुष्य जब अपनी उन्नति चाहेगा तभी तो गोजातिका सम्मान करेगा। उसपर शनैश्चर (शयतान) चढ़े हैं तो मैं क्या करुं? आप तो जानते ही हैं जो मैंने गीतामें कहा है–

दोहा– *आपहि आप उधारना, गिरना आपहि आप।*
आपहि आपन बन्धु है, रिपु आपन ही आप।

इसलिये गोजातिकी ह्रास या वृद्धि मनुष्यके कर्तव्यके साथ बंधा है। मेरे साथ क्या सम्बन्ध है कि आप मुझे उपालम्भ देते हैं। हां मनुष्य भी तो 'नीचैर्गच्छत्युपरिच दशा चक्रनेमिक्रमेण।'

रथके चक्केकी समा, नीच ऊँच जस होय।
वैसे मानुषकी दशा नीच ऊँच सब होय।

इसी नियतिसे तो वह भी बंधा है। जब उसके दिन लौटते हैं। तब वह गौकी सेवा प्रारम्भ करता है। जब उसपर साढ़े साती शनैश्चर (शयतान) चढ़ जाता है तो गोजातिका अनादर करने लगता है।

गायें तो मेरी प्रकृतिके आधीन रहती हैं। उनको कर्मबन्धन लगता ही नहीं है। मनुष्यके ही साथ बन्धन है। वह भी अज्ञानियोंके लिये है। ज्ञानीको तो– 'निस्त्रैगुण्ये पथिविचरतः को विधिः को निषेधः'

त्रिगुणहीन नर होय जो उसे न बन्धन कोय।
विधि निषेधको लांघिके गया जो ऊपर होय।

इसके अनुसार उसे कोई कर्म बन्धन लगता ही नहीं। यह बड़ी विचित्र बात है। अतः आप मेरी ओरसे सुरभिसे कह दें कि क्यों चिन्ता करती हैं?

(अनुष्टुभ्)–
सुधा है दुग्ध तेरा तो, मूत्र गंगा कहावता
लक्ष्मी गोबर देता है, मूत्र रोग हरावता।
प्रातदर्शन तेरा जो, करे खुश रहे सदा
पाले पोषे धनी होवे, खात मिष्ठान्न है सदा॥
मेरा भक्त सुखी जैसा सुखी जो सेवता तुझे
तू क्यों चिन्ता करे देवी! सुख इन्द्रियका है तुझे।
तेरी जो ना करे सेवा अभांगा जान लो उसे
समाज देश गो सेवा करे जो सुख मिले उसे॥
अतः तेरी करे सेवा जो सभी भद्र पाचुका

देवे जो गाय विप्रोंको वो सभी दान दे चुका।
जिसने गायको पूजा पूजा तो सब देवको
जिसके घर हैं गायें खावें वो अमृतान्नको॥
अन्नकी ढेर होती है गो सेवा जिसके यहां
सदाधनी वही होता गोसेवा जिसके यहां।
अभागा है वही प्राणी जिसको गाय है नहीं
दरिद्री है वही प्राणी जो गाय रखता नहीं॥

(शार्दूलवि०)

धेनु अमृत देत है जगतको, देती वही भद्रको
सेवे जो उसको सदा वह उसे देती सुधा अन्नको।
बांधा जो निज गेहमें सुरभिको लक्ष्मी वहां बांध ली
क्या-क्या बात कहूं धनी वह सभी सम्पत्ति ही बांध ली॥ (शिवम्)

शिखरिणी –

सदा सिद्धे धेनो तुम विजय पावो जगतमें
सभीकी तू माता जन जन सदा पूजत तुझे।
कहाते वे प्राणी सकल धनशाली पृथुयशा:
कहूं क्या वे होते सब जगतमें नायक बड़ा॥

भुजंग प्रयात –

न तेरी कही जातकीर्ति मुझे है
बनाया बड़ी शक्तिशाली तुझे है।
सदादुग्धदा भद्रदा द्रव्यदा तूं
रहे भूमिमें कामधेनु सदा तूं॥

(इतना कहकर भगवान जब, मौन हो जाते हैं। तो नारदजी बोलते हैं)

नारदजी- (वंशस्थसे)

मिले मुझे दर्शन आपके भले
हुई कृतार्था सुरभी अभी भले।
लहें सभी सम्पद भक्त गायका
मिला मुझे वाक्य सुषेव्य आपका॥

सरकार अब मुझे लौट जानेकी आज्ञा दें। (यह कहकर नारदजी चले जाते हैं) परदा गिरता है। सुरभि प्रार्थना नामक तेरहवां दृश्य समाप्त १३।

गोधार्मिक महत्व दृश्य : १४ चौदहवां

(स्थान :– वाराणसी नगरीका कन्या संस्कृत शिक्षा मन्दिरम्। जिसमें दो वैदिक विद्वान कर्मकाण्डी विशिष्ट बातें करते हैं। एक वेदके साथ षडंग भी पढ़ चुके हैं। दूसरे केवल वैदिक हैं। कर्मकाण्डके मन्त्रों द्वारा कर्म (यज्ञ) विवाहादि संस्कार कराकर अपनी जीविका चलाते हैं। वही यहां प्रश्नकर्ता हैं)

प्रथम – अये विद्वन! मैंने गौवोंकी आर्थिक उपयोगिता और महत्ता तो जान ली है। केवल धार्मिक दृष्टिसे उनकी उपयोगिता एवं महत्ता मुझे बतानेकी कृपा करें।

द्वितीय – आर्य भगवन्! आप तो रात दिन यजमानोंके यहां गोदान पद्धति लेकर गोदान कराते रहते हैं। आपके सामने गोदानका धार्मिक उपयोग और महत्व बताना सूर्यको दीपक दिखाना है।

प्रथम – नहि, नहि, विद्वान्! दीपकके तले ही अन्धकार रहता है। मैं तो केवल वेद और अष्टाध्यायी घोषकर तथा कर्मकाण्डके मन्त्रोंको जानकर गोदान तथा विवाहादि संस्कार कराता हूँ। वेद और अष्टाध्यायीका अर्थ हमलोगोंको नहीं पढ़ाया जाता है। न जानता हूँ। कर्मकाण्डसे प्राप्त दक्षिणासे अपनी जीविका चलाता हूँ। गोदानकी गौ तो यजमान अपने पुरोहितको देता है। मुझे तो कर्मकाण्ड करानेकी दक्षिणा मात्र मिलती है। यह भी आप जान लें।

द्वितीय – अहो आप तो 'स्थाणुरयं भारहार: किमाभूत् अधीत्य वेदं न विजानातियोर्थ:' अर्थ जो केवल वेद घोख लेता है। अर्थ नहीं जानता वह तो भार ढोने वाला केवल काठका ठेला है।

अस्तु, आपकी गोदान पद्धति पुस्तककी भूमिकामें गौकी धार्मिक उपयोगिता और महत्ता बड़े विस्तारसे लिखी हुई है। उसे ही पढ़कर याद कर लें। उससे धार्मिक उपयोग और महत्व दोनों ज्ञात हो जायेंगे।

प्रथम – अये विद्वन! हम कर्मकाण्डी विद्वान् वेद रक्षाकी दृष्टिसे संहिताक्रम पाठ, पद पाठ आदि आदि (८) आठ विकृतियोंके साथ केवल अक्षर ज्ञान मात्र ही वेदाध्ययनका फल (दृष्ट) मानते हैं। यदि अदृष्ट फल चाहें तो वेदाध्ययनका स्वर्ग फल मान लिया जाता है। आपका पूर्व पक्ष ही हमलोगोंका सिद्धान्त पक्ष है। देखिये –

अनुष्टुभ् – *विधि: स्वाध्याय इत्येषो क्षरमात्रं ग्रहीष्यति*
कल्प्यस्तु विधि सामथ्र्या स्वर्गो विश्वजिदादिवत्।
वेदाध्ययनमित्यस्येतावन्मात्रं प्रयोजनम्
कण्ठस्थीकरणोद्वेदरक्षाष्टविकृतिज्ञता॥२॥

दोहा अर्थ– *वेदाध्ययनी जो विद्या कण्ठीकरना बोध।*
फल तो स्वर्ग वखानिये विश्वजिदादिसुबोध।

इसलिये हमलोग वेदको कण्ठस्थ कर लेना मात्र जानते हैं। उसके अर्थ जाननेके लिये व्याकरणादि जाननेका कार्य ही नहीं करते।

अनुष्टुभ्– *अनादि निधनं ब्रह्मशब्दतत्वंयदक्षरम्*
प्रवर्ततार्थ-भावेन प्रक्रिया जगतो यत:। (वाक्य प०ब्र०१)
सर्वेषां तु स नामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्
वेद शब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थाश्चनिर्ममे॥

दोहा (अर्थ)– *अन्त आदिसे शून्य जो शब्दराशि विख्यात*
उसका यह परिणामही सारा जगत कहात।
जगत् वस्तुका नाम भी सबका सारा कर्म
वेद शब्दसे जान तो स्थिति वो सब ही मर्म॥

इत्यादि प्रमाणोंके बलपर हमलोग केवल शब्द ब्रह्मके ही उपासक हैं। इसलिये जो कुछ भी भूमिकायें या अन्यत्र भी शास्त्रोंमें गौके धार्मिक विषय आये हो उन्हें आप मुझे बतावे मैं कण्ठस्थ करके गुरुजीसे उसका भाव समझ लूंगा। अर्थ नहीं जानूंगा तो कोई अनर्थ नहीं होगा।

द्वितीय– अहो! आप ऐसे शुष्क कर्मकाण्डी हैं? अस्तु मैं गोदान विधिसे तथा अन्यत्र शास्त्रोंसे भी गौके धार्मिक उपयोग और महत्व बताता हूं आप सावधानीसे सुनें– अनुष्टभ–

गां दद्याद् वेदपूर्णाय विप्रायगृहमेधिने।
स्वर्णालंकृत शृंगी तां वस्त्रघण्टासमन्विताम्॥

(अर्थ– गृहस्थ वेदपाठीको सोनासे सींग मढ़ाकर चांदीके खूर बनाकर रेशमी वस्त्र ओढ़ाकर गलेमें घण्टी बांधकर गोदान दें। चांदीका पीठ तामेका खूर होना चाहिये (ऐसा भी पाठ ठीक है) पूछमें मूंगा गूथा हो तो और अच्छा ही है।)

अनुष्टुभ्– *कांस्योपदोहनां दत्वा सप्तपूर्वान् परांस्तथा*
पुरुषांस्तारयेद् दाता स्वयं स्वर्गाधिपो भवेत्

(अर्थ– पूर्व लक्षण वाली गायको फूल धातुकी बनी दोहनीके साथ यदि दान दे तो आगे पीछे सात पीढ़ीके पुरुषोंको भी तार दे और अपने स्वर्गका स्वामी बनकर रहे)

अनुष्टुभ्– गोदानात् परं किंचिद् विद्यते वसुधाधिप। (म०मो०शा०)

(अर्थ– भीष्मजी युधिष्ठिरसे कहते हैं। हे वसुधाधिप! गोदानसे बढ़कर यहां कोई वस्तु नहीं है) जाबालि ऋषिने कहा है–

अनुष्टुभ्– *त्रिर्वित्तपूर्णा पृथिवी दत्ता तेन महात्मना*
होमार्थमग्निहोत्रस्य यो गां दद्यादयाचिताम् (जावालि:)

(अर्थ– जिसने बिना मांगे अग्निहोत्री विप्रको साविधि गोदान दे दिया। उसने सारी पृथ्वीको तीन बार दान दे चुकनेका फल पा लिया। ऐसा जाने (जावालि:)

अंगिरा ऋषिका कहना है–

अनुष्टुभ्–

गौर्विप्राय प्रदातव्या श्रोत्रियाय विशेषत:।
साहि तारयते पूर्वान् परान् सप्त च सप्त च॥ (अंगिरा:)

(अर्थ– गो पूर्वोक्त विधानसे यदि श्रोत्रिय अग्निहोत्री विप्रको दी जाय तो सात पुरुषोंको (पीढ़ीको) आगे पीछेके तार देती है) अंगिरा

सुदेहां लक्षणवतीं युवतिं वत्ससंयुताम्।
बहुदुग्धामहार्हौं गां दद्याद्वेदविदे बुध: ॥ (देवल:)

सुदेह लक्षणशालिनी बहुत दूध देने वाली गाय बहुमूल्य बछवाके साथ वेदज्ञ विद्वानको देना चाहिये (देवल:)

अनुष्टुभ्–

न गोदानात् परं किंचिद्दानमस्ति धरातले।
सा गौ न्यायार्जिता दत्ता कृत्स्नं तारयते कुलम्॥ (महाभा०)

(अर्थ– गोदान से बढ़कर कोई दान नहीं। न्यायसे अर्जित गायका दान सारे कुलका उद्धार कर डालता है (महा०)

प्रथम– ये तो गोदान पद्धतिकी भूमिकाके श्लोक हुए। अब कुछ अन्य शास्त्रोंके कहें–

द्वितीय– आप तो गोदानके संकल्पमें श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्तिकामनया जो पढ़ते हैं। उससे सांफ मालूम होता है कि सर्वत्र श्रुति स्मृति और पुराणोंमें गो महत्व बताया गया है। सभी देवोंका पूजन आप गायके अंगमें कराते ही हैं। सभी पितरोंका यक्षोंका भूत-प्रेत पिशाच पशु पक्षियों तक ही नहीं ब्रह्माजीसे लेकर स्ताम्बर (दूर्वा) तकका तर्पण आप गो पुच्छसे करा डालते हैं। इससे बढ़कर अब क्या अधिक गो महत्व आप चाहते हैं– सुनिये–

आब्रह्म-साम्ब-पर्यन्तं देवर्षिपितृगोद्विज।
स्तृप्यन्तु प्राणिन: सर्वे गोपुच्छ तिलतर्पणात्॥ (महा०शा०)

(अर्थ– ब्रह्माजीसे लेकर दूभ तक जितने भी प्राणी हैं। सभी गो पुच्छके तिल तर्पणसे तृप्त हैं। (महा०शा०)

श्रद्धाविश्वासके साथ आस्तिक्य बुद्धि ही तो अपेक्षित है।

कौनसा दान है जो गोदानमें अन्तर्भूत न हो जाय? कौनसा फल है जो श्रद्धाभक्तिके साथ गोसेवासे न मिल जाय? कौनसी पृथ्वीकी जाति है जो गोवंशसे उपकृत नहीं है? कौनसा ऐसा गौका अंग है जो संसारका उपकार न करता हो? हां गो वंशोंका खून ही एक ऐसा तत्व है जो सारे राष्ट्रको भस्म कर देता है।

बहुत क्या कहना है। आर्योंके यहां तो मानव जन्मसे लेकर मरनेके बाद भी गौका उपयोग होता है। राजपुत्रके जन्म पर गोदान होगा। विवाहमें श्वशुर गोदान करके कन्यादान देंगे। ग्रहीता वर कन्यादानले लेनेपर गोदान करेगा। महादानकी सिद्धिके लिये। मरते समय बैतरणी नदी पार करनेके लिये वत्सतरी दान होगी। मरनेपर १२ बारहवें दिन श्राद्धमें वृषोत्सर्ग होगा।

यों ही सभी उत्सवोंमें गोबरसे भू लेपनसे लेकर गणेशजीकी पूजामें गोबरके गौरी गणेश बनेंगे ही। गो घृतका हवन होगा ही। सांगता सिद्धिके लिये उत्तमसे उत्तम दान गोदान ही होगा। अतः आर्य-संस्कृतिका तो प्रतीक ही गो है।

आप पाणिनि पद्धतिसे संस्कृतका ज्ञान कर लें। फिर तो गोदान पद्धतिकी भूमिका क्या गो महिमाकी संस्कृत संस्करण पुस्तक स्वयं पढ़कर समझ लेंगे। जहां कहीं खटके तो हिन्दी संस्करण देख लेंगे। यजमानोंको भी समझा सकेंगे। सुनिये मैं उपसंहार करता हूँ–

स्त्रग्विणी –

गाय ही है प्रतिष्ठा सभी प्राणिकी। गाय होती विभूती बड़ी देशकी।
पावनी सर्वदा जीवनी गौदिकी। रक्षिका है कहाती सभी राष्ट्रकी।
जो हविष्यादि देवे सभी देवको। घीवसे आहुति होत है देवकी।
रातमें भस्मको छींट जो देत हैं। गायके सुप्तिका सुख बांटते हैं।
वो कमाता बड़ा पुण्य है सर्वदा। दूभकी घास वो गूड़ जो दे सदा।
क्या बताऊँ लहे वो सभी सम्पदा है सभी प्राणियोंकी गऊ धर्मदा।
श्री बसे गोमये गंगगोम्रावमें। क्या मिला कोई ऐसा हुआ खर्वमें।
देवता हैं वसें अंग प्रत्यंगमें। मानवी द्रव्य भी है सभी अंगमें।
गो कहाती महाभूति पित्रादिकी। यज्ञ रक्षादिकी भूति भूतादिकी।
वर्णना क्या करुं गो अजर जीव है। प्राणियों बीच ऐसा नहीं जीव है।

यों भी गोके महत्वका तथा उपयोगका वर्णन समाप्त हो नहीं सकता। अतः मैं विराम लेता हूं।

प्रथम – नहीं नहीं महाराज! अभी विराम न लें। और भी कुछ गायके विषयमें बतावें। मैं गोदान पद्धतिके सभी पद्योंको तथा उनके साथके पद्योंको जब याद करुंगा तो उनको भी याद कर लूंगा।

द्वितीय – अयि भगवन्! गो महिमा क्या समाप्त हो सकती है। सुनिये। कुछ चलते-चलते भी सुना देता हूं आप भी तो साथ दें।

इन्द्रवंशाछन्दमें –

(दोनों गाते हैं) *गो शब्द है व्याप्त सभी प्रदेशमें*
गो वित्त है उत्तम सर्व वित्तमें।
गो मूत्र है औषध सर्व रोगमें
गोदूध है आमृत सर्वभोज्यमें॥

(भुजंग प्रयात) *दृढ़ा राष्ट्रसम्पत्ति गोसम्पदा है*
सही दुग्धधारा सदा सिद्धिदा है।
स्थिरा धर्म-सिद्धि गऊ सेवया है
बनी द्वार शोभा गऊ सेवया है॥

(मालिनी) *सृजत विभु गऊको राष्ट्रकी वृद्धि हेतू*
सृजत विभु गऊको मर्त्यके सौख्य हेतू।
अमृत हरि बिखेरें दुग्ध गौके धरामे
गऊ सृजत मुरारी कामधेनु धरामें॥

(यों दोनों गाते गाते चले जाते हैं। परदा गिरता है। गौका धार्मिकोपयोग महत्व नामक १४ चौदहवां दृश्य समाप्त।

अथ गो महिमानुभूति दृश्य : १५ पंचदश

(स्थान :– श्री बदरीनाथधाममें जोशीमठ (ज्योर्तिमठ)के तूल वृक्षके नीचे श्री शिवमन्दिर। अन्नपूर्णागिरिके बीचमें श्री शंकराचार्यपीठके पास लक्ष्मीनारायण मन्दिरके प्रागंणमें दो पृथक् पृथक् चौकीपर बैठे लम्बी सफेद दाढ़ी वाले सफेद रेशमी दोशाले ओढे अस्सी वर्षसे ऊपरकी अवस्थाके दो वृद्ध विद्वान् बातें करते हैं। परदा उठाकर प्रवेश होगा)

वर्षीयान् – (गोमहिमाके सम्बन्धका अथर्ववेदीय मन्त्र स्वरके साथ छात्रके सामने पढ़ते हुए)

ऊँ शृंगाभ्यां रक्ष ऋषत्यवर्तिहन्ति
चक्षुषा शृणोति भद्रं कर्णाभ्यां गवां यः पतिरघ्न्यः।
(अथर्व ९/४/१७)

अये अतिपूज्य अतिवार्षिक महामान्य महाराज जी! मैंने अपने इस जन्ममें गोके सम्बन्धमें साक्षात् अनुभवसे या दूसरेसे सुनकर जो कुछ प्राप्त किया है। उसे चाहता हूं कि जनतोपकार हेतु आपको सुना दूं। यों तो 'गोस्तु मात्रा न विद्यते' (३३/४८ यजु०) है।

अतिवर्षीयान्– (उठकर मुस्कुराते हुए) अयि भगवन्! आपका सोचना तो बड़ा ही सुन्दर लोकोपकारी भी है। किन्तु मैकालेके मानस पुत्रोंके प्रचार युगमें श्रद्धा विश्वाससे शून्य अनधिकारियोंसे किये गये वेदार्थको ही ग्रहण करनेवाले लोगोंमें आपका चिन्तन तो–

पृथ्वीछन्द– *अरण्यरुदितं कृतं शवशरीरमुद्वर्तितम्,*
स्थलेञ्जभवरोपितं सुचिरमूषरे वर्षितम्।
श्वपुच्छभवनापितं वधिरकर्णजापः कृतो,
धृतोन्धमुखदर्पणो यदबुधेजने जल्पितम्॥

मात्रिकछन्द– *(अर्थ- करना अरण्यरोना शवतेलको विलोना*
स्थलपद्मरोपते जो ऊषर वरसरहे जो।
कुत्ते कि पूँछ सोधे गूंगेकी कान जापे
अन्धेको आरसी दे मूर्खोपदेश आपें॥)

(ऊपरके कथनका ही नकल होगा। यह भी जानें।)

वर्षीयान्– भगवान्,

अनुष्टुभ– *'भवानीशंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरुपिणौ।*
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तस्थमीश्वरम्'॥

इस नियमसे शिव पार्वती ही जब विश्वास श्रद्धा बने हैं। तो हमारे आपके उत्कट इच्छा और साक्षात् अनुभूतिके वर्णनसे वे अवश्य जाग उठेंगे। आप तो ओम् बोल ही दें।

अति वर्षीयान्– हां, हां, उत्कट इच्छा और सच्चीलगन तो अवश्य ईश्वर सफल करते हैं। इसमें सन्देह क्या?

चौपाई– *जापर जिन कर सत्य सनेहू*
सो तेहि मिले न कछु सन्देहू॥

यह तो ध्रुव सत्य है।

चौपाई– *अटल ईशका यह सन्देशा*
होत सफल जाने सब देशा

इसके लिये तो मेरी सतत सम्मति है। आप यथेच्छ कहें–

वर्षीयान्– 'ऊरु गयमभयं' तस्य ता अनुगावो
मर्त्यस्य विचरानी यज्वनः (ऋ० ६/२८/४)
'इमाया गावः स जनास इन्द्र०' (६/२८/५)
भद्रं कृणुथभद्रं वाचो० (ऋ० ६/२८/६)

इत्यादि वेदमन्त्रोंमें तो गोकी प्रशंसा है ही। लोकमें भी प्रत्यक्ष ही गोका उपकार दीखता है। गोमूत्र नेत्रकी ज्योति बढ़ाता है। मोतियाबिन्दको दूर करता है। पेटका

प्लीहा नाशता है। यह अनुभूत तथ्य है।

अतिवर्षीयान्– कैसे आप जानते हैं?

वर्षीयान्– मैंने रघुवंश काव्यमें 'तदंगनिस्यन्द ३/१५' श्लोक पढ़ते समय यह सोचा कि इस श्लोकसे कवि गोमूत्रको नेत्र ज्योतिका उपकारी बताता है। इसे प्रत्यक्ष करना चाहिये। बस तभीसे कहीं भी गायों या बछियोंको मूतती देखूं तो दौड़कर पीछेसे उसके मूत्रको दो चार बार पी लूं और आंखमें लगा लूं। घरकी बछिया न होने पर गायके भी मूत्रको सीसीमें रखकर दिन भर जब कभी पी लूं और लगा लूं। यह कार्य तो आजभी चलता है इसका परिणाम यह है कि, आज ८७ वर्षकी अवस्थाका मैं उपनेत्र नहीं लगाता और तीन बजे रात्रिमें उठकर ग्रन्थ लिखता हूँ।

अतिवर्षीयान्– हां महाराज! गौकी ऐसी ही अद्भुत महिमा है। अच्छा तो आगे चलें–

वर्षीयान्– मेरा ज्येष्ठ पुत्र बाल्यकालमें प्लीहा रोगसे पीड़ित हो गया। एक राजवैद्यकी प्रेरणासे मैंने ४० दिन तक प्रातःकाल अविच्छिन्न एक तोला (कनवा) बछियाका मूत्र पिलाता रहा। ४१ एकतालीसवें दिन जब राजवैद्यने परीक्षा ली तो प्लीहा बेचारीतो विलीन (काफूर) थी ही वह बेचारा पुत्र, आज तक किसी प्रकारके रोगसे पीड़ित नहीं हुआ। आजतो वह तीन भाषाओंका (संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी)का महापण्डित है। तीनों भाषाओंमें निरर्गल घण्टों व्याख्यान देता है। 'व्याख्यान वाग्मी'की उपाधि उसे जनता जनार्दनने दे रखी है। यह है गोमूत्रकी महिमा। वह उत्तर प्रदेश राज्यमें हरिजन समाज कल्याण अधिकारीके पदपर आसीन हैं। स्वयं गौकी सेवा करते हैं जनतामें गौभक्तिका प्रचार करते हैं।

अति वर्षीयान– हां महाराज! 'अचिन्त्योहिमणिमन्त्रौषधिप्रभावः'

(अर्थ– मणि, मन्त्र और औषधका प्रभाव अचिन्त्य ही है)

यह गौमूत्र सर्वश्रेष्ठ औषध है।

हां हां आगे चले–

वर्षीयान्– एक ८८ अठ्ठासी वर्षकी अवस्थावाले वृद्धने 'वेदवाणी' नामक पत्रिका (सोनीपत, हरियाणा)में लिखा था कि यदि कोई मोतियाबिन्द (अक्षुःकील) रोगका रोगी दिनमें दशवारके नियमसे प्रतिदिन बछियाका मूत्र नेत्रमें लगाता रहे, प्रतिदिन एक तोला पीता भी रहे। कोई नशा न करे। अति तीता खट्टा मीठा न खाय। सात्विक भोजन हो तो वर्ष समाप्तिपर मोतियाबिन्द कापूर रहेगा।

अतिवर्षीयान– हां महाराज! ऐसी ही गौकी महिमा है। विशेषकर गौदुग्ध व गोमूत्रकी। मैंने भी सुन रखा है कि गौ दुग्धसे वाक्शक्ति बढ़ती है।

वर्षीयान् – इसकी सत्यताका बखान करें कृपया –

अतिवर्षीयान् – वाराणसीके राजकीय संस्कृत कालेजका प्रिन्सिपिल अंग्रेजी शासनमें अंग्रेज ही होते थे। उसीके प्रिन्सिपल आर्थर वेनिशको मीमांसा पढ़ाते समय म०म०, सी०आई० गंगाधर शास्त्रीजीने दुग्धमें खीर पकाकर खानेको बताया था। अण्डा खाना बन्द करा दिया था। तो उनकी वाणी बहुत निखर गयी थी। वह 'वेड' 'पठटि' नहीं बोलते थे। वेदः अस्ति। पठति भवान्। आदि प्रयोग साफ बोलते थे। मतलब कि मूर्द्धन्यके स्थानपर दन्त्यका उच्चारण उनका ठीक था। अन्य अन्य अंग्रेजोंके वनिस्पत वह शुद्ध बोलते थे। यह दूधके खीरका ही प्रभाव था।

वर्षीयान् – महाराज! कुछ और भी हो तो सुनाइये –

अतिवर्षी – हैं तो बहुत। एक और सुनिये मैं कहता हूँ। वाराणसीमें आचार्य श्री रामेश्वरं झा नामके एक योगी ज्ञानी बड़े विद्वान हैं। वह अध्यापन कालमें छः वर्षतक केवल गायके दुग्धका ही पान करते थे। अन्यान्य आहार कुछ नहीं लेते थे। तो उनको प्रत्यभिज्ञा शास्त्र (तन्त्रालोकआदि) स्वयंम् उद्भृद हो गया है। अपने आप उन्होंने प्रत्यभिज्ञा शास्त्रके प्रसिद्ध ग्रन्थ पढ़ लिये। वे ईश्वर प्रत्यभिज्ञा तन्त्रालोक मालिनी विजय आदि ग्रन्थ स्वयं लगा चुके हैं। काशीमें ही साक्षात् शिव बनकर शिष्योंको पढ़ाते हैं। शक्तिपात द्वारा शिव बनाया करते हैं। उनका उपदेश है –

महेशवक्त्रछन्द –

स्वयं विचित्रशक्तिर्भवन् मितोऽणुजीवः
शिवोऽमितोहमित्वा जगत्वमादिशक्तया।
विलासहेतु सत्यं जगन्निरीक्षमाणे
विभामि विद्ययाऽहं सदैव शम्भुदेवः॥ (भैरवात्मा)

वंशस्थच्छन्द – *(अर्थ– स्वयं सदा मैं रहतातिशक्तिमान्*
जगत् तथा जीव वना अशक्तिमान्।
विलासका हेतु जगद् वृथा नही
सदा रहूं मैं शिव भावमें सही॥

उनका बनाया 'पूर्णता प्रत्यभिज्ञा' नामका एक अद्भुत संस्कृत माध्यमका पद्यमय ग्रन्थ है। जिससे प्रत्यभिज्ञा शास्त्रका मर्मस्पर्श हो जाता है।

वर्षीयान् – प्रत्यभिज्ञा शास्त्र भी तो विचित्र ही है। अस्तु इसे भी मैं समयसे पढूंगा। इस समय प्रासंगिक कुछ और कहें। उत्सुकता बढ़ती जा रही है।

अतिवर्षीयान् – सुनिये जब मैं १९३२में सूबा कांग्रेसके तथा काशी (बनारस) जिला कांग्रेसके अध्यक्ष होनेके कारण विदेशी शासनमें वर्षभर फैजाबाद जेलमें था तो वहां जौनपुरके शिवचरण शर्मा ज्योतिषी भी मेरे साथ जेलमें थे। उन्हें जेल डाक्टरने चार

रोटी और गायका सेर भर दूध दोनों समय पीनेको कहा था। वह भी डाक्टरका हुक्म अक्षरशः पालन करते थे। छः महीनेके बाद उनका भूला रामरक्षास्त्रोत्र पूरा याद हो गया। पूर्ववत् वह कण्ठस्थ पुनः पाठ करने लगे। दूधका करामात ऐसा मैंने प्रत्यक्ष देखा है।

वर्षीयान् – हे सरकार! आपके मुखसे दूधका माहात्म सुननेकी और उत्सुकता बढ़ती जाती है।

अतिवर्षीयान् – सुनिये मैं भी थका नहीं हूं–

युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु
युक्त स्वप्ना व बोधस्य योगो भवति दुःखहा (गी० ६/१७)

मालिनीछन्द –

(अर्थ – *हरण विहरनेमें स्वप्न वो जागनेमें*
यदि नियम बंधा हो खूब सच्चा सधा हो
उचित करम चेष्टा हो बंधी सर्व श्रेष्ठा
वह नर नहि भाई देवतामें गिनाई (गी० ६/१७)

यहां युक्ताहार – बिहारके प्रेमी योगी वर्ग गौ दूधका ही प्रयोग करते हैं। जिससे उनकी योग सिद्धिमें सहायता मिलती है। आचारों (सूक्तों)में दूधका विकार दही बड़ा ही प्रशस्त उपयोगी मंगल माना गया है। 'आयुर्घृतम्' इस वैदिक प्रयोगमें आयुर्वर्द्धक गौघृत ही माना गया है।

वर्षीयान् – उत्तरोत्तर मेरी उत्कण्ठा बढ़ती जाती है। आपसे गौके सम्बन्धी अद्भुत बातें सुननेके लिये।

अतिवर्षीयान् – तो मैं भी ऐसा ही चाहता हूँ। आप सुनिये – जब मैं यहां बदरीनाथधामके पवित्रतम स्थान जोशीमठ (ज्योर्तिमठ)में सदा ही रहता। तो एक मेरे शिष्य लक्ष्मीप्रसाद सतीने एक घटना सुनायी थी। जिसका भाव है कि उसे किसी प्रेतके भयसे किसी गोष्ठमें घुसंना पड़ा। वहां प्रेत दरवाजेपर खड़ा रहा ललकारनेपर भी गोष्ठके भीतर न जा सका। तब तक दूसरे पुरुषोंके आ जानेसे प्रेत विलीन हो गया। इससे ज्ञात होता है कि जिस घरमें गौका वास होता है। वहां प्रेत बाधा नहीं होती।

वर्षीयान् – अहो अमृत पीनेसे कौन मुंह मोड़े। आगे चलें –

अतिवर्षीयान् – यहां रहते हुए मैंने सुना है कि, कोई पशु चिकित्सा शालाका अध्यक्ष कभी भी गाय या बैलको काट डालनेके लिये आर्डर नहीं देता था। तो जब वृद्ध होकर मृत्यु प्राप्त किया तो उसके चिताकी प्रदक्षिणाके समय अकस्मात् एक गाय आकर प्रदक्षिणा करने लगी। प्रदक्षिणा विधि समाप्त होते ही वह गाय भी विलीन हो गयी। पुनः दिखाई नहीं पड़ी। अनुमान है कि कोई अद्भुत गाय वहां उतने

कालके लिये उत्पन्न हुई थी। यह कहते हुए उनके नेत्रमें आनन्दाश्रु आ गये। प्रत्यक्ष।

वर्षीयान् – अहा! कैसी अद्भुत गौकी महिमा है कि ईश्वर भी समय-समयपर गोजाति बनना पसन्द करते हैं। ब्रजमें बछवे बने थे। यहां गाय बन गये। वाह महाराज! वाह! आप भी बड़े खिलाड़ी हैं। ठीक ही है। नटराजोंके भी आप राजा हैं। हां, कहीं महाराज जी! और भी कुछ कहीं। बड़ा अच्छा लगता।

अतिवर्षीयान् – सुनिये कितना सुनियेगा। इस पर्वत प्रदेशमें गौकी अद्भुत कथाएं हैं। किसी क्षत्रियके पूर्व पुरुषोंने कुछ गोचर भूमि छोड़ी थी। जिसमें गायें स्वच्छन्द घासें चरती थीं। आजकलकी अंग्रेजी शिक्षाके वातावरणमें पोषा पाला गया वह क्षत्रिय कांटेसे रुन्धकर (घेरा देकर) उस जमीनको अपने कब्जेमें कर लिया। अब कोई गाय उसमें चरने नहीं जाती थी। एक मन्दिर भी उसी जगह बाहर था जहां सभी लोग पूजा पाठ करते थे। उसी मन्दिरमें एक गायने अपना एक पैर उठाकर सत्याग्रह शुरु कर दिया। कोई कुछ खाना दे तो वह मूड़ी हिला दे खाय नहीं। उसे देखनेके लिये उस मन्दिरपर मेला लग गया। वह क्षत्रिय भी इस दृश्यको देखने ज्योंही वहां आया कि वही, अनेक दिनकी भूखी गाय, उसे मारने लगी। वह भाग गया तो वह पुनः लौटकर वहां ही उसी तरह खड़ी थी। पीछे जमीनपर गिर गयी किसी भी उपायसे वह अन्न पानी कुछ नहीं लेती थी। बाद जिस रोज वह मरी वहां बड़ा भारी जुलूस निकला लोगोंने वहां जुलूसके साथ सन्यासियोंके समान उसका अन्त्येष्टि संस्कार किया। वहां ही उस स्थानपर गोमन्दिर बन गया। क्षत्रियने भी प्रभावित होकर वह जमीन ज्योंके त्यां छोड़ दी। पूर्ववत् वह जमीन गोचर है। वहां गोपूजन भी होता है। गायें भी चरती हैं। गोपाष्टमीके रोज, कार्तिक शुक्ल पक्षकी अष्टमीको, मेला लगता है।

वर्षीयान् – अहो! यह तो प्रत्यक्ष आश्चर्यकारी गो सत्याग्रह आपने बताया। यह तो गोजातिका सत्याग्रह भारतमें ही देखने सुननेको मिलता है। अन्यत्र कहां मिलेगा? पहाड़पर गोचर नामका प्रसिद्ध स्थान बदरीनाथकी यात्रामें पड़ता है।

अतिवर्षीयान – हां महाराज! शास्त्रोंने तो भगवान्‌के विराट् वर्णनमें भारतको हृदय बताया है। अतः ज्ञानियोंके लिये कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। गीतामें अज्ञानियोंकी रातको ही ज्ञानियोंका दिन कहा गया है।

देखिये लोलिम्बराज राज वैद्यने भी कहा है–

वसन्ततिलका – *सौभाग्य पुष्टि बल शुक्र विवर्द्धनानि*
किं सन्ति नो भुवि बहूनि रसायनानि।
कन्दर्पवर्द्धिनी! परन्तु सिताज्ययुक्ताद्
दुग्धादृते न ममकोऽपि मतः प्रयोगः॥

अर्थ— क्या होत नाहि बल शुक्र विवृद्धि हेतु
संसारमें विविध भांति रसायनेतू
गौघीसमेतमिसिरीयुत दुग्धसे क्या
कोई रसायन भला बढ़िया मिले क्या?

आज भी बूढ़ी स्त्रियां गांवोंमें कमजोर बच्चोंको गायके गर्म दूधको घी मिश्री मिलाकर प्रतिदिन पिलाती हैं। जिससे वह बड़ा पुष्ट और जल्दी युवा (तरुण) हो जाता है। एक बढ़िया कहावत है—

गंगागीता च गायत्री गौ गोविन्दो पि पांचवां
गकारा पावना भारी महामहिमा बखानता।

जा (आ)इये, इससे बढ़कर मैं आपका क्या प्रिय करूं तो भी यह भरत वाक्य कहकर अपना वक्तव्य समाप्त करता हूं।

वसन्ततिलका— श्रद्धा बढ़ी जगतमें गऊ वंशमें हो
गौका महत्व सब देश विदेशमें हो
नारी सभी समझ जाय निजत्व भारी
देश मर्याद इसमें दृढ़ता हमारी

(यों दोनों निकल जाते हैं। परदा गिरता है) गो महिमोपयोगि वर्णन दृश्य १५ पन्द्रहवां समाप्त। पाँचवा अंक समाप्त।

इति श्री क्षेमधरि कौशल्यांज शाण्डिल्यगोत्र प्रशिक्षणं संविधान आदि २५ पच्चीस ग्रन्थोंके प्रणेता बिहार अभिजन वाले काशीके वास्तव्य, काशी पाण्डितसभाके अध्यक्ष, व्याख्यान वाङ्मी, म०म० पण्डितराज डा० श्री गोपाल शास्त्री दर्शनकेशरी (न्याय तीर्थ, व्याकरण-साहित्याचार्य काव्यतीर्थ), द्वारा सपद्य विरचित गौमहिमाभिनय नाटक समाप्त है।

इति शिवम्

॥ गोमहिमा नाटक समाप्त ॥




2814
भारती पुस्तकालय



आह्वान !

महामहोपाध्याय पण्डितराज डा० श्री गोपालशास्त्री 'दर्शनकेशरी' जन्म शताब्दी समारोहके उपलक्ष्यमें स्वबोध आश्रम द्वारा आयोजित 'गोरक्षा संकल्प पर्व' के पुनीत अवसर पर हम पू० शास्त्रीजीकी इस मूल रचनाका प्रकाशन कर अत्यन्त ही हर्षित हैं। सचमुच ही मनुष्य जातिके लिये गोरक्षाका पावन आदर्श पशुतासे मुक्ति और दिव्यताकी ओर आरोहण करनेका महान सन्देश है। यह मानवको सच्चे अर्थोंमें मानव बनानेवाली सार्वभौम संस्कृतिकी धरोहर है।

अतः धरतीके अग्रजन्मा पूर्व पुरुषोंने जो हमारे लिये 'गोसंवर्धन' की यह अमूल्य थाती सौंपी है। हमारा भी पावन कर्तव्य है कि हम इसकी प्राणपणसे रक्षा करें।

स्वबोध आश्रमके तत्त्वावधानमें आज बारह वर्षोंसे पूरी धरतीसे गोहत्याको विदा करानेके लिये जनजागरण अभियानमें संलग्न हम आपके भी सहभाग और सहयोगके आकांक्षी ।

—वन्दे विश्वमातरम्

"जीव हत्या छोड़ दो – प्रेमका नाता जोड़ लो"

स्वबोध साधना केन्द्र
सीके० ४१/१ ए, घुघरानी गली, बांसफाटक, वाराणसी, (उ० प्र०)